श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर

श्री स्वर्णगिरि-जालोर

श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर
श्री स्वर्णगिरि-जालोर

-- भँवरलाल नाहटा

तीर्थ श्री स्वर्णगिरि-जालोर

लेखक :
साहित्य वाचस्पति श्री भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक :
प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर
बी० जे० नाहटा फाउण्डेशन, कलकत्ता

लेखक :
साहित्य वाचस्पति श्री भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक :
प्राकृत भारती अकादमी
३८२६, मोतीसिंह भौमियों का रास्ता
जयपुर-३०२००३
●
बी० जे० नाहटा फाउण्डेशन
४, जगमोहन मल्लिक लेन
कलकत्ता-७०० ००७

प्रथम संस्करण : **संवत्सरी २०५२**
३० अगस्त १९९५
१००० प्रति

मूल्य :
६० रुपये

मुद्रक :
राज प्रोसेस प्रिन्टर्स
कलकत्ता
अन्टार्टिका ग्राफिक्स लि०
कलकत्ता

प्रकाशकीय

राजस्थान के प्राचीन जैन तीर्थ स्वर्णगिरि—जालोर का इतिहास हमारे प्राकृत-भारती संस्थान से प्रकाशित करने का विचार कई वर्षों से था। किन्तु जब समय परिपक्व होता है तभी शुभ कार्य की परिणति साकार होती है। इसी अरसे में प्राकृत भारती ने अनेक ग्रन्थ रत्न प्रकाशित किये। श्री भँवरलाल नाहटा द्वारा सम्पादित योगीन्द्र युग प्रधान श्री सहजानन्दघनजी महाराज द्वारा उद्‌बोधित १ श्री आनन्दघन चौवीसी २ खरतरगच्छ दीक्षानंदी सूची तथा नाहटा जी द्वारा विरचित अपभ्रंश भाषा में ३ सिरी सहजानन्दघन चरियं नामक अनूठे काव्य का प्रकाशन भी हमारे प्राकृत भारती पुष्प ५७, ६४ एवं ६७ के रूप में प्रकाशित कर दिये।

अब इस राजस्थान के प्राचीन जैन तीर्थ के इतिहास को प्रकाश में लाने का सुयोग मिला इसे सचित्र सुन्दर रूप में प्रकाशित कर इतिहास प्रेमी और तीर्थ भक्तों के कर कमलों में प्रस्तुत करते हमें अत्यन्त प्रसन्नता है। इसका प्रकाशन प्राकृत भारती अकादमी तथा बी० जे० नाहटा फाउण्डेशन द्वारा संयुक्त रूप से किया जा रहा है।

राजस्थान का यह महत्वपूर्ण संभाग प्रारम्भ से ही अत्यन्त समृद्ध था। यहाँ अनेक शासकों द्वारा पट परिवर्त्तन हुआ है। स्वर्णगिरि के नाम से प्रसिद्ध सोनिगिरा गोत्र यहीं से निकला था और मांडवगढ (मालवा) में जाकर बसे सुप्रसिद्ध साहित्यकार मंडन और धनदराज राज-मान्य और नीति निपुण सुप्रसिद्ध साहित्यकार थे।

आज भी जालोर जिला धन कुबेरों की बस्ती के लिए प्रख्यात है। प्राचीन काल में जहां स्वर्णगिरि पर कोट्याधीशों की ही हवेलियाँ थी वहाँ उनके ध्वंशावशेष खण्डहर तक नहीं रहे। पर जालोर जिले के अधिवासी धनाढ्य सारे भारत में फैले हुए हैं उन प्रवासी महानुभावों को अपने गौरवमय मातृभूमि के इतिहास से प्रेरणा मिलेगी व जिनालयों के चित्रों के दर्शन से भी लाभान्वित होंगे।

इस पुस्तक के मुद्रण में श्री महेन्द्रराज मेहता तथा श्री रंजन कोठारी का सहयोग प्रशंसनीय है।

पद्मचन्द नाहटा
अध्यक्ष

सुशील कुमार नाहटा
सचिव

बो० जे० नाहटा फाउण्डेशन
कलकत्ता

देवेन्द्रराज मेहता
सचिव

महो० विनयसागर
निदेशक

प्राकृत भारती अकादमी
जयपुर

प्रस्तावना

इतिहास हमारे गौरवशाली अतीत साँस्कृतिक, सामाजिक और समृद्धि का एक उद्‌बोधक दर्पण है। अपनी सर्वाङ्गीण उन्नति का प्रेरक महान् तत्व होने के साथ-साथ लुप्तावशिष्ट पुरातत्त्व का अदृश्य साकार प्रारूप है। प्राकृतिक प्रकोप और विधर्मी यवन शासकों द्वारा सर्वथा नष्ट या परिवर्तित स्वरूप का हृदय विदारक बर्बरता पूर्ण स्मृति विस्मृति का अधिस्थान है। यवनों ने भारत में पदार्पण करते ही अनेक नगरों का विनाश कर दिया था। महाकवि धनपाल ने उन नगरों व तीर्थमन्दिरादि को नष्ट करने/आशातना करने का उल्लेख सत्यपुर महावीरोत्साह में किया है। उन्होंने श्रीमाल माल देश, अणहिलपाटक, चन्द्रावती, देवलवाड़ा, सोमेश्वर, कोरिंट, श्रीमालनगर, धार, आहाड़ नराणा, विजयकोट, पालीताना, आदि स्थानों को गजनी आदि म्लेच्छों ने भंग किया जिसका उल्लेख किया है इतः पूर्व जोग नामक किसी राजा ने साचोंर की महावीर प्रतिमा को हाथी घोड़ों से खींचने का एवं कुल्हाड़ी से प्रभु प्रतिमा को भंग करने का प्रयत्न किया था। यह राजा कौन था ? इतिहास इस विषय में मौन है सम्भव है दक्षिण भारत का कोई जैनधर्म का द्रोही है। किन्तु मुस्लिम राजाओं द्वारा धनपाल के समय तक जालोर-स्वर्णगिरि पर आक्रमण होने का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

स्वर्णगिरि कनकाचल आदिनामों से प्रसिद्ध तीर्थ जालोर नगर से बिल्कुल संलग्न है। यह पर्वत १२०० फुट ऊंचा है इस तीर्थ की स्थापना को लगभग दो हजार वर्ष होने आये हैं। यहाँ का यक्षवसति जिनालय विक्रम संवत् १२६ से १३५ के बीच स्थापित हुआ था।

स्वर्णगिरि का दुर्ग ८०० गज लम्बा और ४०० गज चौड़ा है। पहाड़ की चढ़ाई लगभग १॥ मील है। यहाँ करोड़पति लोग ही निवास करते थे ९९ लाख के धनाढ्य के लिए यहाँ निवास स्थान नहीं मिलता। नाहड़ राजा के निर्मापित यक्षवसति नामक गगनचुम्बी महावीर मन्दिर के सिवाय यहाँ अष्टापद प्रासाद, कुमर विहार (संवत् १२२२) आदि अनेक मंदिरों का निर्माण हुआ था। श्रीदाक्षिण्यचिन्ह उद्योतनसूरि ने संवत् ८३५ में जावालिपुर के ऋषभदेव जिनालय में कुवलयमाला ग्रन्थ की रचना की थी।

प्रतिहारों के राज्य के पश्चात् चौहान वंश के राज्य तक यह तीर्थ उन्नति के शिखर पर आरूढ़ था। यहाँ कई जिनालयों का निर्माण हुआ था। कुमरविहार

के पश्चात् सं० १२४२ में चौहान समरसिंह के राज्य में भँडारी पासु के पुत्र यशोवीर ने जीर्णोद्धार कराया सं० १२५६ में तोरणादि की प्रतिष्ठा हुई। सं० १२६८ के प्रेक्षामण्डप आदि बने एवं स्वर्णमय कलशारोपण हुंआ सं० १२९६ के आबू में लेखानुसार अष्टापद मंदिर से संलग्न आदिनाथ देवकुलिका नागोर के श्रेष्ठि लाहड़ ने तथा प्रतिमायुक्त दो खत्तक श्रेष्ठी देवचंद ने बनाये थे। यहाँ कुंकुम-रोला नामक जिनालय पार्श्वनाथ भगवान का था।

जिनपाल उपाध्यायकृत खरतर गच्छ वृहद् गुर्वावली से विदित होता है कि सं० १३१६ माघ सुदि ६ को राजा चाचिगदेव के राज्यकाल में शांतिनाथ जिनालय पर स्वर्णमय ध्वज-दण्ड कलश स्थापित किये गये थे श्रावक धर्म प्रकरण नामक लक्ष्मीतिलकोपाध्यायकृत सचित्र ताड़पत्रीय ग्रन्थ में शांतिनाथ जिनालय का चित्र है जिसे पं० श्री शीलचन्द्रविजयजी महाराज ने संपादित कर प्रकाशित किया है उसमें से यहाँ के शांतिनाथ जिनालय का चित्र और ग्रन्थ लिखाने वाले तीन भ्राताओं के सपत्नीक चित्र को इस ग्रन्थ में साभार प्रकाशित किया जा रहा हैं।

इस प्रकार इस महातीर्थ की उन्नत अवस्था दिल्लीपति अलाउद्दीन खिलजी के १३६८ में आक्रमण से शेष हुई और इन्द्र की अलकापुरी सदृश जिनालयों से मण्डित धन-कुबेरों की हवेलियों से सुशोभित स्वर्णगिरि दुर्ग एकदम वीरान हो गया हवेलियाँ और कलापूर्ण स्थापत्य मन्दिरादि ध्वस्त कर दिए अब केवल महावीर जिनालय, अष्टापद जिनालयादि बचे हैं। कुमरविहार नामशेष एक देहरी स्वरूप है। महावीर स्वामी का सौध-शिखरी जिनालय मूल गर्भगृह गूढ मण्डप सभा-मण्डप शृंगार चौकी आदि से अलंकृत है।

अत्रस्थ ४-५ ध्वस्त मन्दिरों की शिल्प समृद्धि तथा शिलालेखादि जालोर नगर में स्थित तोपखाना नामक इमारत में लगे हुए हैं जिनकी नकल इस पुस्तक में दी गई है।

जो जालोर खरतर गच्छ रूपी कमल का सरोवर कहा जाता था। अनेक महान् आचार्यो ने अनेक ग्रन्थों की रचना की, अनेक दीक्षाएं प्रतिष्ठाएं व समृद्ध धर्मकार्य हुए वह उपत्यका में बसा हुआ एक जिले का मुख्य नगर रह गया है।

जब यह नगर जोधपुर के राज्याधिकार में आया तो महाराजा गजसिंह के मंत्री जयमल मुणोत ने जीर्णोद्धार कराके सं० १६८१ में श्री विजयदेवसूरि के आज्ञानुवर्ती श्री जयसागर गणि से प्रतिष्ठा करवाई।

अष्टापदावतार चौमुख मंदिर का जीर्णोद्धार भी कराया गया और प्रवेश द्वार के सामने हाथी पर आरूढ़ मंत्री जयमल की प्रतिकृति है। यह द्वितल मन्दिर भी कलापूर्ण और दर्शनीय है।

स्वर्णगिरि पर अब जैन मन्दिरों के अतिरिक्त शिवालय, देवी मन्दिर, हनुमान मंदिर, राजमहल, पानी की टंकियां और मस्जिद के सिवाय वीरान है। इधर जालोर के क्षेत्रों में श्वेताम्बर मूर्त्तिपूजक साधुओं का विहार विगत शताब्दियों में कम होने से अमूर्त्तिपूजक सम्प्रदाय का प्राबल्य हो गया और दुर्ग स्थित जिनालयों की पूजा अर्चना बन्द सी हो गई।

जैन संघ की उपेक्षा से दुर्ग स्थित जिनालयों में राजकीय कर्मचारियों ने अपना अधिकृत आवास और शस्त्रास्त्र एवं बारूद रखने का गुदाम बना लिया। २०वीं शताब्दी से पूर्व तीन दशकों में जिनालयों पर राज का ही आधिपत्य रहा।

विक्रम सं० १९३३ का चातुर्मास राजेन्द्रकोश के निर्माता श्रीमद् विजय राजेन्द्र सूरिजी महाराज का जालोर में हुआ वे स्वाध्याय ध्यान हेतु सोनागिरि की कन्दराओं में अक्सर पधारते थे। आश्विन मास में एक दिन आप किलेदार विजयसिंह का आमंत्रण पाकर किले में पधारे। यक्षवसति प्रासाद का गगनचुम्बी जिनालय और अष्टापदावतार भी दृष्टिगोचर हुआ। नीचे आने पर अन्वेषण से स्पष्ट हो गया कि ये तो जिनालय हैं। सरल आत्मा किलेदार विजयसिंह का सहकार मिला, जिनालयों में जिनेश्वर भगवान की आशातना देखी और आचार्यश्री ने आशातना निवारण कराने का निर्णय कर लिया।

सं० १९३३ के पोष मास में जोधपुर नरेश महाराजा यशवंतसिंह ने स्वर्णगिरि के तीनों जिनालयों से शस्त्र सामग्री निकलवाकर उन्हें संघ को समर्पित कर दिया। इसके बाद जीर्णोद्धार कार्य सम्पन्न हुआ सं० १९३३ के माघ सुदि १ सोमवार को विधिपूर्वक तीनों जिनालयों में जिनबिम्बों को प्रतिष्ठा हुई। इस प्रकार आचार्य महाराज द्वारा प्राचीन तीर्थ का पुनरुद्धार संपन्न हुआ।

इस तीर्थ के अष्टापदावतार चैत्य में निम्न शिलालेख लगा है :—

संवच्छुभे त्रय स्त्रिंशन्नन्दैक विक्रमाद्वरे,
माघ मासे सिते पक्षे चन्द्रे प्रतिपदा तिथौ ॥१॥

जालंधरे (जालउरे) गढे श्रीमान् श्रीयशस्वन्तसिंह राट्
तेजसा द्युमणिः साक्षात् खण्डयामासया रिपून् ॥२॥

विजयसिंहश्च किल्ला-दार धर्मी महाबली,
तस्मिन्नवसरे संघै जीर्णोद्धारश्च कारितः ॥३॥

चैत्यं चतुर्मुखं सूरि राजेन्द्रेण प्रतिष्ठितम्,
एवं पार्श्व चैत्येऽपि प्रतिष्ठा कारितावरा ॥४॥

ओशवंशे निहालस्य चौधरी कानुगस्य च,
सुतप्रतापमल्लेन प्रतिमा स्थापिता शुभा ॥५॥

श्रीऋषभ जिनप्रासादात् लिखितम्

गणिवर्य श्री महिमाप्रभसागरजी महो० ललितप्रभसागरजी व आर्याश्री जितयशाश्रीजी के दीक्षावसर पर बाड़मेर से नाकोड़ाजी जालोर आदि स्थलों में यात्रा हेतु जाने पर श्रीमान् उगमसीजी मोदी ने जालोर-स्वर्णगिरि तीर्थ का इतिहास लिखने का आग्रह किया। हम वहाँ कुल २ दिन ठहरे थे जो कुछ भी प्राचीन साहित्य में देखा-सुना पुस्तिका तैयार कर भिजवायी किन्तु वहाँ अर्थाभाव के कारण प्रकाशित न होने पर वापस मंगवा ली और अब प्राकृत भारती एवं बी० जे० नाहटा फाउण्डेशन की ओर से संयुक्त प्रकाशित की जा रही है।

गणिवर्य श्री मणिप्रभसागरजी ने जालोर के मन्दिरों के चित्र भिजवाये उन्हें साभार इस ग्रन्थ में दिये जा रहे हैं। काकाजी अगरचंदजी नाहटा के आदेश से अस्वस्थता के समय लिख कर तैयार किया जिसे आज १५ वर्ष हो गये अतः स्मृति दोष से रही अशुद्धियों के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। इस ग्रन्थ के प्रकाशन में मेरे कनिष्ट पुत्र श्री पद्मचन्द नाहटा ज्येष्ठ पौत्र श्री सुशीलकुमार नाहटा का परिश्रम आशीर्वादार्ह है।

विनीत
भँवरलाल नाहटा

तीर्थ श्री स्वर्णगिरि—जालोर

स्वर्णगिरि पहाड़ के नीचे उत्तर-पूर्व की ढालू जमीन पर बसा हुआ जालोर नगर जोधपुर से १२१ किलोमीटर दक्षिण में है। यह प्राचीन नगर सुकड़ी नदी के वाम तट पर है और इसके पूर्व और उत्तर की ओर चार पक्के दरवाजे और जीर्णावस्था में प्राचीर भी विद्यमान है। जावालिपुर, जाल्योधर, जालोर के तथा कंचनगिरि, कनकाचल आदि स्वर्ण वाचीपर्याय इसी स्वर्णगिरि के नाम है। इस प्राचीन और ऐतिहासिक नगर को न केवल मारवाड़ की ही बल्कि प्रतिहार सम्राट वत्सराज की राजधानी अर्थात् प्रायः अर्द्ध भारत की राजधानी होने का गौरव प्राप्त था। जिनहर्ष गणि कृत वस्तुपाल चरित्र (प्रस्ताव २) में इसे मरुस्थली के भालस्थल पर सुशोभित तिलक की उपमा दी गई है। यतः—

इतो मरुस्थली भालस्थली तिलक सन्निभे।
जावालिनगरे स्वर्णगिरि शृंगारकारिणी ॥७४॥

'कुवलयमाला' ग्रंथ से प्रमाणित है कि यह नगर ईसा की आठवीं शताब्दी में आबाद था। विक्रम संवत् ८३५ में यहाँ वत्सराज[1] नामक प्रतिहार राजा का राज्य था और आचार्य वीरभद्र द्वारा निर्मापित ऋषभदेव मन्दिर में दाक्षिण्य-चिह्न उद्योतनसूरिजी ने इस महान् ग्रन्थ-रत्न को रच कर पूर्ण किया था। उस समय यह नगर देवालयों और लक्षाधीशों की हवेलियों से समृद्ध था। सम्राट वत्सराज के पश्चात् उसका पुत्र नागभट यहाँ से राजधानी हटाकर कन्नौज चला गया पर प्रतिहार शासन तो कायम ही था। यहाँ पर कौन-कौन प्रतिहार शासक हुए यह पता नहीं पर दशवीं से बारहवीं शताब्दी तक मालवा के परमारों का यहाँ शासन था। जालोर के तोपखाने में स्थित परमार वीसलदेव के लेखानुसार १ वाक्पतिराज, २ चन्दन, ३ देवराज, ४ अपराजित, ५ विज्जल, ६ धारावर्ष और ७ वीसल[2] नामक राजा हुए। इसके पश्चात् चौहान राजवंश शक्तिशाली हुआ और उसने आक्रमण करके अपने अधिकार में ले लिया मालूम देता है।[3] बिजोलिया के सं० १२२६ के शिलालेख के अनुसार विग्रहराज ने यहाँ के राजा सज्जन को बुरी तरह परास्त कर राजधानी जावालिपुर को जलाकर नष्ट कर दिया लिखा है यतः—

कृतान्तपथ सज्जो भूत्सज्जनो सज्जतो भुवः।
वंकुंतं कुतं पालोगा (द्यत) वंकुं (त) पालकः ॥२०॥
जावालिपुरं ज्वाला (पु) रं कृता पल्लिकापि पल्लीव।
न दू (ड्डि) ल तुल्यं रोषन्न (द्दू) लं येन सौ (शौ)र्येण ॥२१॥

अर्थात्—विग्रहराज (अर्णोराज के पुत्र) ने सज्जन नामक कुन्त (जालौर) नरेश्वर को बुरी तरह परास्त किया था और कुन्त की राजधानी जावालिपुर में आग लगाकर उसे नष्ट कर दिया। पाली और नड्डूल नगरों का विनाश कर डाला।

---

१. An advanced History of India में वत्सराज के पिता का नाम देवराज (देव शक्ति) लिखा है जो नागभट प्रथम का भतीजा था। उसके पिता का नाम अज्ञात लिखा है।

२. यह अभिलेख सं० ११७४ (चैत्रादि ११७५) आषाढ सुदि ५ (ई० सन् १११८ ता० २५ जून) मंगलवार का है, इसमें वीसल की रानी मेरल देवी द्वारा सिन्धुराजेश्वर के मन्दिर पर स्वर्ण-कलश चढाये जाने का उल्लेख है।

३. 'राजस्थान के इतिहास का तिथि क्रम' के अनुसार चौहानों ने जालोर पर ई० सन् ११४३ अर्थात् विक्रम संवत् १२०० में कब्जा किया था। उस समय तक यहाँ अंतिम परमार राजा सज्जन का राज्य होगा।

इससे विदित होता है कि सज्जन ही अन्तिम परमार राजा था उसके बाद विग्रहराज के भतीजे पृथ्वीराज द्वितीय का और फिर सोमेश्वर का नाम शिलालेख में है अतः जालोर पर इन्हीं का अधिकार रहा होगा। कवि महेश्वर कृत 'काव्य मनोहर' के अनुसार सोमेश्वर स्वर्णगिरि के राजा थे और उनके बाद उनका पुत्र आनन्द राजा हुआ। इनके राज्यकाल में स्वर्णगिरा श्रीमाल आभू और उसका पुत्र अभयद प्रधान मंत्री हुए। उस समय अभयद द्वारा गूजरात के नृपति पर विजयश्री प्राप्त करने का उल्लेख है। अभयद के पुत्र अंबड़ मंत्री ने स्वर्णगिरि पर विग्रहेश को स्थापित किया। विग्रहेश अर्थात् वीसलदेव समझना चाहिए जो राजा आनन्द का उत्तराधिकारी हुआ। चौहानों की वंशावली में ये नाम बारबार आते हैं अतः प्राचीनकाल में प्रतापी नामों की पुनरावृत्ति होने की प्रथा थी। 'काव्य मनोहर' के श्लोकों का अवतरण आगे स्वर्णगिरिया श्रीमाल मंत्रियों के परिचय में दिया जायगा। बिजोल्या के शिलालेख में नाडोल पर भी चौहानों का अधिकार हो गया प्रमाणित है। जालोर पर इसके बाद राजा कीर्त्तिपाल के शासन होने का उल्लेख मिलता है यह कीर्त्तिपाल आल्हणदेव का पुत्र और केल्हण राजा का लघु भ्राता था। ये भी चौहान थे अतः सं० १२३६ में ये आनन्द या उसके उत्तराधिकारी के गोद आगया हो और इस प्रकार कीर्त्तिपाल जालोर का राजा हो गया हो यह कल्पना युक्ति संगत प्रतीत होती है। स्वर्णगिरि के नाम से ये सोनगिरा चौहान कहलाने लगे।

इतः पूर्व गुजरात के परमार्हत् चालुक्य महाराजा परमार्हत् कुमारपाल के राज्यविस्तार में जालोर, किराडू आदि सुदूर राजस्थान के भाग भी आ गए थे पर वे करद या अधीनता में राज्य करते रहे। सं० १२२१ में स्वर्णगिरि पर महाराजा कुमारपाल के 'कुमर-विहार' नामक पार्श्वनाथ जिनालय निर्माण कराया था। जब गुजरात के चालुक्यों की सत्ता समाप्त हो गई और क्रमशः १ राजा कीर्त्तिपाल २ समरसिंह ३ उदयसिंह ४ चाचिगदेव ५ सामंतसिंह ६ कान्हड़देव राजा हुए।

आबू की लूणिगवसही की प्रतिष्ठा के समय (सं० १२९३ में) सम्मिलित होने वाले तीन महामण्डलेश्वरों में जावालिपुर के स्वामी भी होने का कवि जिनहर्ष ने वस्तुपाल चरित्र में उल्लेख किया है यतः—

"श्री जावालिपुर स्वामी नडूल नगरेश्वरः।
चन्द्रावतीपुरी स्वामी त्रयोऽमी मण्डलेश्वरा॥"
"राज्ञः समरसिंहस्य पुत्र क्षात्रव्रताग्रणीः
श्रीमानुदयसिंहोस्ति प्रथितः पृथिवीपतिः॥७५॥"

दिल्ली के मुस्लिम शासकों की आँख हरदम जालोर पर लगी रही थी। उन लोगों ने कई बार आक्रमण भी किए। संवत् १३४८ में फिरोज खिलजी ने जालौर राज्य पर आक्रमण किया और वह सांचोर तक पहुँच गया था पर गुजरात के सारंगदेव वाघेला ने चौहानों की सहायता की और मुस्लिम सेना को खदेड़ दिया [विविध तीर्थ-कल्प] सुलतान अलाउद्दीन खिलजी ने तो वर्षों तक जालोर को हस्तगत करने के लिए संघर्ष किया था। जिसका विशद वर्णन कान्हड़दे प्रबन्ध में पाया जाता है जो आगे लिखा जायगा परन्तु उमके पहले भी जब उदयसिंह राज्य करता था तब सं० १३१० वसन्त पंचमी के दिन सुलतान जलालुद्दीन ने जालोर पर घेरा डाला था। उस समय राउल ने सुलह करने के लिए बापड़ राजपूत को नियुक्त किया था। सुलतान ने छत्तीस लाख द्रम्म दण्ड स्वरूप मांगे। उसने कहा मैं द्रम्म नहीं जानता 'पारुत्थक' दे दूंगा। निकटस्थ व्यक्ति ने कहा देव ! आप स्वीकार करलें, एक पारुत्थक के आठ द्रम्म होते हैं, सुलतान ने मान लिया। पुरातन प्रबन्ध संग्रह पृ० ५१ में ऐसा उल्लेख है। उस समय तो जालोर बच गया किन्तु अलाउद्दीन ने चितौड़, रणथंभौर, देवगिरि की भाँति जालोर पर अधिकार करने की सफलता प्राप्त करली और अन्त में दुर्भाग्यवश कान्हड़देव-वीरमदेव पिता-पुत्र दहियों के छल से मारे गए और जालोर पर कान्हड़दे प्रबन्धानुसार सं० १३६८ में शाही अधिकार हो गया। पर खरतरगच्छ-युगप्रधानाचार्य गुर्वावली में सं० १३७१ में म्लेच्छों द्वारा जालोर भंग होने का विश्वसनीय उल्लेख है। शाही अधिकार होने के पश्चात् भी अलाउद्दीन ने सन् १३१४ में चित्तौड़ का अधिकार जालोर के सोनिगरा मालदेव को सौंपा था अतः जालोर, के शासक भी ७ मालदेव ८ बनवीरदेव और ९ रणवीरदेव चौहानों के नाम मिलते हैं। चौहानों के पश्चात् जालोर पर विहारी पठानों का अधिकार हो गया। राजस्थान के इतिहास क्रम में लिखा है कि इ० सन् १३९२ में वीसलदेव चौहान की विधवा रानी पोपां बाई को हटाकर उसके दीवान विहारी पठान खुर्रमखांने अधिकार किया। सन् १३९४ में गुजरात के सुल्तान से उसे सनद मिली विहारी पठानों में १ खुर्रमखान, २ युसुफ खान ३ हसनखान, ४ सालारखान ५ उस्मानखान, ६ बुढनखान, ७ मुजाहिदखान ने राज्य किया। उसका निःसन्तान देहान्त हो जाने से गुजरात के बादशाह के भेजे हुए अमीर जीवाखान—बभ्रुखान के नेतृत्व में सन् १५१० से १५१३ तक जालोर रहा, फिर बिहारी पठानों को सौंप दिया गया। विहारी पठानों में ८ अलीशेरखान ९ सिकन्दर खान १० गजनीखान (प्रथम), ११ सिकन्दरखान (द्वितीय) हुए। इसके बाद सन् १५३५ से सन् १५५३ तक अर्थात् १८ वर्ष तक बिहारियों के हाथ से निकलकर बलोच और राठोड़ों के

अधिकार में जालोर रहा। ततपश्चात् दिल्ली के बादशाहों की प्रसन्नता से १२ मलेकखान को सत्ता प्राप्त हो गई। उसके बाद १३ गजनीखान (द्वितीय) १४ पहाड़खान (प्रथम) शासक हुआ।

ईस्वी सन् १६१८ से १६८० तक दिल्लीपति जहाँगीर आदि बादशाहों की हकूमत रही और दिल्ली से भेजे हुए हाकिम जालोर पर शासन करते रहे। इनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—

(१) महाराजा सूरसिंह राठौड़ (सन् १६१८ से १६२०), (२) सीसोदिया राणा भीम सिंह (सन् १६२०-२१) (३) महाराजा गजसिंह राठौड़ (सन् १६२१ से १६३८), (४) नवाब मीरखान (सन् १६३८ से १६४३ तक), (५) नवाबफेज अलीखान (सन् १६४३), (६) हंसदास राठौड़ (सन् १६४३ से १६५५ तक) (७) महाराज जसवंतसिंह राठौड़ (सन् १६५५ से १६७९) और (८) महाराज सुजानसिंह (१६७९-८०) इस प्रकार ६४ वर्ष जालोर बादशाह के अधीन रह कर सन् १६८० दिवान कमालखान (करण कमाल) के भ्राता फतेहखान के अधीन हो गया। इसके पश्चात् सन् १६९७ में दुर्गादास राठौड़ के उपकारों के बदले औरंगजेब बादशाह ने जालोर की जागीर अजितसिंह राठौड़ को सौंप दी। उसके बाद जालोर की यह जागीर जोधपुर राज्य के अन्तर्गत रही।

ऐतिहासिक साधनों से विदित होता है कि जालोर पर बीच बीच में दिल्ली और गुजरात के बादशाहों का भी वहां वर्चस्व रहा है। गयासुद्दीन सुलतान और गुजरात के महम्मद बेगड़ा के दो अभिलेख मिलते हैं। स्वर्णगिरि दुर्ग पर जिनालय के निकट एक मस्जिद है जिस पर फारसी में एक लेख खुदा है जिससे पाया जाता है कि इसे गुजरात के सुलतान मुजफ्फर (दूसरा) ने बनवाया था। सोलहवीं शताब्दी में राव मालदेव (जोधपुर) का अधिकार हुआ और अब्दुर्रहीम खानखाना ने फिर गजनीखान से कब्जा ले लिया था।

हिन्दू काल में बने हुए अनेक विशाल और कलापूर्ण जैन मन्दिर और शिवालय आदि मुस्लिम शासन के समय नष्ट भ्रष्ट कर दिए गए और जालोर की प्राचीन गरिमा को समाप्त करने के साक्षी स्वरूप अब भी नगर के मध्य स्थित 'तोपखाना' अपने कलेवर में कितने ही मन्दिरों के भग्नावशेष समाये बैठा है। आक्रान्ता मुसलमानों ने यहाँ के कई मन्दिर नष्ट किए और क्षतिग्रस्त किए जिनका लेखा जोखा लगाना कठिन है। कितने ही मन्दिरों की अद्भुत कलापूर्ण शिल्प समृद्धि को उखाड़ कर मस्जिदों के निर्माण में प्रयुक्त किए गए। किले की

उपरोक्त मस्जिद और 'हरजी खांडा' नामक मस्जिद जैन मन्दिरों को ध्वस्त करके ही निर्मित की गई है।

स्वर्णगिरि दुर्ग के आदिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर जिनालयों का समय-समय पर जीर्णोद्धार अवश्य हुआ पर पार्श्वनाथ जिनालय-कुमारपाल महाराजा का कुमरविहार अपनी विशालता को कायम न रख सका। वह एक छोटे से कलापूर्ण शिखर को लिए छोटे से मन्दिर के रूप में स्थित है प्राचीनता के नाम पर अब केवल उसकी दीवाल में अश्वावबोध समलीविहार की पट्टिका लगी हुई है।

जालोर के पूर्व में सीरोही राज्य, पश्चिम में लूणी नदी, उत्तर में पाली-बालोतरा परगना और दक्षिण में सांचोर व जसवतपुरा परगना है। इसकी लम्बाई पूर्व और पश्चिम ७२ मील, चौड़ाई उत्तर दक्षिण ५० मील के लगभग है। इसमें दो पहाड़ियां हैं, एक पश्चिम और दूसरी दक्षिण पूर्व है जो २७५७ फुट ऊंची है। पश्चिम पहाड़ी पर सुप्रसिद्ध दुर्ग ८०० गज लम्बा और ४०० गज चौड़ा व १२०० फुट ऊंचा है। समुद्र की सतह से इसकी ऊंचाई २४०८ फुट है। जादुदान चारण के अनुसार यह किला १२४७ गज लम्बा और ४७० गज चौड़ा है। इसका चढाव २००० कदम है। इसके तीन दरवाजे और ५२ बुर्ज हैं। इस किले की नींव भोजने डाली और कितुक कीर्त्तिपाल व चाचिग देव व सामंतसिंह चौहान ने उद्धार कराया था। दीवान फतेखान (प्रथम) ने पतित भाग का मरम्मत कराके यहां एक महल का निर्माण कराया था। किले पर सूरज पोल, ध्रुव पोल, चांद पोल और लोह पोल हैं जिन्हें पार करके किले पर जाया जाता है, गढ के दर्शनीय स्थानों में जैन मन्दिरों के अतिरिक्त मल्लिक साह की दरगाह, दहियों का गढ और वीरमदेव की चौकी है। कुमरविहार के सामने दो एक हिन्दू मन्दिर भी हैं।

प्राचीन काल से जालोर और स्वर्णगिरि की अतिशयशाली तीर्थ क्षेत्रों में गणना की जाती थी। इस विषय के तीर्थमालाओं आदि के उल्लेख स्तवन आगे दिए जाएंगे पर महेन्द्रप्रभुसूरि की अष्टोत्तरी तीर्थमाला की तेरहवीं शती की सटीक रचना के अनुसार यहाँ बहुत बड़े धनाढचों का निवास स्थान था यत:—

'नव नवइ लक्ख धणवइ अलद्धवासे सुवण्णगिरि सिहरे।
नाहड़ निव कालीणं थुणि वीरं जक्खवसहोए॥'

अर्थात् ९९ लाख की सम्पत्ति वाले सेठों को भी जहां रहने का स्थान नहीं मिलता था। अर्थात् जहाँ करोड़पति ही रहते थे ऐसे सुवर्णगिरि शिखर पर

नाहड़ राजा के समय में बने हुए 'यक्षवसति' नामक प्रासाद में श्री महावीर स्वामी की स्तवना करो।

श्री मेरुतुंगसूरि की विचार श्रेणि के अनुसार यह नाहड़ राजा विक्रमादित्य की चौथी पीढी में हुआ था जिसका राज्य काल वि० सं० १२६ से १३५ था। इस से यक्षवसति का निर्माणकाल सं० १२६ से १३५ के बीच का निश्चित होता है। 'कालीणं' के पाठान्तर में 'कारियं' शब्द भी मिलता है जो नाहड़ द्वारा निर्माण कराने का सूचक है।

उपर्युक्त गाथा से फलित होता है कि सुवर्णगिरि पर करोड़पति लोग निवास करते थे जो अधिकांश जैन थे। जो करोड़पति नहीं थे वे पहाड़ के नीचे बसे हुए नगर में निवास करते होंगे। पहाड़ की उपत्यका में बसे हुए नगर का नाम जाबालिपुर—जाल्योधर और जालोर नाम से प्रसिद्ध रहा है।

आज का जालोर प्राचीन काल में जाबालिपुर कहलाता था जिसका प्राचीन उल्लेख 'कुवलयमाला' ग्रन्थ की प्रशस्ति में मिलता है। श्री दाक्षिण्यचिह्न उद्योतनसूरि ने विक्रम संवत् ८३५ में जाबालिपुर में श्री वीरभद्र द्वारा कारापित श्री ऋषभदेव प्रासाद में वह ग्रन्थ रच कर पूर्ण किया। अर्थात् सं० ८३५ से पूर्व यहाँ श्री ऋषभदेव जी का मन्दिर विद्यमान था और उस समय उत्तुंग जिनालयों से सुशोभित और श्रावकों की बस्ती से भरपूर समृद्धिशाली नगर था। कुवलयमाला ग्रन्थ की प्रशस्ति में इस प्रकार लिखा है—

तुंगमलंघंजिण भवण मणहरं सावयाउलं विसयं।
जाबालिपुरं अट्ठावयं व अह अत्थो पुहवीए ॥१८॥

तुंगं धवलं मणहारि रयण पसरंत धयवडा डोवं।
उसह जिणिंदायतणं करावियं वीरभद्देण ॥१९॥

तत्थट्ठिएण जह चोद्दमीए चेत्तस्स कन्ह वक्खंमि।
णिम्मविआ बोहिकरी भव्वाणं होउ सव्वाणं ॥२०॥

श्री उद्योतनसूरि ने यह भी लिखा है कि उस समय वहाँ वत्सराज[1] नामक प्रतिहारवंशी राजा राज्य करता था। इसका राज्यकाल डा० स्मिथ ने सं० ८२६ से ८५६ का निश्चित किया है, जोकि 'कुवलयमाला' के रचना समय से समर्थित है। नौंवी शती में जाबालिपुर—जालोर उन्नत अवस्था में था।

इन गाथाओं में हमें वीरभद्र कारित जिनालय का परिचय मिलता है जो अष्टापद जैसा था। आबू की लूणिग-वसही के सं० १२९६ के शिलालेख से

ज्ञात होता है कि जाबालिपुर के सुवर्णगिरि पर पार्श्वनाथ चैत्य की भमती में अष्टापद की देहरी में खत्तक द्वय कराये थे।

जालोर नगर के मध्य भाग में 'जूना तोपखाना' नाम से प्रसिद्ध इमारत है जिसमें प्रवेश करते ही बावन जिनालय वाले विशाल मन्दिर का आभास होता है। उसके श्वेत पाषाण की देहरियां, कोरणीवाले पत्थर और शिलालेख युक्त स्तम्भ, मेहराब, देहरियाँ और दीवालों से प्राप्त शिलालेखों से स्पष्ट होता है कि यह इमारत जैन मन्दिरों के पत्थरों से बनी हुई है। डॉ० भाण्डारकर का मन्तव्य है कि—"यह इमारत कम से कम चार देवालयों की सामग्री से बनायी गई है जिसमें एक तो 'सिन्धुराजेश्वर' नामक हिन्दू मन्दिर और अन्य तीन आदिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी के जैन मन्दिर थे, इनमें से पार्श्वनाथ जिनालय तो किल्ले पर था।"

यह पार्श्वनाथ जिनालय निश्चित ही स्वर्णगिरि पर महाराजा कुमारपाल द्वारा निर्मापित 'कुमर बिहार' नामक प्रसिद्ध चैत्य था। श्री महावीर स्वामी का मन्दिर 'चन्दन विहार' नाम से प्रसिद्ध था जो नाणकीय गच्छ से सम्बन्धित था। महेन्द्रप्रभसूरि ने 'यक्षवसति' नामक महावीर जिनालय को नाहड़ नृप के समय का बतलाया है। हमें मन्दिरों के नामों पर विचार करते महाराज 'चन्दन' नामक परमार वाक्पतिराज के उत्तराधिकारी निश्चयरूप से था एवं 'यक्ष वसति' नाम देने के कारण पर विचार करने पर सहसा 'यक्षदत्तगणि' का नाम स्मरण होता है। उद्योतनाचार्य ने लिखा है कि "उनकी पूर्व परम्परा में पांच पीढ़ी पहले शिवचन्द्रगणि जिनवन्दनार्थ भ्रमण करते हुए श्री भिन्नमाल नगर में ठहरे थे। उनके गुणवान क्षमाश्रमण महान् शिष्य यक्षदत्तगणि महान महात्मा तीन लोक में प्रगट यश वाले हुए" नाहड़, यक्षदत्त और चन्दन के समय में काफी अन्तर है अतः महावीर जिनालय अभिन्न मानने में बाधा है ये दोनों अलग-अलग जिनालय थे नामकरण सकारण हुआ हों तो पता नहीं, विद्वानों को इस पर प्रकाश डालना चाहिए। यक्षदत्तगणि ने गुजरात और राजस्थान में अनेक स्थानों को जिन मन्दिरों से सुशोभित किया था। जिनके नाम की स्मृति में यक्षवसति नाम दिया जाना संभवित है। ऋषभदेव जिनालय को उद्योतनाचार्य ने वीरभद्र कारित बतलाया है यदि वह स्वर्णगिरि स्थित मानें तो इसी मन्दिर के आगे श्रीमाल श्रावक यशोदेव के पुत्र यशोवीर ने मण्डप बनवाया था। उसके द्वारा जिनालय निर्माण नहीं कलापूर्ण दर्शनीय मण्डप सं० १२३९ में निर्माण कराने का ही शिलालेख में उल्लेख है। यदि जावालिपुर नगर के आदिनाथ मन्दिर के आगे उक्त मण्डप

बनाया हो तो उससे पहले वहां मन्दिर विद्यमान था जिसका संकेत कुवलय-माला की गाथा में है।

तोपखाने में सं० १२३९, १२६८, १२९४, १३२० और सं० १३२३ के अलग-अलग वर्षों में लिखे हुए शिलालेख आज भी विद्यमान हैं इन सभी शिलालेखों को आगे प्रकाशित किया गया है यहां उनका परिचय उल्लेख किया जा रहा है।

महाराजा समरसिंह के समय में हुए श्रीमाल वंश के सेठ यशौदेव के पुत्र श्रेष्ठि यशोवीर ने जालोर के आदिनाथ मन्दिर का रमणीय मण्डप सं० १२३९ के बैशाख सुदि ५ गुरुवार को कराया था। यह मण्डप शिल्पकला का अद्भुत नमूना था जिसे देखने के लिए देश-विदेश के सैकड़ों प्रेक्षक आते थे। सभा मण्डप के पाट पर उत्कीर्णित लेख में एतद्विषयक उल्लेख इस प्रकार है—

"नाना देश समागतै र्नवनवैः स्त्री पुंस वर्गै र्मुहु-
र्यस्या हो ! रचनावलोकन परैः नो तृप्ति रासाद्यते।

स्मारं स्मारं मयो यदीय रचना वैचित्र्य स्फूर्जितम्
तैः स्वस्थान गतैरपि प्रतिदिनं सोत्कण्ठ मावर्ण्यते॥"

सं० १२६८ का लेख कुमरविहार का है, इस लेख से विदित होता है कि सं० १२२१ में महाराजा कुमारपाल ने गढ पर श्री पार्श्वनाथ भगवान का मन्दिर निर्माण कराया था और सद् विधि प्रवर्त्तनार्थ वादि देवसूरि के पक्ष को समर्पित कर दिया। सं० १२४२ में चौहान नरेश्वर समरसिंह के आदेश से भां० पासु के पुत्र भां० यशोवीर ने उद्धार कराया। सं० १२५६ ज्येष्ठ सुदि ११ को श्रीदेवाचार्य के शिष्य पूर्णदेवाचार्य ने राजकुल की आज्ञा से पार्श्व जिनालय के तोरणादि की प्रतिष्ठा व मूल शिखर पर स्वर्णमय ध्वजादण्ड प्रतिष्ठा और ध्वजारोपण किया। सं० १२६८ में नव निर्मित प्रेक्षा-मण्डप में श्री पूर्णदेवाचार्य के शिष्य रामचन्द्राचार्य ने स्वर्णमय कलशों को प्रतिष्ठित कर चढाये।

इस लेख में निर्दिष्ट श्री रामचन्द्रसूरि ने संस्कृत में ७ द्वात्रिंशिकाएं रची हैं। इस मन्दिर की भव्यता विशालता और महत्ता स्पष्ट है। यह बावन जिनालय था जिसमें पार्श्वनाथ भगवान की फणयुक्त प्रतिमा विराजमान थी। सं० १२९६ के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि नागपुरीय लाहड़ ने इस मन्दिर की भमती में एक देहरी कराके श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा प्रतिष्ठा कराई थी। इसी लेख में उसी के वंशज देवचन्द्र श्रेष्ठी के अष्टापद मन्दिर में दो गवाक्ष बनवाने का उल्लेख है।

सं० १२९४ के लेख में श्रीमालीय विजा और देवड़ द्वारा अपने पिता के श्रेयार्थ महावीर जिनालय में करोदि ? कराने का उल्लेख है। सं० १३२० और १३२३ के अभिलेखों से मालूम होता है कि चंदनविहार नाणकीय गच्छ से सम्बन्धित था, प्रथम लेख में इस महावीर जिनालय में आसोज अष्टाह्निका के लिए द्रव्यदान करने का और दूसरे में महाराजा चाचिगदेव और महामात्य यक्षदेव के समय में तेलहरा गोत्रीय महं० नरपति ने धनेश्वरसूरि को द्रव्य ५० द्रम्म मासिक पूजा के लिए दिये ताकि इस द्रव्य के ब्यांज से व्यवस्था की जाय।

सं० १३५३ का अभिलेख महाराउल सामंतसिंह और कान्हड़देव के समय का है जिसमें सोनी गोत्रीय श्रावक परिवार द्वारा स्वर्णगिरि के पार्श्वनाथ जिनालय को एक हाट प्रदान करने का उल्लेख है जिसके भाड़े की आय से पंचमी के दिन प्रतिबर्ष विशेष पूजा कराई जाने का निर्देश है।

स्वर्णगिरि-पहाड़ पर और भी जिनालय थे जिनका उल्लेख स्तोत्रों एवं युगप्रधानाचार्य गुर्वावली आदि में पाया जाता है। एक संस्कृत स्तोत्र (जैन स्तोत्र संदोह भाग-२ पृ-१८०) में कुम्कुमरोल नामक पार्श्वनाथ जिनालय का उल्लास है। कवि नर्गषि ने जालोर के पंच जिनालय चैत्य परिपाटी स्तवन में कुंकुमरोल पार्श्वनाथ जिनालय पाँचवाँ लिखते हैं जिसमें सप्तफणवाली प्रतिमा थी, वे स्वर्णगिरि के किसी मन्दिर का उल्लेख नहीं करते।

जालोर शहर के बाहर संडेलाव नामक विशाल तालाब है जिसके किनारे चामुण्डा माता का मन्दिर है, इसके पार्श्ववर्त्ती एक कुटी में एक मूर्त्ति है जिसे लोग चौसठ जोगणी की मूर्ति कहते हैं। वस्तुतः यह मूर्ति कायोत्सर्ग स्थित जिन प्रतिमा ही है जिसके अंग प्रत्यंग घिसकर जोगणी जैसा बना दिया है जो बड़े दुख की बात है। इस पर उत्कीर्णित अभिलेख सं ११७५ का है जिसमें जावालिपुर के चैत्य में सामंतसिंह श्रावक के परिवार द्वारा जावालिपुर के चैत्य में श्री सुविधिनाथ देव के खत्तक पर द्वार कराने का उल्लेख है।

अब युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के आधार से संक्षेप में बताया जा रहा है कि सं० १२६९ से १३४६ तक कितनी प्रतिष्ठाएं और ध्वज-दण्ड बिम्ब स्थापनादि हुए और वे सब इतिहास के पन्नों में नाम शेष हो गए। यवन अत्याचारों और विनाशलीला की दुखद कहानी का ही यह एक अध्याय है।

जावालिपुर में विधि चैत्यालय का निर्माण होकर उसमें कुलधर मंत्री निर्मापित महावीर स्वामी का विधि चैत्य जिसका नाम 'महावीर बोली' में 'उदय

बिहार' लिखा है - की स्थापना सं० १२६९ में श्री जिनपतिसूरिजी ने समारोह-पूर्वक की थी, इसी परिवार ने इस महावीर जिनालय में पार्श्वनाथ देवकुलिका और सेठ लालन ने वासुपूज्य देवगृहिका निर्माणकराई सं० १२७८ में जावालिपुर में नये देवगृह का प्रारंभ हुआ। सं० १२८१ में इसी महावीर जिनालय में ध्वजा-रोहण सं० १२८८ में स्तूप ध्वज प्रतिष्ठा, सं० १२९८ में स्वर्णदण्ड ध्वजा-रोहण हुआ। सं० १३१० में इसी महावीर विधिचैत्य में चतुर्विंशति जिनालय सप्तति शतजिन, समेतशिखर, नन्दीश्वरद्वीप, मातृपट, महावीर स्वामी (उज्जैन के लिए), चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ, सुधर्मा स्वामी, जिनदत्तसूरि, सीमंधर स्वामी, युगमंधरादि नाना प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हुई। सं० १३१७ में २४ देहरियोंपर स्वर्ण कलश-ध्वज दण्ड चढाये। सं० १३२५ वैशाख सुदि १४ को इसी मन्दिर में २४ जिनबिंब, सीमंधर युगमंधर, बाहु सुबाहु जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा हुई। सं० १३२८ वै० सु० १४ को क्षेमसिंह कारित चन्द्रप्रभ महाबिंब, महं० पूर्णसिंह कारित ऋषभदेव महावीर स्वामी प्रतिमाओं का प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ। सं० १३३१ में सा० क्षेमसिंह ने श्री जिनेश्वरसूरि स्तूप का निर्माण कराया। सं० १३३२ ज्येष्ठ वदि को क्षेमसिंह कारित प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ जिसमें नमि-विनमि सेवित आदीश्वर, धनदयक्ष व स्वर्णगिरि पर चन्द्रप्रभ स्वामी व वैजयन्ती की प्रतिष्ठा कराई, दिल्ली आदि के श्रावकों ने भी अनेक प्रतिमाएं प्रतिष्ठित करवाई। ज्येष्ठ बदि ६ को चन्द्रप्रभ स्वामी के ध्वजारोहण जेठ बदि ९ को जिनेश्वरसूरि स्तूप में प्रतिमा की प्रतिष्ठा हुई। सं० १३४२ ज्येष्ठ बदि ९ को क्षेमसिंह कारित २७ अंगुल की रत्नमय अजितनाथ प्रतिमा, ऋषभदेव, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ प्रतिभा तथा देदा मंत्री कारित युगादिदेव, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ बिम्बों की एवं छाहड़ कारित शान्तिनाथ स्वामी के महत्तम बिम्ब की, वैद्यदेहड़ कारित अष्टापद ध्वज-दण्ड की प्रतिष्ठा हुई। सं० १३४६ माघ बदि १ को सा० क्षेमसिंह भा० बाहड़ कारित चन्द्रप्रभ जिनालय के पास आदिनाथ नेमिनाथ बिम्बों को मण्डप के खत्तक में समेतशिखर के २० बिम्बों का स्थापना महोत्सव हुआ। वैशाख सुदि ७ को जिनप्रबोधसूरि मूर्त्ति को स्तूप में स्थापित की, ध्वजादंड भी साह अभयचन्द ने चढाए।

इससे जावालिपुर में महाबीर स्वामी के विधि चैत्य की विशालता और अन्य मन्दिर भी स्थापित हुए जिनका आभास मिलता है।

स्वर्णगिरि पर भी सं० १३१३ में वाहित्रिक उद्धरण प्रतिष्ठापित शान्तिनाथ प्रतिमा को महाप्रासाद में स्थापित की। वै० व० १ को पदू, मूलिग द्वारा द्वितीय देवगृह में अजितनाथ स्वामी की प्रतिष्ठा हुई। सं० १३१४ में स्वर्णगिरि के

शान्तिनाथ प्रासाद पर इन्होंने ही स्वर्ण कलश दण्ड ध्वजादि चढाए। सं० १३२५ में वै० सु० १४ को प्रतिष्ठित किए हुए २४ जिन बिम्बों की स्थापना जेठ बदि ४ को स्वर्णगिरि के शान्तिनाथ विधि चैत्य में हुई। इसी प्रकार सं० १३२८ में सा० क्षेमसिंह ने जिस चंद्रप्रभ महाबिम्ब की प्रतिष्ठा करवाई थी सं० १३३० वैशाख बदि ८ को स्वर्णगिरि पर उसे शिखर में स्थापित किया। सा० विमलचंद्र के पुत्रों द्वारा स्वर्णगिरि शिखरालंकार चन्द्रप्रभ, आदिनाथ, नेमिनाथ प्रसाद बनवाने का उल्लेख अनेकान्त जयपताका की प्रशस्ति में है। इससे ज्ञात होता है कि स्वर्णगिरि पर भी शान्तिनाथ विधि चैत्य था जिसमें २४ भगवान की देहरियां एवं अन्य भी देहरियां और शिखर आदि में जिनबिंब विराजमान हुए थे। इन सब अवतरणों से जावालिपुर और स्वर्णगिरि के समृद्ध अतीत की अच्छी झांकी मिल जाती है। म्लेच्छों द्वारा भंग होने के पश्चात् भी जालोर में अनेक उत्सव महोत्सव होते रहे हैं। सं० १३८३ में दादा साहब श्री जिनकुशल सूरि जी ने महातीर्थ राजगृह के लिए अनेक पाषाण व धातुमय जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा भी यहीं की थी।

हिन्दूकाल में सभी तीर्थ सातिशय-चमत्कारपूर्ण थे। मुसलमानों ने गोमांसादि से अपवित्र करके उनका देवाधिष्ठित्व नष्टकर दिया। जालोर के महावीर जिनालय का आश्चर्यकारी चमत्कार लिखते हुए तेरहवीं शती के श्री महेन्द्रप्रभसूरि ने टीका में खुलासा किया है कि रथयात्रा के समय सुसज्जित रथ में विराजित वीर प्रभु की मूर्ति स्वयमेव नगर में संचरण करती है बिना वजाये पटह रथयात्रा के समय नगर में गुंजायमान होते हैं।

प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भाग में प्रकाशित पं० महिमाकृत चैत्य परिपाटी में जालोर गढ़ के ३ उत्तुंग देहरों में प्रतिमाओं की संख्या २०४१ और स्वर्णगिरि पर तीन प्रासादों में ८५ प्रतिमाएं लिखी हैं।

सं० १६५१ में नगर्षि गणि ने 'जालुर नगर पंच जिनालय चैत्य परिपाटी' नामक तीर्थमाला में यहां की चार पौषधशाला और पांच जिनालय एवं तत्रस्थित प्रतिमाओं की संख्या लिखी है किन्तु सुवर्णगिरि के चैत्यों का कोई उल्लेख नहीं किया है अतः महातीर्थ-तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध स्वर्णगिरि की गरिमा लुप्त हो गई मालूम देती है समयसुन्दर जी यहाँ विचरे हैं, फिर भी तीर्थमाला स्तवन में स्वर्णगिरि गढ़ के चैत्य वीरान दशा में रहे हों और नगर्षिजी की दृष्टि में न आए हों, उन्होंने नगर के १ महावीर स्वामी, २ नेमिनाथ ३ शान्तिनाथ ४ आदिनाथ

५ पार्श्वनाथ ये पांच चैत्य विद्यमान थे, लिखा है। नर्गाषि ने महावीर जिनालय में ९५ प्रतिमाएं, नेमिनाथ जिनालय में ४१३, शान्तिनाथजी में १२५, आदिनाथ जी में ७१ प्रतिमाएं होने का उल्लेख किया है, पांचवें मंदिर पार्श्वनाथजी की प्रतिमा संख्या का उल्लेख नहीं है।

मुगलों के शासन काल में जहांगीर बादशाह के समय मारवाड़ के राठौड़ वंशीय महाराज गजसिंह और उनके मंत्री मुहणोत जयमलजी हुए हैं उन्होंने सं० १६८१ में सुवर्णगिरि दुर्गपर एक जिनालय बनवा कर तीन प्रतिमाएं स्थापित की और वहां के प्रायः सभी मन्दिरों का जीर्णोद्धार और प्रतिष्ठाएँ कराई थी।

मंत्री जयमलजी की पत्नियां सरूपदे और सोभागदेने कितनी ही मूर्त्तियाँ बनवाकर प्रतिष्ठित कराई जो आज भी विद्यमान है। सरूप दे के पुत्र नैणसी अन्य सभी पुत्रों से अधिक नामांकित हुए। जोधपुर के तत्कालीन राजा जसवंतसिंह (प्रथम) ने उन्हें अपना दीवान बनाया। अपने मंत्रीत्व काल में इन्होंने अत्यन्त कुशलता का परिचय दिया। मारवाड़ की सर्वाधिक प्रसिद्ध ख्यात-इतिहास 'नैणसी री ख्यात" नाम से लिखा जो केवल मारवाड़ ही नहीं किन्तु मेवाड़ तथा राजपूताने के अन्य सभी राज्यों के लिए भी अत्यन्त उपयोगी और महत्वपूर्ण इतिहास ग्रन्थ है।

---

१. जाबालिपुर में प्रतिहार सम्राट वत्सराज ने राज्य करते हुए गौड़, बंगाल, मालव आदि पर विजय प्राप्त कर उत्तरापथ में महान् राज्य स्थापित करने में प्रयत्नशील था। उसने उत्तर प्रदेश के कन्नौज में अपनी राजधानी स्थापित की। इतः पूर्व जाबालिपुर राजधानी थी इस प्रकार जालोर को न केवल मारवाड़ को ही अपितु तत्कालीन बहुत बड़े साम्राज्य की राजधानी होने का भी गौरव प्राप्त हुआ था। शक सं० ७०५ (वि० सं० ८४०) में जैन हरिवंश पुराण के कर्त्ता दिगम्बराचार्य जिनसेन ने पश्चिम में राज्य करने वाले सम्राट वत्सराज का उल्लेख किया है, यतः—

शाकेष्वब्दशतेषु । सप्तसु विंशं पचोत्तरषूतरां
पातीन्द्रायुध नाम्नि कृष्ण नृपजे श्री वल्लभे दक्षिणाम्
पूर्वा श्रीमदवन्तिभूभृति नृपे वत्साधिराजेऽपरां
सौर्या (रा) णामधि मण्डले (लं) जयपुते वीरे वराहेऽवति

अर्थात्-शक सं० ७०५ में जब इंद्रायुध नामक राजा उत्तर दिशा में राज्य करता था, श्री कृष्णराज का पुत्र श्री वल्लभ दक्षिण दिशा में राज्य करता था, पूर्व में अवन्तिराज, पश्चिम में वत्सराज और सौर्य मण्डल में जयवराह राज्य करता था।

इसी वत्सराज के पुत्र नागभट ने सदा के लिए जावालिपुर से हटाकर राजधानी कन्नौज में स्थापित की थी। नाहड़ शब्द नागभट का ही पर्याय है। अतः इसी नाहड़ के समय महावीर जिनालय का निर्माण न हुआ हो ? वत्सराज के समय उद्योतनसूरि ने ऋषभ जिनालय का ही उल्लेख किया है, विद्वान लोग विचार करें। यह नागभट प्रथम था और दूसरा नागभट नागावलोक आम राजा था जिसे बप्पभट्टिसूरि ने प्रतिबोध दिया।

स्वर्णगिरि के जिनालय

१. भगवान महावीर स्वामी का मन्दिर—तीर्थ धाम का यह मुख्य मन्दिर विशाल, भव्य और रमणीक है मूल गर्भगृह, गूढमण्डप, नौचौकी, विशाल सभा मण्डप, शृंगार चौकी और उन्नत शिखर युक्त भव्य रचना वाला है। इसमें मूल नायक भगवान की २ हाथ ऊंची श्वेत वर्णी प्रतिमा है। जिस पर सं० १६८१ में श्री विजयदेवसूरिजी के आज्ञानुवर्त्ती श्री जयसागरगणि द्वारा प्रतिष्ठा कराने का लेख है। मंत्री जयमल मुहणोत ने इसका जीर्णोद्धार करवाया था। उससे पहले जो मूलनायक भगवान की प्राचीन प्रतिमा थी वह बाह्य मण्डप के गवाक्ष में रखी हुई है। प्राचीन 'यक्षवसति प्रासाद' इसे ही माना जाता है क्योंकि इसमें गूढ मण्डप, प्रेक्षा मण्डप, गवाक्ष आदि के भाग जीर्णोद्धार के समय के लगते हैं किन्तु पाषाण और उनकी कोरणी, मूल शिखर का भाग तो प्राचीन अर्थात् १३वीं शती के पश्चात् का नहीं प्रतीत होता। महाराजा कुमारपाल ने जब कुमार विहार का निर्माण कराया उसी समय इस मन्दिर का भी जीर्णोद्धार कराया था। अन्तिम उद्धार श्री विजयराजेन्द्रसूरिजी महाराज के उपदेश से सम्पन्न हुआ।

२. श्री आदिनाथजी का मन्दिर—स्वर्णगिरि के उच्च शिखर पर यह चौमुखजी का द्वितल जिनालय है। इसमें मूलनायक श्री शान्तिनाथ और श्री नेमिनाथ भगवान हैं। इसकी रचना सुमेरु शिखर की भाँति है और अष्टापदावतार नाम से पुकारा जाता है। कुवलयमाला की प्रशस्ति में जिस अष्टापद मन्दिर का सूचन है वह यही मन्दिर होना चाहिए। मुसलमानों के क्रूर हाथों द्वारा क्षतिग्रस्त होने पर भी मूल गंभारे की कोरणी तेरहवीं शती के बाद की नहीं लगती। जीर्णोद्धार के समय 'चउ अठ दस दोय' के बदले दुमंजिले के चौमुख भी बना दिए मालूम देते हैं। ऊपर और नीचे की मंजिल में चतुर्दिग प्रभु प्रतिमाएं विराजमान हैं जो अधिकांश प्राचीन हैं। प्रवेशद्वार के दाहिनी ओर एवं मूलनायक के वाम पार्श्व में एक सर्वांग सुन्दर प्रतिमा विराजमान है। श्री कुंथुनाथ भगवान की चमत्कारिक प्रतिमा अलग देहरी में विराजित है। मुस्लिम आक्रान्ताओं द्वारा क्षतिग्रस्त मन्दिरों को जीर्णोद्धारित करने का श्रेय सं० १६८३ के लगभग मुहणोत जयमल को है।

इस मन्दिर में सं० १९३२ में सरकारी तोपखाना-शस्त्रास्त्र रखे हुए थे, जो श्री विजयराजेन्द्रसूरिजी महाराज के सत्प्रयत्नों से हटाये जाकर जैन सघ के अधिकार में जिनालय आया और जीर्णोद्धार भी उन्हों के उपदेशों से सम्पन्न हुआ।

३. श्री पार्श्वनाथ भगवान का मन्दिर—कुछ दूरी पर स्थित मन्दिर छोटा सा किन्तु रमणीक है। परमार्हत् चालुक्य नरेश कुमारपाल द्वारा निर्मापित 'कुमर विहार' तो विशाल बावन जिनालय था। उसकी भमती में सं० १२९६ में गवाक्ष बनवाकर प्रतिमाएं विराजमान की गई थी। आगे बताया जा चुका है कि तोपखाने में स्थित शिलालेख के अनुसार सं० १२४२ में तत्कालीन देशाधिपति समरसिंह की आज्ञा से भां० यासू के पुत्र यशोवीर ने कराया था। तथा सं० १२५६ पूर्णदेवाचार्य द्वारा तोरण व स्वर्णमय दण्ड कलश ध्वजारोपणादि प्रतिष्ठित करने व अन्य सभी व्यवस्था का उल्लेख आगे किया जाचुका है। आज का यह मन्दिर तो छोटा सा है और प्राचीन कलाकृति भी सुरक्षित नहीं है फिर भी इसके शिखर की शैली बारहवीं तेरहवीं शती के शिखरों के समकक्ष है। संभवतः प्राचीन कुमर विहार के सम्पूर्ण ध्वस्त होने पर उसके बदले यह नव्य मन्दिर बनाया गया हो जिसे कुमार विहार का जीर्णोद्धार रूप माना जा सकता है। इस मन्दिर का जीर्णोद्धार भी श्री विजयराजेन्द्रसूरिजी के सदुपदेव से हुआ है।

४-५. शान्तिनाथ व नेमिनाथ के जिनालय—श्री स्वर्णगिरि तीर्थ को पंचतीर्थी रूप में प्रतिष्ठित करने के हेतु इन दोनों छोटे-छोटे जिनालयों को पास-पास में निर्मित कराया गया। पूज्य आचार्य श्री विजयभूपेन्द्रसूरिजी महाराज के उपदेशों से जैन संघ ने सं० १९८८ में निर्माण करवा कर प्रतिष्ठा करवाई।

ये दोनों देवालय शिल्पकला के उदाहरण है और इसी चौक में एक ओर गुरुमन्दिर का नव्य निर्माण हुआ है।

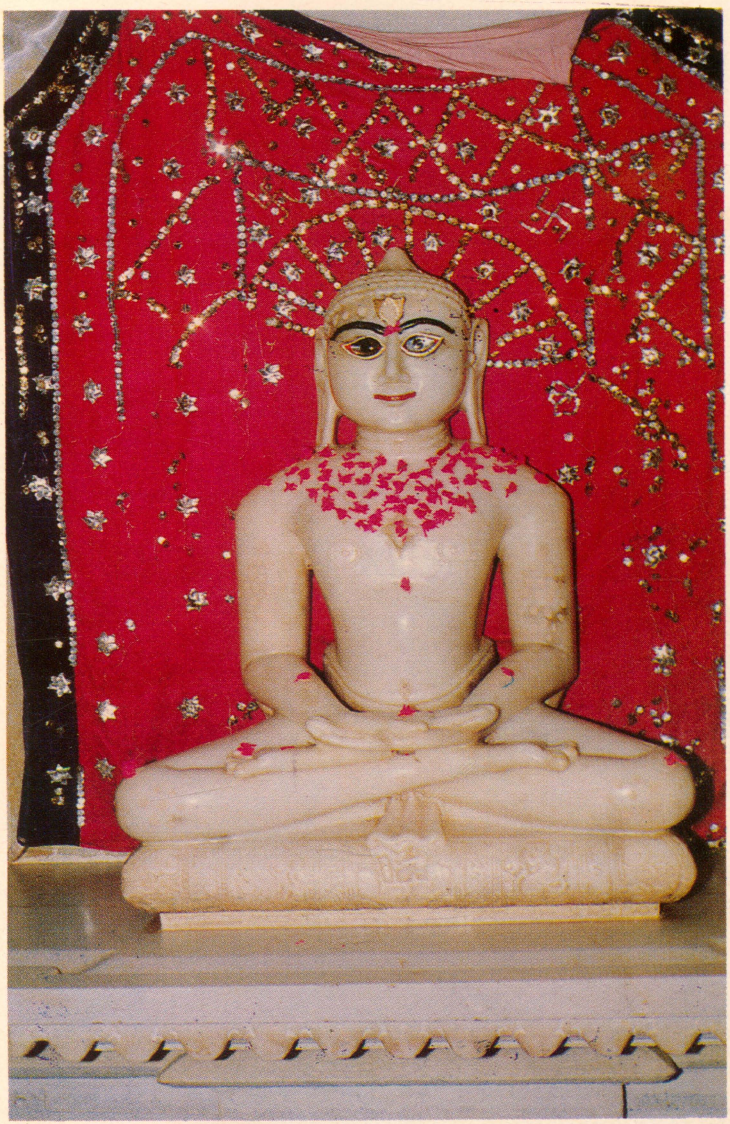

श्री महावीरस्वामी - तपावास, जालोर

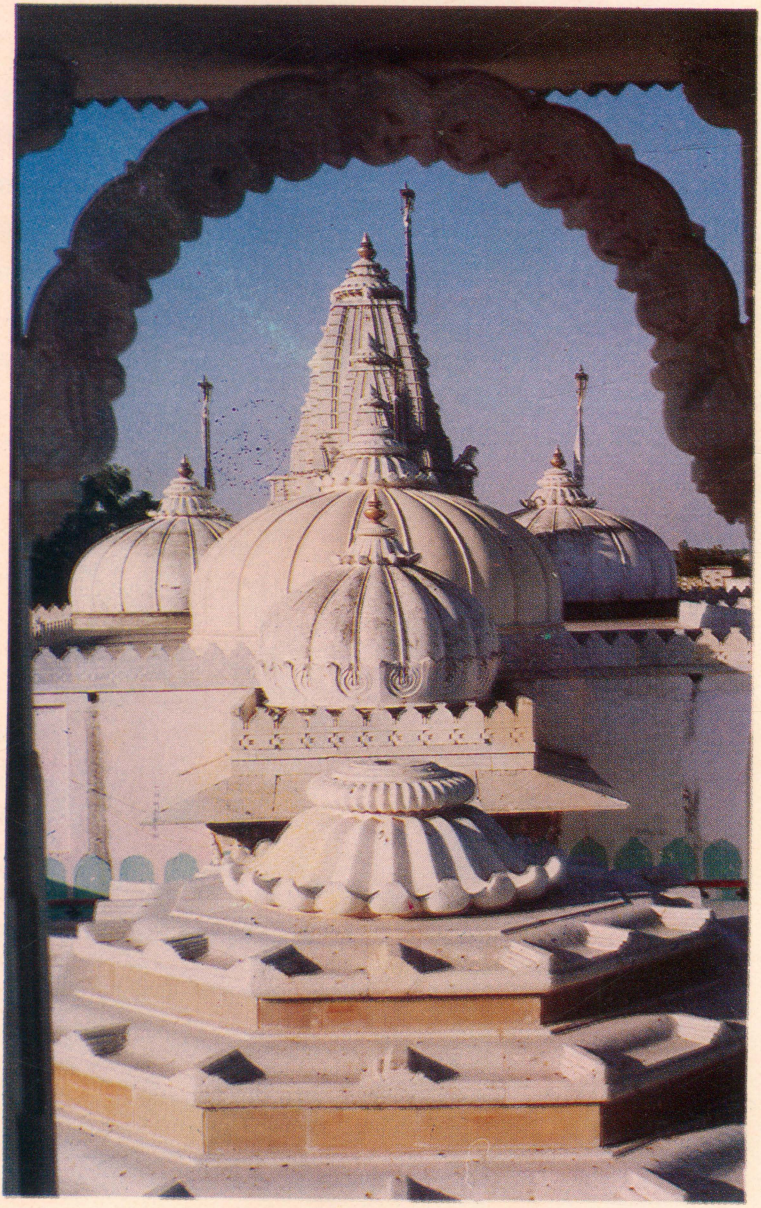

श्री नन्दीश्वर तीर्थ, जालोर

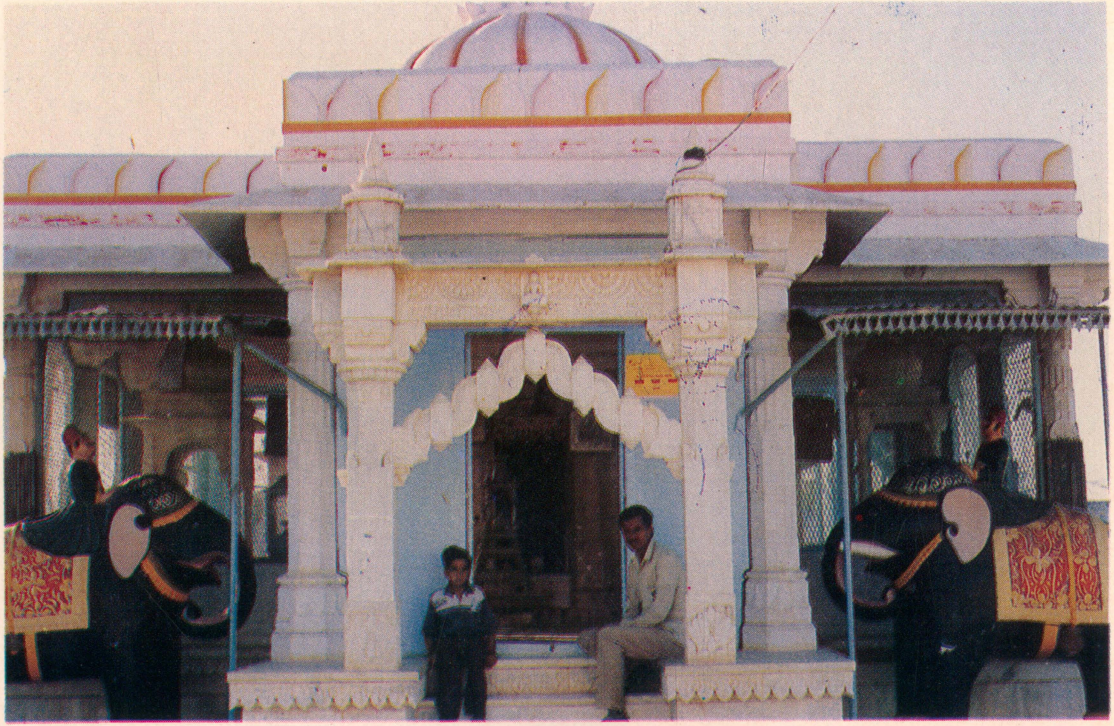

श्री गौड़ी पार्श्वनाथ मन्दिर, जालोर

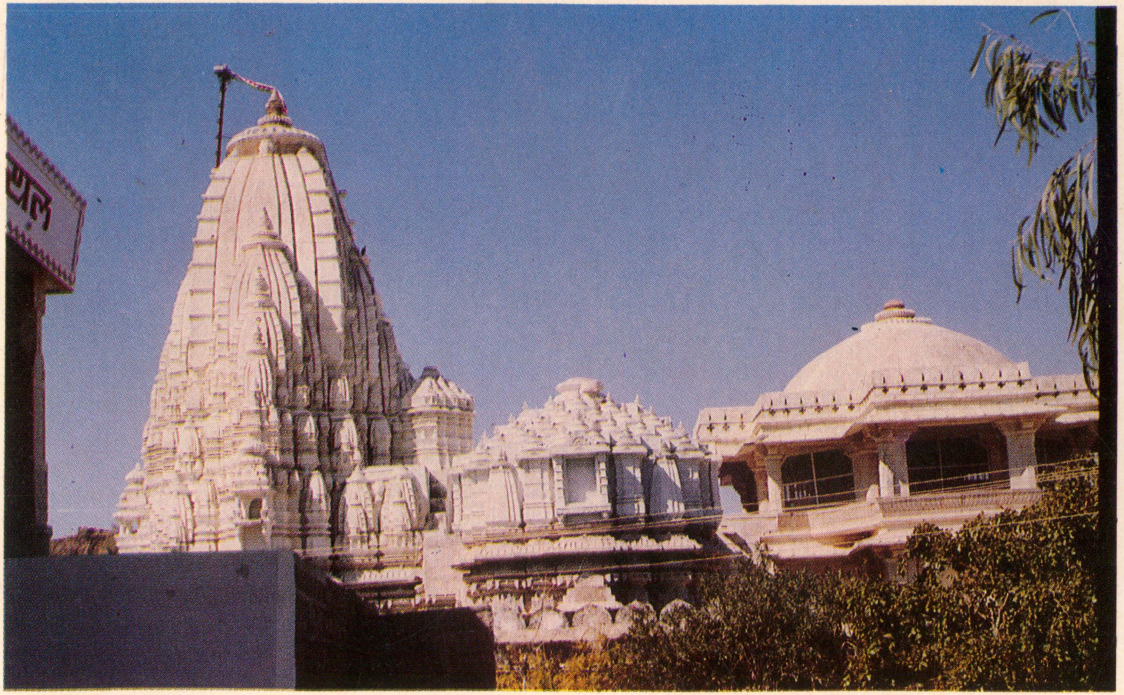

श्री स्वर्णगिरि दुर्ग के मन्दिर का बाहरी दृश्य

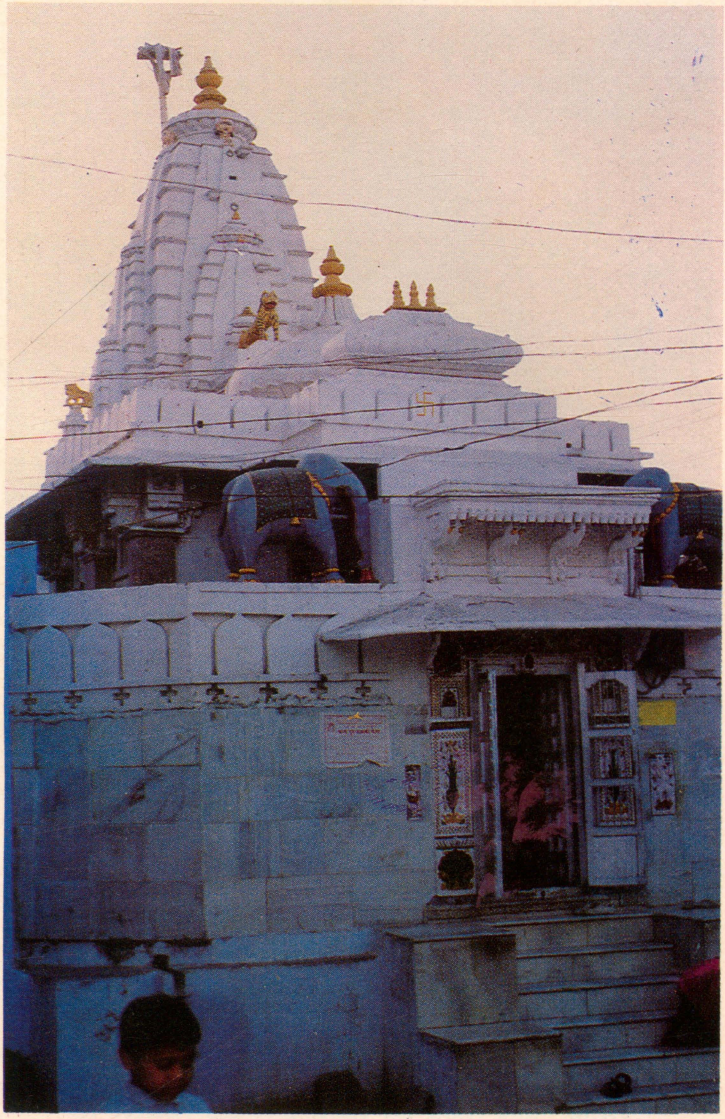

श्री वासुपुज्यजी जैन मन्दिर, जालोर

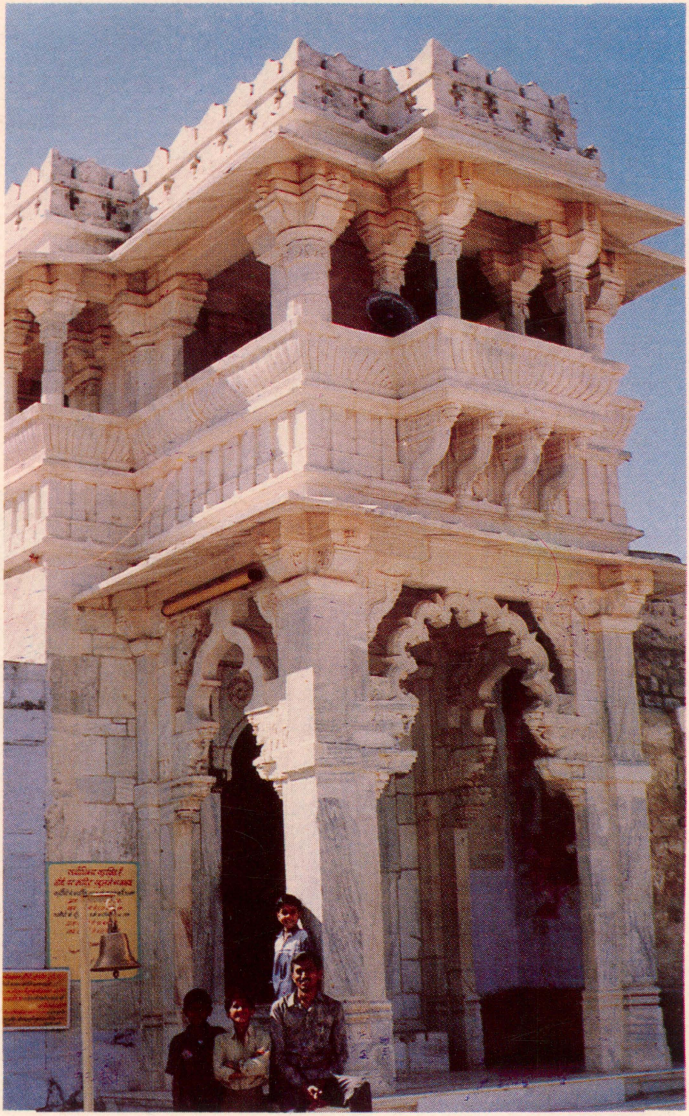

श्री महावीर स्वामी मन्दिर - स्वर्णगिरि, जालोर

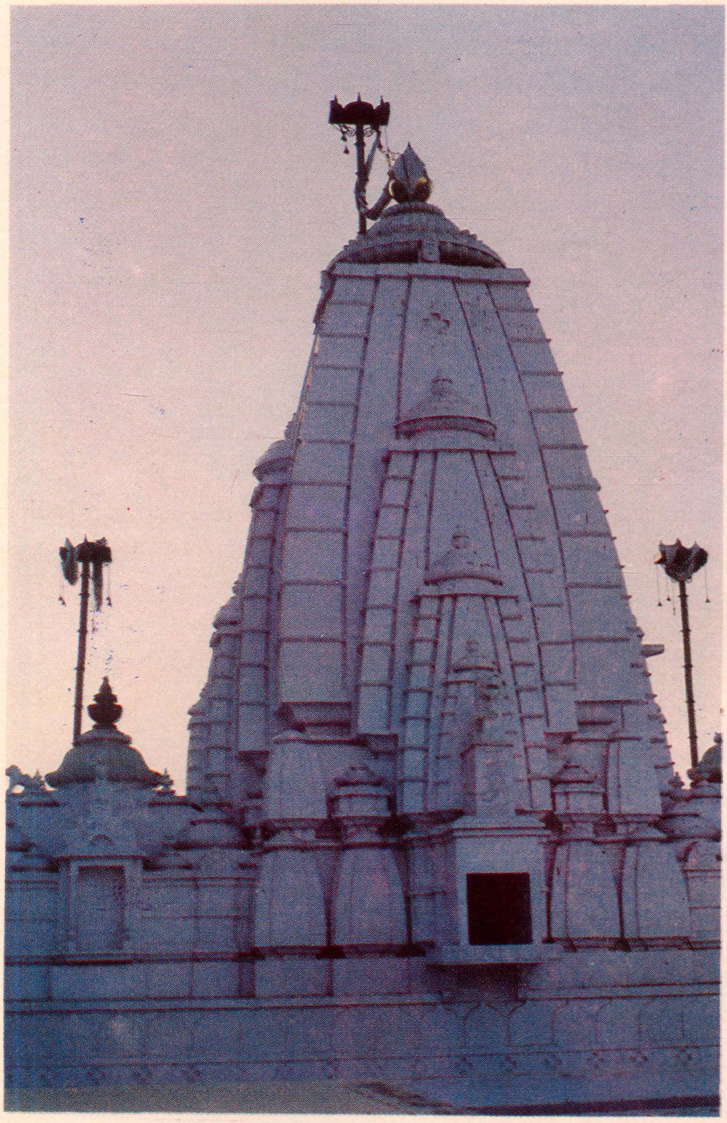

श्री खरतरा पार्श्वनाथ मन्दिर का बाहरी दृश्य, जालोर

शान्तिनाथ चरित्र चित्र - पट्टिका

शान्तिनाथ निर्वाण सम्मेत शिखर ऊपर सिद्धशिला शास्वत स्थिति | श्री जावालिपुरे स्वर्णगिरौ शांति विधि चैत्य | गो. देदउ जयतल | गो. ऊदा नेहड़हि | गो. रामदेव राम्वसिरी

जालोर के जिनालयादि

जालोर नगर में आज ४ उपाश्रय, दो पोसालें, तीन धर्मशालाएं, ज्ञान-भण्डार, पुस्तकालय-वाचनालय आदि हैं। तीन थुई वालों की धर्मशाला सबसे बड़ी, पक्की और दुमंजिली है। इसके एक कमरे में ज्ञान भंडार है जिसमें मुद्रित व हस्त लिखित ग्रन्थों का संग्रह है। यहां की केशरविजयलायब्रेरी में भी अच्छे-अच्छे ग्रन्थों का संग्रह है। यतीन्द्र-विहार-दिग्दर्शन के अनुसार ५० वर्ष पूर्व यहां दशा वीसा ओसवालों के ७५५ और पोरवाडों के १०० घर थे जिनमें त्रिस्तुतिक सम्प्रदाय के १३५ घर, चतुर्थ स्तुतिकों के ३०० घर, स्थानक-वासियों के ३२५ और दादूपंथी-रामस्नेही धर्म पालन करने वाले ५ घर थे।

शहर के महाजनी मुहल्लों में सौधशिखरी ८ गृह-मन्दिर १ सूरज पोल के बाहर शिखरबद्ध १ यों दश मन्दिर हैं। ११वां श्री गौड़ी पार्श्वनाथजी का मन्दिर और बारहवां श्री वर्द्धमान विद्यालय में नन्दीश्वर द्वीप रचना वाला भव्य मन्दिर नव-निर्मित है।

मूल नायक	पाषाण	सर्वधातु	मुहल्लों का नाम	चरणपादुका
१. पार्श्वनाथ	४	०	कांकरियावास	१
२. वासुपूज्य	३	२	फोलावास	०
३. पार्श्वनाथ	२९	०	खरतरवास	०
४. जीरावला पार्श्वनाथ	१	०	पोसाल में	१
५. मुनिसुव्रत	९	०	खानपुरावास	०
६. महावीर	४९	४	तपावास	१
७. नेमिनाथ	२४	७	,,	०
८. शान्तिनाथ	१६	१	,,	२
९. आदिनाथ	५	९	,,	१
१०. ऋषभदेव	५	५	सूरज पोल	१
११. गौड़ी पार्श्वनाथ				
१२. वर्द्धमान विद्यालय				

श्री विजयनेमिसूरि ज्ञानभंडार अहमदाबाद में 'श्रावक धर्म प्रकरण' की सचित्र ताड़पत्रीय प्रति है जिसकी रचना सं० १३१३ दशहरे के दिन पालनपुर में श्री जिनेश्वरसूरि जी महाराज ने की थी। उस पर आचार्य श्री के शिष्य लक्ष्मीतिलकोपाध्याय ने सं० १३१७ मा० शु० १४ को जावालिपुर (जालोर) में पन्द्रह हजार श्लोक परिमित वृहद्वृत्ति रची है जो अद्यावधि अप्रकाशित है। प्रस्तुत ग्रन्थ की काष्ठपट्टिकाओं पर अति सुन्दर चित्र बने हुए है। जो उसी प्रति के हैं और लगभग उसी अरसे में चित्रित हुए हैं। जिस दिन यह टीका पूर्ण हुई उसी दिन जालोर के श्री महावीर स्वामी (चौबीस जिनदेवगृहिका युक्त) जिनालय पर स्वर्ण कलश दण्ड ध्वजारोपण सर्व समुदाय ने कराया था। उससे दो दिन पूर्व लक्ष्मीतिलक गणि को उपाध्याय पद और पद्माकर मुनि की दीक्षा हुई थी। युग प्रधानाचार्य गुर्वावली में उपाध्यायजी की दीक्षा सं० १२८८ में हुई लिखी है जिससे उनका जन्म स्थान भी जालोर संभवित है।

प्रस्तुत 'श्रावक धर्म प्रकरण वृत्ति' की प्रति लिखवाने वाले श्रावकों के चित्र इसमें होने से तथा जिनालय का चित्र होने से यह प्रति बड़ी महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि प्रशस्ति वाले अन्तिम पत्र नष्ट हो गये किन्तु बचे खुचे टुकड़ों से जावालिपुर के द्वितीय जिनराजाष्टाह्निका, वीरभवने स्वश्रेयसे अष्टान्हिका चैत्र मासि चतुर्थिका तथा स्वर्णगिरि पर स्वजननी श्रेयोर्थं अष्टान्हिका चैत्र मासि तृतीयिकाँ..... के उल्लेख के सिवा और कुछ नहीं मिलता।

शान्तिनाथ चरित्र के चित्रोंवाली प्रस्तुत ताड़पत्रीय प्रति की काष्ठपट्टिका द्वय में दूसरी काष्ठपट्टिका के पृष्ठ भाग में जिनालय के पास तीन पुरुषों और तीन स्त्रियों की आकृतियां चित्रित हैं जिनका परिचय इस प्रकार लिखा है—"श्री जवालिपुरे स्वर्णगिरौ श्री शान्तेर्विधि चैत्ये ॥ गो देदउ ॥ गो ऊदा गो० रामदेव" इनके नीचे कक्ष में तीन श्राविकाएं चैत्यवंदन कर रही हैं। उनके नाम "जयतल। नेहडही। राम्वसिरी।" ये तीनों भाइयों की धर्म-पत्नियां होंगी।

गणिवर्य श्री शीलचन्द्रविजयजी ने चित्र के प्रस्तुत अन्तिम विभाग का परिचय इस प्रकार दिया है—काष्ठपट्टिका के अन्तिम खण्ड में अभी एक सुन्दर दृश्य हम देख सकते हैं। इस अन्तिम दृश्य में प्रथम एक नक्कासीदार शिखर से विभूषित जिन मन्दिर है। इसके शिखर पर पीले रंग का अर्थात् स्वर्णमय ध्वज-दण्ड और कलश प्रतिष्ठित है। जिनमन्दिर में एक जिनमूर्ति है। यह जिन मन्दिर जावालिपुर (जालोर) के निकटवर्ती जैन तीर्थ भूमि रूप श्री स्वर्णगिरि की पहाड़ी पर के शान्तिनाथ भगवान के चैत्य की प्रतिकृति है। ऐसा काष्ठपट्टिका पर लिखित उल्लेख पढ़ने

से समझ सकते हैं। जिन मन्दिर के नीचे नीले रंग के पाषाण खण्ड स्वर्णगिरि के प्रतीक हैं। इस जिनमन्दिर और जिनप्रतिभा के सम्मुख ऊपर तीन पुरुष और नीचे तीन स्त्रियां बैठी हैं। तीन पुरुष वे भाई हैं कि जिन्होंने भगवान शान्तिनाथ के चरित्र का आलेखन वाली इन काष्ठपट्टिकाओं का निर्माण कराया होगा। ऐसा अनुमान है। और नीचे की पंक्ति में बैठी हुई तीन स्त्रियां प्रायः इन तीनों भ्राताओं की धर्मपत्नियां मालूम देती हैं। तीनों भ्राताओं में प्रथम दो के दाढ़ी मूँछ है, तीसरे के नहीं अतः वह अभी किशोर-युवक होगा तब ये पट्टिकाएं चित्रित हुई होगी।

यह ग्रन्थ पन्यास श्री शीलचन्द्रविजयजी गणि द्वारा संपादित और L. D. इन्स्टीच्यूट आफ इण्डोलोजी अहमदाबाद से सचित्र प्रकाशित हुआ है।

जालोर में विभिन्न गच्छ और शासन प्रभावनाएं

खरतर गच्छ

ग्यारहवीं शताब्दी में चैत्यवासियों का शिथिलाचार चरम सीमा पर पहुंच गया था। राज्याश्रय प्राप्त गुजरात तो उनका अमेद्य दुर्ग था, जहां सुविहित साधुओं का प्रवेश भी अशक्य था। जैन धर्म की अस्तित्व रक्षा के लिए सुविहित साध्वाचार और विधि-मार्ग की प्रतिष्ठा को नितान्त आवश्यक समझ कर दिल्ली की ओर से श्री वर्द्धमानसूरिजी अपने जिनेश्वरसूरि और बुद्धिसागरसूरि आदि १८ शिष्यों के साथ गुजरात की ओर बढे। उन्होंने मार्गवर्त्ती स्वर्णगिरि-जालोर की पावन तीर्थ भूमि को सुविहित मार्ग प्रचार की उर्वरा भूमि ज्ञात कर उस पर ध्यान केन्द्रित किया और पाटन में दुर्लभराज की सभा में चैत्यवासियों को पराजित कर उनकी रीढ तोड़ दो, अब सर्वत्र उन्मुक्त साधुविहार होने लगा। वे लोग गुजरात से विहार कर पुनः जालोर आये और यहां चातुर्मास कर के विधि-मार्ग को परिपुष्ट किया। श्री जिनेश्वरसूरि, बुद्धिसागरसूरि, संवेगरंगशाला कर्त्ता श्री जिनचन्द्रसूरि आदि यहाँ अनेकशः विचरे, चातुर्मास किए, महान् ग्रन्थों का निर्माण किया। उनके शिष्य गण भी यहाँ विचरते रहे। सोमचंद्र गणि (श्री जिनदत्तसूरि) यहां अनेकशः विचरे थे। उन्हें श्री जिनवल्लभसूरिजी के पट्ट पर आचार्य प्रतिष्ठापित करने का निर्णय भी यहीं सात आचार्यों ने मिल कर लिया था। क्योंकि वे भावी युगप्रधान और सर्वथा योग्य होने के साथ-साथ श्री जिनेश्वरसूरिजी के शिष्य धर्मदेवोपाध्याय के शिष्य थे। वृद्धाचार्य प्रबन्धावली जो युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के पृ-९२ में प्रकाशित है—में श्री जिनदत्तसूरिजी की पद-स्थापना निर्णयका इस प्रकार उल्लेख हैं—

"जिणवल्लहसूरि पदे अन्ने सत्तायरिया जालउर नगरंमि मिलिऊण मंतं इह कयं। समग्ग संघ गच्छ परिवारिया बीयं भट्टारगं करिस्सामि, जिणवल्लहसूरि पट्टे। तओ दक्खिण देसे देवगिरि नगरे जिणदत्तगणी चउमासी ठियो अत्थि, तं सपभावगं गीयत्थं पट्ट जुग्गं जाणिऊण संघेहि आहूओ। पट्ट ठवणा दो मुहुत्ता गणिया तओ संघ पत्थवणा वसाओ जिणदत्त गणी चलिओ।

तओ गणी बीय मुहूत्ते जालउर दुग्गे एगारह सयइ गुणहत्तरे वरिसे जिणदत्त-सूरि पट्टे ठविओ सव्व संघेहिं। वास्तव में यह पद स्थापना चित्तौड़ में हुई थी किन्तु निर्णय जालोर में हुआ था।

पाठक रघुपत्ति कृत जिनदत्तसूरि छन्द (गा०-३५ सं० १८३९ में रचित) में आपके द्वारा बोथरा वंश प्रतिबोध का उल्लेख :—

जालोर नयरे मरी जमाणी, सगर नृप चहुआण ए
तसु पुत्र बोहिथ तेण गुरू पय प्रणमिया गुण जाण ए
जीवारीयै करि जाप जिणदत्त जैन धर्म सभंत ए
जिनदत्तसूरीस सद्गुरु सेवतां सुख संत ए ॥१८॥

यह वर्णन बहुत बाद का है, पर श्री जिनदत्तसूरिजी ने अवश्य ही जालोर में विचरण किया था। श्री पूज्य जी के दफ्तर में बच्छावत वंशावली में देवड़ा सोनिगरा गोत्रीय सामंतसी के चतुर्थ पुत्र सगर को पुत्र बोहित्थ से बोहिथरा गोत्र होना लिखा है।

श्रीमाल जाति का सोनगिरा गोत्र जालोर से सम्बन्धित और खरतरगच्छ प्रतिबोधित है जिसके वंशज माण्डवगढ़ के सुप्रसिद्ध मण्डन और धनराज आदि विद्वान और धनाढ्य, राजमान्य व्यक्ति थे।

सौभाग्य से युगप्रधानाचार्य गुर्वावली में जालोर के तिमिराच्छन्न इतिहास पर सम्यक् प्रकाश डालने वाले स्वर्णिम पृष्ठ उपलब्ध हैं जो अत्यन्त विश्वस्त और प्रमाणिक हैं यहाँ उन प्राचीन प्रमाणों का उल्लेख किया जा रहा है।

श्री जिनपतिसूरि

सं० १२६९ में जावालिपुर के विधि चैत्यालय में मंत्रीश्वर कुलधर[1] द्वारा निर्मापित श्री महावीर स्वामी की प्रतिमा को बड़े भारी समारोह पूर्वक श्री जिन-पतिसूरि जी ने स्थापित किया। श्री जिनपाल गणि को उपाध्याय पद से अलंकृत किया एवं प्रवर्त्तिनी धर्मदेवी को महत्तरा पद दिया गया और उसका नाम प्रभावती प्रसिद्ध किया। यहीं पर महेन्द्र, गुणकीर्त्ति, मानदेव नामक साधु और चन्द्रश्री, केवलश्री साध्वियों को दीक्षा देकर आचार्य प्रवर श्री जिनपतिसूरिजी महाराज विक्रमपुर पधारे।

---

१. प्रशस्ति संग्रह पृ० ४६ में सूरत स्थित मोहनलालजी महाराज के ज्ञान भण्डार की सं० १५४६ लिखित स्वर्णाक्षरी कल्पसूत्र की गा० ४८ की प्रशस्ति प्रकाशित है जिसमें राठौड़ जयचंद्र ने छाजहड़ वंश के उद्धरण कुलधर

सं० १२७५ में ज्येष्ठ सुदी १२ को यहीं पर भुवनश्री गणिनी, जगमति, मङ्गलश्री—तीन साध्वियाँ और विमलचन्द्रगणि व पद्मदेव गणि की दीक्षा सम्पन्न हुई।

आदि की बेगड़ शाखा की प्रशस्ति है जिसमें जालोर में मंत्री कुलधर के द्वारा प्रासाद निर्माण का उल्लेख—

तत्पुत्रोऽथ कुलधरः कुलभार धुरन्धरः
प्रौढ प्रताप संयुक्तः शत्रूणां तपनोपमः ॥१३॥

श्री जावालिपुरे भिन्नमाले श्रीबाग्भटे तथा
प्रासादाः कारिता स्तेन निज वित्त व्ययाद्वरा ॥१४॥

पृ० ७ में श्री शान्तिनाथजी के भण्डार, खंभात की अभयतिलकोषाध्याय कृत श्री पंच प्रस्थान व्याख्या की प्रशस्ति प्रकाशित हुई है जो श्री लक्ष्मीतिलकोपाध्याय संशोधित है। इसकी अपूर्ण प्रशस्ति में मानदेव, कुलधर, बहुदेव, यशोवर्द्धन भ्राता और उनके वंशजों के दीक्षोत्सवादि के साथ-साथ जावालिपुर के वीर जिनालय में पार्श्वनाथ भगवान की देवकुलिका निर्माण कराने का उल्लेख इस प्रकार है—

"श्री जावालिपुरेऽत्र देवगृहिकां पार्श्वस्य वीरे शितुश्चैत्ये"

इसी वंश की एक प्रशस्ति जो श्री अभयतिलकोपाध्याय कृत द्वयाश्रय महाकाव्य वृत्ति पत्र २७३ की है, की निम्न दो गाथाएं यहाँ उद्धृत की जाती हैं जिनमें जावालिपुर सम्बन्धी उल्लेख द्रष्टव्य है—

श्री जावालिपुरे च वीर भवने श्री पार्श्व तीर्थेशितुः
सौवं पुण्य महोनु देवगृहकं नैर्मल्य शाल्युन्नतम्
यः प्राचीकर दुद् ध्वजं हिमवता कूटं तनूजं निजं
स्वर्णाद्या ऽऽत्मजया सह प्रहित मद्वार्द्धोपचारे कृते (?) ॥१६॥

सन्तुष्ठोदर्यासहराट् प्रहितया नांदी निनाद स्पृशा
श्रीकर्यामल कारि धींध इतरः स्वास्नुः स्वएवौकसि
श्री देव्या स्वय मतेया कुल कला द्रव्यर्जुता सत्यता
साधुत्व प्रिय वादितादिक गुणैराकृष्टये वोच्चकैः ॥१७॥

श्री चन्द्रतिलकोपाध्याय कृत अभयकुमार चरित्र की मुनिश्री पुण्यविजयजी के संग्रह की प्रति की पुष्पिका (गा० ४८) में जो कुमारगणि रचित है—में सेठ

श्री जिनेश्वरसूरि

श्री जिनपतिसूरि जी का स्वर्गबास हो जाने पर उनके पट्ट पर सं० १२७८ मिती माघ सुदि ६ को जावालिपुर में सारे संघ की सम्मति से श्री महावीर देव भवन में तीर्थ प्रभावनार्थ आचार्य सर्वदेवसूरि ने जिनपालोपाध्याय जिनहितोपाध्याय अदि संघ के साथ पूज्य श्री की आज्ञानुसार उनके शिष्य श्री वीरप्रभगणि को स्थापित कर श्री जिनेश्वरसूरि नाम से प्रसिद्ध किया।[1] जालोर संघ ने सत्रागार, अमारि घोषणा, गीत गान एवं रास रचने व याचकों को मनोवाछित दान देते हुए यह उत्सव बड़े भारी समारोहपूर्वक मनाया। मिती माघ सुदि ९ को यशःकलश गणि, विनयरूचि गणि, बुद्धिसागर गणि, रत्न कीर्त्ति गणि, तिलकप्रभ गणि, रत्नप्रभ गणि और अमरकीर्त्ति गणि नामक ७ साधुओं का दीक्षा समारोह भी जावालिपुर में हुआ। इसके पश्चात् श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज

कुलधर बहुदेव यशोवर्द्धन के परिवार के सुकृत्यों का विशद वर्णन है जिसमें निम्नोक्त श्लोक में जावालिपुर—महावीर चैत्य में सेठ लालण द्वारा अपनी माता के पुण्यार्थ वासुपूज्य देवगृहिका निर्माण कराने का उल्लेख २०वीं गाथा में। यतः

तत्राभूद् धुरि नागपाल उरुधीः पुण्योऽथयोऽवी करत्
साद्धं लालण साधुना स्वजननी पुण्याय वीर प्रभोः
चैत्ये द्वादश देव देवगृहिकां सौवर्ण कुम्भध्वजां
श्री जावालिपुरे तथा द्विरकरोत् तीर्थेषु यात्रां मुदा ॥२०॥

श्री जिनपतिसूरि जी इसी वंश के थे तथा खींवड़ की पुत्री ने जिनेश्वरसूरि जी से तथा जिनप्रबोधसूरि के आचार्य पद के समय इसी वंश के भाई बहिन स्थिरकीर्त्ति और केवलप्रभा ने दीक्षा ली थी।

१. हमारे सम्पादित ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह में प्रकाशित गुरु गुण षट पद में—

बार अठहत्तरइ माह सिय छट्ठि मणिज्जइ
जिणेसरसूरि पइसरइ संधु सयलु विविह सज्जइ
सूरिमंतु सिरि सव्वएवसूरिहिं जसु दिन्नउ
जालउरिहिं जिण वीर भुवणि बहु उच्छव कीनउ
कंसाल ताल झल्लरि पडह वेण वंसु रलियामणउ
सुपढंति भट्ट सुंमहि गहिर जय जय सद्द सुहावणउ ॥७॥

श्रीमालनगर पधार गये। वहाँ कई दीक्षा और प्रतिष्ठादि उत्सव हुए। मिती आषाढ़ सुदि १० को श्रीमालनगर में जगद्धर कारित समवसरण की प्रतिष्ठा और शान्तिनाथ स्वामी की स्थापना हुई। उसी दिन जावालिपुर में देवगृह का प्रारम्भ हुआ।

सं० १२७९ मिती माघ सुदि ५ को जालोर में अर्हद्दत्त गणि, विवेक श्री गणिनी, शीलमाला गणिनी, चन्द्रमाला गणिनी और विनयमाला गणिनी की दीक्षा सम्पन्न हुई।

सं० १२८१ मिती वैशाख सुदि ६ को श्री जिनेश्वरसूरिजी के सान्निध्य में विजयकीर्त्ति, उदयकीर्ति, गुणसागर, परमानन्द और कमलश्री गणिनी की दीक्षा हुई। मिती ज्येष्ठ सुदि ९ को जावालिपुर में श्री महावीर जिनालय पर ध्वजारोपण हुआ था।

सं० १२८८ मिती भाद्रपद शुक्ल १० को स्तूप-ध्वज प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। पौष शुक्ल ११ को शरच्चंद्र, कुशलचन्द्र, कल्याणकलश, प्रसन्नचन्द्र, लक्ष्मीतिलक गणि, वीरतिलक, रत्नतिलक नामक साधु और धर्ममति, विनयमति गणिनी, विद्यामति गणिनी और चारित्रमति गणिनी को भागवती दीक्षा दी गई।

इसी ग्रन्थ के खरतर गुरु गुण वर्णन छप्पय में—

माह छट्ठि जालउरि सुद्ध तहि ठविय जिणेसर
बारह अठहत्तरइ रूप लावन्न मनोहर
जिणपबोहसूरि आसोज पंचमि जालउरय भयउ
इकतीस वरसि अनुतर सइ पट्ट तरु इणिपरि लयउ ॥८॥

जिनेश्वरसूरि सप्ततिका में—

तत्तो सुवण्णगिरि मणहरम्मि सुपइट्ठ लट्ठ विजयंमि।
निच्चल सीमा पच्चल अविचल गुरु गिरि विभत्तंमि ॥३३॥

अब्भुय भुयबल लच्छीवल्लह वक्कहार राय रेहिल्ले।
तित्थप तित्थ पसत्थे, जावालिपुरे विदेहिव्व ॥३४॥

चाउद्दिसि चउविह संघ चउव्विहामर निकाय परियरिओ।
जिणवइ पडिहत्थो सव्वदेवसूरि मुहम्मिदो ॥३५॥

गय हय रवि (१२७८) वरिसे, माहसुद्ध छट्ठीइ तुह पयभिसेय।
सिरिवीर मंदरंमि कासी जिणस्सेव ॥३६॥चतुर्भिः कलापकम्॥

सं० १२९१ मिती बैशाख सुदि १० को जावालिपुर में यतिकलश, क्षमाचन्द्र, शीलरत्न, धर्मरत्न, चारित्ररत्न, मेघकुमार गणि, अभयतिलक गणि, श्रीकुमार तथा शीलसुन्दरी गणिनी और चन्दनसुन्दरी की दीक्षा सम्पन्न हुई। मिती ज्येष्ठ बदि २ मूलार्क में श्री विजयदेवसूरि को आचार्य पद दिया गया।

सं० १२९८ वैशाखी एकादशी को जावालिपुर में महं० कुलचन्द्र ने समुदाय सहित गुणचन्द्र द्वारा स्वर्णमय दण्ड-ध्वजारोपण सम्पन्न किया।

सं० १२९९ मिती प्रथम आश्विन बदि २ को महामंत्री कुलधर ने समस्त राजलोक व नागरिकों को आश्चर्यान्वित करने वाली, महा महोत्सव के साथ उल्लासपूर्वक भागवती दीक्षा स्वीकार की। सूरिजी द्वारा मंत्रीश्वर का दीक्षा नाम कुलतिलक मुनि प्रसिद्ध किया गया।

सं० १३१० वैशाख सुदि ११ को चारित्रवल्लभ, हेमपर्वत, अचलचित्त, लाभनिधि, मोदमन्दिर, गजकीर्त्ति, रत्नाकर, गतमोह, देवप्रमोद, वीराणंद, विगतदोष, राजललित, बहुचरित्र, विमलप्रज्ञ, रत्ननिधान—पन्द्रह साधुओं की दीक्षा सम्पन्न हुई। इनमें चारित्रवल्लभ और विमलप्रज्ञ पिता-पुत्र थे।

इसी वैशाखी १३ स्वाति नक्षत्र शनिवार को श्री महावीर स्वामी के विधि-चैत्य में राज श्री उदयसिंहदेवादि राजपुरुषों व मंत्री जैत्रसिंह आदि राजमान्य व्यक्तियों तथा प्रल्हादनपुरीय, वागड़ देशीय समस्त समुदाय की उपस्थिति में चतुर्विंशति जिनालय, सप्ततिशत (१७०) जिन, सम्मेतशिखर नन्दीश्वर, तीर्थङ्कर मातृपट्ट, हीरा सम्बन्धी श्री नेमिनाथ, उज्जयिनी के लिए श्री महावीर स्वामी, चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ, व श्रेष्ठि हरिपाल के निर्मापित सुधर्मास्वामी, श्रीजिनदत्तसूरि, सीमंधर स्वामी, युगमंधर स्वामी आदि नाना प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा सम्पन्न की। प्रमोदश्री गणिनी को महत्तरापद देकर लक्ष्मीनिधि नाम रखा एवं ज्ञानमाला गणिनी को प्रवर्तिनी पद दिया।

संवत् १३१३ फाल्गुन सुदि ४ को जावालिपुर-स्वर्णगिरि पर वाहित्रिक उद्धरण प्रतिष्ठापित श्री शान्तिनाथ प्रतिमा की महाप्रासाद (बड़े मन्दिर) में स्थापना की। मिती चैत्र सुदि १४ को कनककीर्त्ति, विबुधराज, राजशेखर, गुणशेखर, साधु एवं जयलक्ष्मी, कल्याणनिधि, प्रमोदलक्ष्मी और गच्छवृद्धि साध्वियों की बड़ी दीक्षा हुई। इसके बाद वैशाख बदि १ को श्री अजितनाथ प्रतिमा की प्रतिष्ठा की। इन्हें पद्रू, मूलिग ने प्रचुर द्रव्य व्यय पूर्वक द्वितीय देवगृह में स्थापित की।

सं० १३१४ माघ सुदि १३ के दिन राजा श्री उदयसिंह के प्रसाद से कनकगिरि-स्वर्णगिरि पर निर्मापित प्रधान प्रासाद पर ध्वजारोपण महोत्सव निर्विघ्नतया सम्पन्न हुआ।

सं० १३१६ मिती माघ सुदि १ को जावालिपुर में धर्मसुन्दरी गणिनी को प्रवर्त्तिनी पद से विभूषित किया गया। माघ सुदि ३ के दिन पूर्णशेखर व कनककलश नामक दो साधुओं की दीक्षा हुई। माघ सुदि ६ को स्वर्णगिरि के शान्तिनाथ प्रासाद पर स्वर्ण दण्ड कलश का आरोपण राजा श्री चाचिगदेव के राज्य में उपर्युक्त पद्रू-मूलिग द्वारा सम्पन्न हुआ।

सं० १३१७ माघ सुदि १२ को लक्ष्मीतिलक गणि को उपाध्याय पद व पद्माकर की दीक्षा बड़े समारोह पूर्वक हुई। माघ सुदि १४ के दिन श्री जावालिपुरालङ्कार श्री महावीर जिनालय की चौवीस देहरियों पर स्वर्णकलश और स्वर्ण दण्ड-ध्वजारोपण सम्पन्न हुआ, यह उत्सव सर्व समुदाय ने कराया था।

सं० १३२३ मार्गशीर्ष बदि ५ को नेमिध्वज साधु व विनयसिद्धि, आगम-वृद्धि साध्वियों की दीक्षा हुई। जावालिपुर में ही सं० १३२३ वैशाख सुदि १३ के दिन देवमूर्त्तिगणि को वाचनाचार्य पद दिया गया। द्वितीय ज्येष्ठ शुल्क १० के दिन जेसलमेर के श्री पार्श्वनाथ विधि चैत्य पर चढ़ाने के लिए सा० नेमिकुमार सा० गणदेव कारित स्वर्णमय दण्ड-कलश की प्रतिष्ठा की। विवेकसमुद्र गणि को बाचनाचार्य पद से अलंकृत किया गया। मिती आषाढ़ बदि १ को हीराकर साधु को भागवती दीक्षा दी।

सं० १३२४ मार्गशीर्ष बदि २ शनिवार के दिन कुलभूषण-हेमभूषण साधु द्वय तथा अनन्तलक्ष्मी, व्रतलक्ष्मी, एकलक्ष्मी, प्रधानलक्ष्मी साध्वियों की दीक्षा जावालिपुर में बड़े समारोह पूर्वक सम्पन्न हुई।

सं० १३२५ वैशाख सुदि १० के दिन जावालिपुर के श्री महावीर विधि चैत्य में पालनपुर, खंभात, मेवाड़, उच्च और वागड़ देश के सर्व समुदाय के एकत्र होने पर व्रतग्रहण, मालारोपण, सम्यक्त्व धारण, सामायकारोप आदि के लिए नन्दी मण्डाण बड़े विस्तार से हुआ। गजेन्द्रबल साधु और पद्मावती साध्वी की दीक्षा हुई। मिति वैशाख सुदि १४ को महावीर विधि चैत्य और चतुर्विंशति जिन बिम्बों के २४ ध्वजादण्डों की, सीमंधर-युगमंधर-बाहु-सुबाहु बिम्बों की एवं और भी बहुत सी प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा बड़े विस्तार से की गई। मिती जेठ

बदि ४ को सुवर्णगिरि पर स्थित शान्तिनाथ विधि चैत्य में चौबीस देहरियों में २४ जिनबिम्बों का स्थापना महोत्सव बड़े विस्तार से सम्पन्न हुआ। उसी दिन धर्मतिलक गणि को वाचनाचार्य पद से विभूषित किया गया।

सं० १३२८ मिती वैशाख सुदि १४ के दिन जावालिपुर में सा० क्षेमसिंह ने श्री चन्द्रप्रभ स्वामी का महाबिम्ब, महं० पूर्णसिंह ने श्री ऋषभदेव, महं० ब्रह्मदेव[1] ने भगवान महावीर स्वामी के बिम्ब का प्रतिष्ठा महोत्सव कराया। मिती ज्येष्ठ बदि ४ को हेमप्रभा साध्वी की दीक्षा हुई।

सं० १३३० मिती वैशाख बदि ६ को प्रबोधमूर्त्ति गणि को वाचनाचार्य पद एवं कल्याणऋद्धि गणिनी को प्रवर्त्तिनी पद से अलंकृत किया। वैशाख बदि ८ के दिन श्री स्वर्णगिरि पर श्री चन्द्रप्रभ स्वामी का महाबिम्ब शिखर में स्थापित किया।

इस प्रकार प्रतिदिन विश्व को चमत्कृत करने वाले सच्चारित्र पूर्ण धर्म-प्रभावना करते हुए श्री महावीर भगवान के तीर्थ व शासन की प्रभावना[2] करते हुए, संसार समुद्र में डूबते हुए प्राणियों का निस्तार करते व कल्पवृक्ष की भाँति समस्त प्राणियों का मनोरथ पूर्ण करते हुए अपनी वचन चातुरी से वृहस्पति का

---

१. ऊकेश वंशी सा० ब्रह्मदेव लिखापित धर्मप्रकरण वृत्ति की अपूर्ण १६-१७ गाथा की प्रशस्ति में श्री जिनेश्वरसूरिजी का वर्णन अपूर्ण रह गया है, किन्तु निम्नोक्त ३ श्लोकों में जावालिपुर-स्वर्णगिरि में कराये हुए अष्टाह्निका महोत्सवादिका वर्णन इस प्रकार है :—

श्री जावालिपुरे द्वितीय जिनराजोऽष्टाह्निकां योऽद्भुतां।
चैत्रे मासि तृतीयकां वितनुते मन्ये वृषोद्यानिकां ॥६॥

श्री जावालिपुरे जिनेश भवने स्वश्रेयसेऽष्टाह्निकां।
चैत्रेमासि चतुर्थिकां गुरुतरां चक्रे तथा स्वस्तिकां ॥९॥

सोदर्याः सुकृते श्री स्वर्णगिरे स्तथा स्वजननी श्रेयोऽर्थमष्टाह्निकां।
चैत्रे मासि·····मथ सुवर्णीन्याः शुभायाश्विने ॥१०॥

२. ऊपर श्री जिनेश्वरसूरिजी के अनेक प्रकार से जालोर में धर्म प्रभावना करने का वर्णन आ चुका है। श्री विजयनेमिसूरि शास्त्र भण्डार, खंभात की अनेकान्त जय पताका वृत्ति की प्रशस्ति में सा० बिमलचन्द्र के पुत्रों द्वारा

भी पराभव करने वाले, लोकोत्तर ज्ञान के भण्डार श्री जिनेश्वरसूरि महाराज ने श्री जावालिपुर में विराजते अपना अन्तिम समय ज्ञात कर सर्व संघ के समक्ष सं० १३३१ मिती आश्विन कृष्ण ५ को प्रातःकाल अनेक गुण-मणि के निधान वा० प्रबोधमूर्ति को अपने पट्ट पर स्थापित किया[1] और उनका नाम श्री जिनप्रबोधसूरि दिया। उस समय श्री जिनरत्नसूरिजी पालनपुर थे अतः उन्हें आदेश दिया कि चौमासे बाद समस्त गच्छ-समुदाय को एकत्र कर शुभ मुहूर्त्त में विस्तार पूर्वक आचार्यपद स्थापनोत्सव कर देना। श्री जिनेश्वरसूरिजी ने अनशन ले लिया और पंच परमेष्ठी के ध्यान में समस्त जीवों को क्षामणा पूर्वक आश्विन कृष्ण ६ को रात्रि दो घड़ी जाने पर स्वर्ग की ओर प्रयाण कर गये। दूसरे दिन प्रातःकाल समस्त राजकीय लोगों के साथ बाजे गाजे से समारोह पूर्वक सूरिजी का अग्नि-संस्कार किया गया। उस स्थान पर सर्व समुदाय के साथ सा० क्षेमसिंह ने स्तूप निर्माण कराया।

कविपल्हु आदि कृत षटपदानि में श्री जिनेश्वरसूरि के परिचय के साथ जावालिपुर के स्तूप को पापनाशक और मनवंछित पूर्ण करने वाला लिखा है। यहां एतद्विषयक दो पद्य उद्धत किये जाते हैं—

"स्वर्णगिरि शिखरालंकार श्री चन्द्रप्रभ-श्री युगादिदेव-श्री नेमिनाथ प्रासाद विधापन श्री शत्रुञ्जयोज्जयन्तादि महातीर्थ सर्वसंघयात्रा कारापण उपार्जित पुण्य प्रासादरोपित कलश ध्वजाभ्यां सा० क्षेमसिंह सा० चाहड़ सुश्रावकाभ्यां स्वश्रेयसे" वाक्यों द्वारा उनके स्वर्णगिरि पर प्रासाद निर्माण और संघयात्रादि का उल्लेख है। यह पुस्तक उन्होंने सं० १३५१ माघ बदि १ को पालनपुर में श्री जिनप्रबोधसूरि पट्टालंकार श्री जिनचन्द्रसूरिजी के उपदेश से खरीद की थी। इसी विमलचन्द्र को पुत्री साऊ-रूयड़ ने श्री जिनेश्वरसूरिजी के पास पालनपुर में दीक्षा ली थी और उसका नाम रत्नवृष्टि रखा गया था। यह दीक्षा सं० १३१५-१६ में आषाढ़ सुदि १० को हुई थी। सं० १३३४ मार्गशीर्ष सुदि १३ को इन्हीं रत्नवृष्टि साध्वी को प्रवर्त्तिनी पद से विभूषित श्री जिनप्रबोधसूरि ने किया और सं० १३६६ में श्री जिनचन्द्रसूरिजी के भीमपल्ली से पत्तन, खंभात और महातीर्थों की यात्रा के लिए निकले संघ में ये रत्नवृष्टि १५ ठाणों से साथ थी।

१. **सिरिजावाल पुरंमि ठिएहिं, जहिं नियअंतसमयं मुणेवि।**
नियय पट्टंमि सइंहत्थि संठाविओ वाणारिउ पबोहमुत्ति गणि ॥३०॥
[श्री जिनेश्वरसूरि संयमश्री विवाह वर्णन रास]

बारह सय पणयालि (१२४५) मग्गसिरि गारसि सिय दिणि।
जसु कम्मणि सिरि नेमिचंदु लखमिणि रंजिय मणि॥
अट्ठावनइ (१२५८) खेड़िनयरि चित्तासिय दुइ दिणि।
सजम सिरि संगहिय संति जिण भुवणहि भाविणि॥
पयठवणु जालउरि अठहुत्तरइ (१२७८) माह सुद्ध छट्ठिहि दिवसि।
तेरह इगतीसइ (१३३१) दिवगमणु किन्ह छट्ठि आसोय निसि॥३०॥

सो जावाल पुरंमि रंमि वर थूभह मंडणु
भव सय अज्जिय दुट्ठ पाव कम्मह सखंडणु
सयल भविय जल निवह विमल मण वंछिय पूरणु
देव असुर नर विबुह गण वर मण रंजणु।
जिणदत्तसूरि गुरु पट्टधरु वीर तित्थ उद्धरण करु
जुगपहाणु जिणसरहसूरि हवउ संघ सुह रिद्धिकरु॥३१॥

जिनप्रबोधसूरि

श्री जिनेश्वरसूरिजी के आज्ञानुसार चातुर्मास पूर्ण होने पर श्री जिनरत्नाचार्य जावालिपुर पधारे और बड़े विस्तार से सभी दिशाओं के समुदाय की उपस्थिति में श्री जिनप्रबोधसूरिजी का पदस्थापना महोत्सव हुआ।[1] श्री चन्द्रतिलकोपाध्याय, श्रीतिलकोपाध्याय, वा० पद्मदेव गणि आदि अनेक साधुओं का संघ भी आ पहुंचा और बड़े भारी आडंबर के साथ सं० १३३१ फाल्गुन बदि ८ रविवार को यह महोत्सव सम्पन्न हुआ। मिती फाल्गुन सुदि ५ को स्थिरकीर्त्ति, भुवनकीर्त्ति मुनि व केवलप्रभा, हर्षप्रभा, जयप्रभा, यशःप्रभा साध्वियों को श्री जिनप्रबोध सूरिजी ने दीक्षित किया।

---

१. जिनप्रबोधसूरि बोलिका गा-१२ में—

जिणरयण सूरिहिं वित्थरेणय जस्स पयठवणू सावी
जावालिपुर वर मन रंगि निम्मिउ निय गुरुहिं आएसउ॥५॥

श्री जिनप्रबोधसूरि चतुःसप्ततिका में—

आवय तमभर दिणमणि नाणा जिण भवण हेमगिरि रुइरे।
आणंद कंद नीरे जावालिपुरंभि पुर पवरे॥४४॥
अ····दाय सालि भोयण कित्ती पीयूस जूस नियरेण।
आणंदिय सयल जणो मुणिराउ जिणेसरो सूरी॥४५॥

सं० १३३२ मिती जेठ बदि १ शुक्रवार के दिन श्री जावालिपुर में सर्व समुदाय के समक्ष महान् विस्तार से क्षेमसिंह श्रावक ने प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन किया, जिसमें नमि-विनमि सेवित श्री आदीश्वर भगवान, महावीर स्वामी, अवलोकन शिखर-श्री नेमिनाथ बिम्बों, शाम्ब-प्रद्युम्न प्रतिमा श्री जिनेश्वरसूरि मूर्त्ति, धनद यक्ष मूर्त्ति व स्वर्णगिरि श्री चन्द्रप्रभ स्वामी व वैजयन्ती की प्रतिष्ठा कराई। इस अवसर पर श्री योगिनीपुर-दिल्ली निवासी मंत्रिदलीय हरु श्रावक ने श्री नेमिनाथ स्वामी की, सा० हरिचन्द्र श्रावक ने श्री शान्तिनाथ भगवान की व अन्य श्रावकों ने भी बहुत से बिम्बों की प्रतिष्ठा करवाई। मिती ज्येष्ठ बदि ६ को सुवर्णगिरि पर श्री चन्द्रप्रभ स्वामी का ध्वजारोपण हुआ। ज्येष्ठ बदि ९ को स्तूप में श्री जिनेश्वरसूरिजी की मूर्त्ति स्थापित की गई। उसी दिन विमल-प्रज्ञ को उपाध्याय पद व राजतिलक मुनि को वाचनाचार्य पद से विभूषित किया गया। मिती ज्येष्ठ सुदि ३ को गच्छकीर्त्ति, चारित्रकीर्ति, क्षेमकीर्त्ति मुनि और लब्धिमाला, पुण्यमाला साध्वियों की दीक्षा सम्पन्न हुई।

सं० १३३३ माघ बदि १३ को श्री जावालिपुर में कुशलश्री गणिनी को प्रवर्त्तिनी पद से अलंकृत किया गया। इसी वर्ष सा० विमलचन्द्र सुत सा० क्षेमसिंह, सा० चाहड़ समायोजित मंत्रि देदा के पुत्र मंत्री महणसिंह के पृष्ठ रक्षक प्राग्भार से सा० क्षेमसिंह, सा० चाहड़, सा० हेमचन्द्र, सेठ हरिपाल योगिनीपुर वास्तव्य सा० वेणू के पुत्र पूर्णपाल, सौवर्णिक धांधल सुत सा० भीम व उपर्युक्त देदा के पुत्र मन्त्री महणसिंह प्रमुख समस्त विधि संघ के गाढ उपरोध से श्री शत्रुंजय महातीर्थ की यात्रा के हेतु मिती चैत्र बदि ५ को जावालिपुर से प्रस्थान हुआ। सद्गुरु श्री जिन प्रबोधसूरिजी महाराज के सानिध्य में श्री जिनरत्नाचार्य श्री लक्ष्मीतिलकोपाध्याय, श्री विमलप्रज्ञोपाध्याय, वा० पद्मदेव गणि वा० राजतिलक गणि आदि २७ साधु सेवित चरण कमल व प्र० ज्ञानमाला गणिनी, प्र० कुशलश्री, प्र० कल्याणऋद्धि प्रभृति २१ साध्वियों का परिवार साथ था। धर्म प्रभावना करते हुए श्री श्रीमालनगर के श्री शान्तिनाथ विधि-चैत्य में विधि संघ ने द्रम्म १४७४ सफल किये। पालनपुरादि में विस्तार से चैत्यप्रवाड़ी करके श्री तारंगाजी पहुंचे। सा० नींबदेव सुत सा० हेमा ने द्र० ११७४

सग्गं सादिउ कामो छत्तीस गुणेहिं आउहिंच
निउणं सरलं धीरं गम्भीरं पहु तुमं नाउं ॥४६॥

ससि[1] गज[3] गज[3] ससि[1] वरिसे आसोए किण्ह पंचमी दिवसे।
सपए संखेवेणं सय हत्थेणं ठविय तुरियं ॥४७॥

देकर इन्द्रपद लिया। इन्द्र के परिवार ने द्रम्म २१०० देकर मंत्री आदि पद ग्रहण किये। कलशादि सब मिलाकर विधि संघ ने—वहाँ द्रम्म ५२७४ व्यय किए। बीजापुर के वासुपूज्य विधि-चैत्य में माला ग्रहणादि द्वारा चार हजार द्रम्म सफल किये। श्री स्तंभन पार्श्वनाथ महातीर्थ में गोष्टिक क्षेमंधर के पुत्र यशोधवल ने ११७४ द्रम्म देकर इन्द्र पद लिया। इन्द्र परिवार ने २४०० द्रम्म देकर मंत्री आदि पद लिए। कलश आदि सब मिला कर बिधि संघ ने ७००० द्रम्म व्यय किए इसी प्रकार भरौंच में समुदाय ने ४७०० द्रम्म दिए।

श्री तीर्थाधिराज शत्रुञ्जय पहुंचने पर आदीश्वर भगवान के चैत्य में योगिनीपुर निवासी सा० पूनपाल ने ३२०० द्रम्म से इन्द्र पद व इन्द्र परिवार ने मंत्री पद आदि लिए। सेठ हरिपाल ने ४२०० द्रम्म व अन्य सब मिला कर तीर्थ के भण्डार में २५० द्रम्म दिए।

श्री जिनप्रबोधसूरिजी ने मिती जेठ बदि ७ को श्री आदीश्वर भगवान के समक्ष जीवानंद साधु एवं पुष्पमाला, यशोमाला, धर्ममाला, लक्ष्मीमाला को दीक्षित कर विस्तार पूर्वक मालारोपण आदि महोत्सव द्वारा विधि-मार्ग की प्रभावना की। श्रेयांसनाथ स्वामी के विधिचैत्य में द्रम्म ७०८ दिए।

श्री उज्जयन्त-गिरनार तीर्थ में सा० मूलिग सुत सा० कुमारपाल ने द्रम्म ७५० से इन्द्रपद लिया व इन्द्र परिवार ने २१५० द्रम्म से मंत्री आदि पद लिए।

वित्थरहि····अज्जिय जलहर पीयूष किरण रवि कित्ति।
विज्जा नई समुद्दं जिणरयण मुणिंद माइसिय ॥४८॥

नाणा राहण भूसण अणसणु सुगइं गइंद मारुढो।
सज्जाण सिल्ह हत्थो तक्खणि सग्गं सुहं पत्तो ॥४९॥ षड्भिःकुलकम् ॥

उब्भड़ कसाय रिउ भड थड विहडण गहिय विक्कम फलेहिं।
खित्तेसु दीन दुत्थिय सत्थे सुय विहधु दिंतेहिं ॥५०॥

दस दिसि मिलंत चउविह संघेहिं तित्थनाह सिन्नेहिं।
परिवरिओ मुणिराओ विहिणा जिणरयणसूरिवरो ॥५१॥

मुणिचक्कित्तो पहुत्त, सफग्गुण कसिणट्ठमीइ ठाविसु।
सयल जग सज्जणणं नयणा माणसुं परमायं च ॥ २॥ त्रिभिःकुलकम् ॥

सा० हेमचन्द्र ने अपनी माता राजू के लिए दो हजार द्रम्म देकर माला ग्रहण की। सब मिला कर श्री संघ ने वहां २३००० द्रम्म सफल किए।

इस प्रकार स्थान-स्थान पर प्रवचनादि धर्म प्रभावना द्वारा जन्म सफल करते विधि-संघ के साथ निर्विघ्न महातीर्थों की यात्रा करके श्री जिनप्रबोधसूरिजी आदि चतुर्विध संघ समन्वित सा० क्षेमसिंह ने मिती आषाढ़ सुदि १४ को देवालय सहित जावालिपुर में प्रवेश महोत्सव सम्पन्न किया।

संवत् १३३९ में अनेक नगर के संघों के साथ श्री जिनप्रबोधसूरिजी श्री जिनरत्नाचार्य, देवाचार्य, वाचनाचार्य विवेकसमुद्रादि मुनि-मण्डल परिवृत आबूजी की यात्रा करके जावालिपुर पधारे। समस्त संघ का प्रवेशोत्सव बड़े धूम-धाम से हुआ। इसी वर्ष ज्येष्ठ बदी ४ को जगच्चन्द्र मुनि, कुमुदलक्ष्मी, भुवनलक्ष्मी साध्वियों की दीक्षा हुई। पंचमी के दिन चन्दनसुन्दरी गणिनी को महत्तरा पद से विभूषित किया। उनका नाम चन्दनश्री हुआ। इसके बाद श्रीसोम महाराजा की वीनती से पूज्य श्री ने समियाणा में चातुर्मास किया। तत्पश्चात् महाराजा श्री कर्ण के सैन्य-परिवार सहित सामने आने पर सं० १३४० में फाल्गुन चौमासी पर जैसलमेर पधारे। अक्षय तृतीया को अष्टापद प्रासाद की बिम्ब व ध्वजादण्ड की प्रतिष्ठा में श्री जावालपुर का संघ भी सम्मिलित हुआ था।

भगवान महावीर के शासन की प्रभावना करने वाले श्री जिनप्रबोधसूरिजी महाराज के देह में दाहज्वर हो गया, तब आपने ध्यान बल से अपना आयु अल्प ज्ञात कर अविच्छिन्न प्रयाण से जावालिपुर पधारे। श्री महावीर स्वामी के महातीर्थ में समस्त लोगों के चित्त को चमत्कार पैदा करने वाले प्रवेशोत्सव में नाना प्रकार के वाजित्र, गीत-गान और धवल-मङ्गल पुराङ्गनाओं द्वारा नृत्य और दीन दुखियों को महादान देने का आयोजन था। सूरि महाराज ने अक्षय-तृतीया के दिन अपने पट्ट पर बड़े भारी महोत्सव पूर्वक श्रीजिनचन्द्रसूरि को स्थापित किया। इसी दिन राजशेखर गणि को वाचनाचार्य पर दिया। तदनन्तर वैशाख सुदि ८ को सकल संघ के साथ विस्तारपूर्वक मिथ्यादुष्कृत दिया और चढते हुए शुभ परिणामों में स्थिर रह कर भावना भाते हुए देव-गुरु के चरणों में सद्ज्ञान पूर्वक आराधना करते स्वमुख से पंच परमेष्टी महामंत्र उच्चारण करते हुए मिती बैशाख शुक्ल ११ को पूज्य सूरि महाराज श्री जिनप्रबोधसूरिजी स्वर्गवासी हुए।

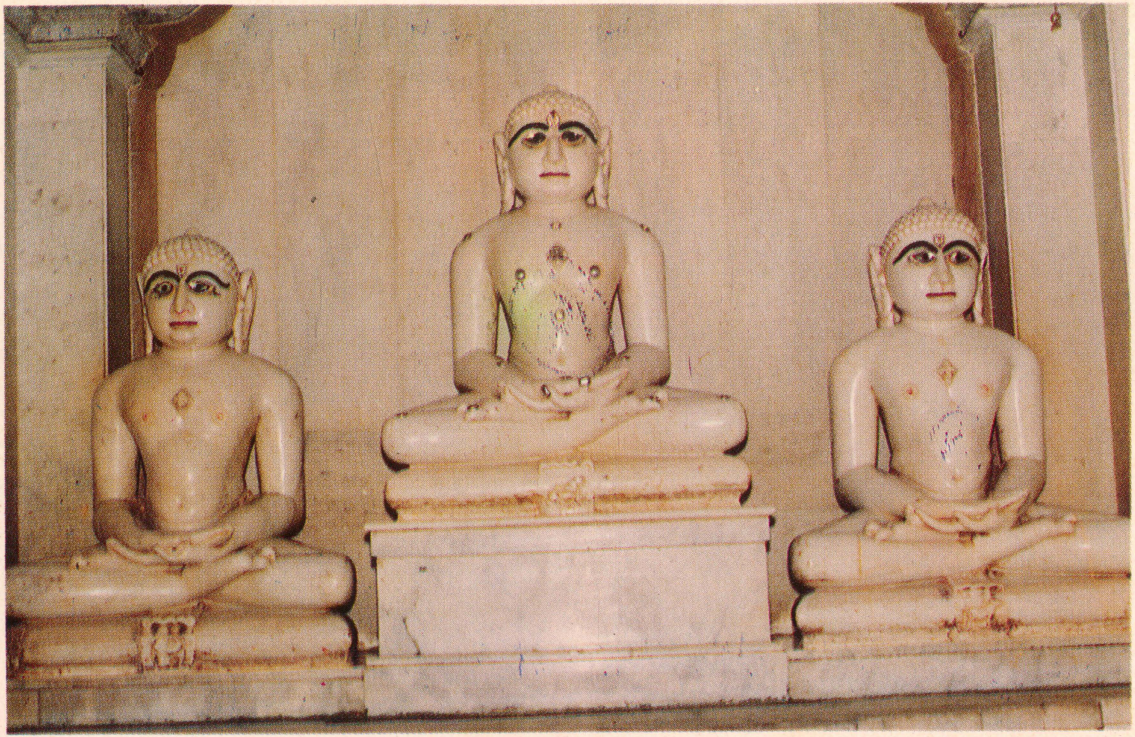

श्री महावीर स्वामी मन्दिर - स्वर्णगिरि, जालोर

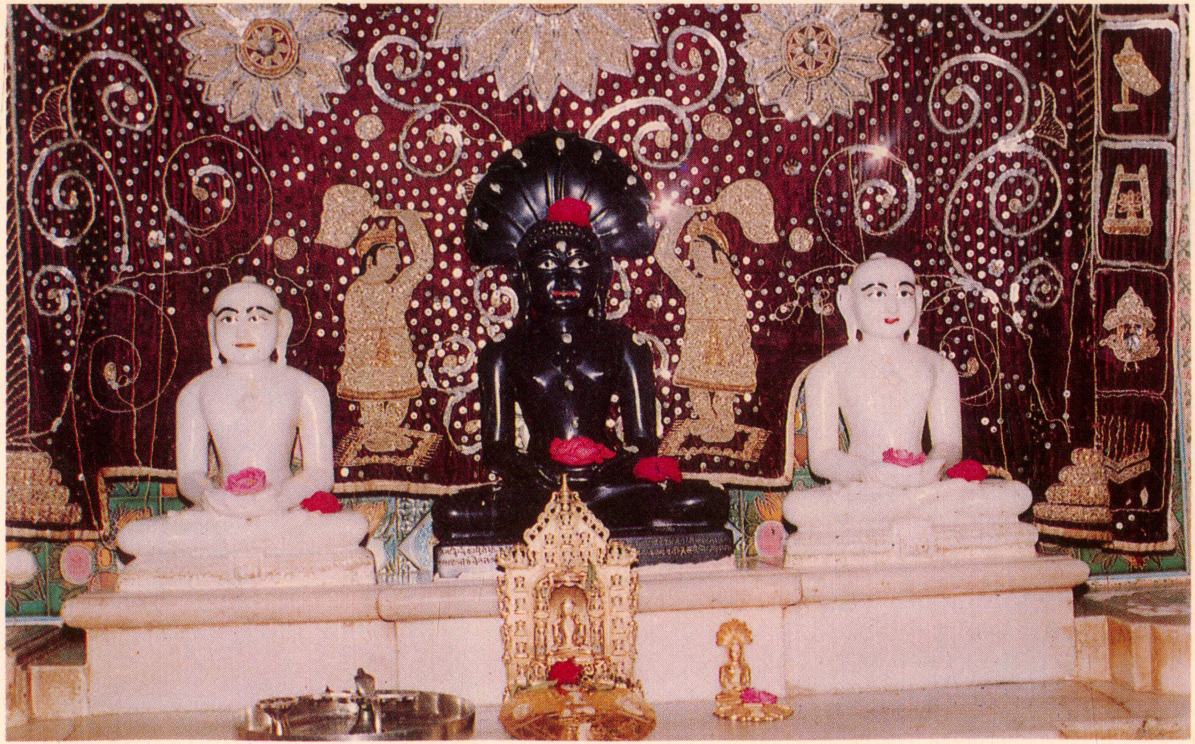

श्री गौड़ी पार्श्वनाथ मन्दिर, जालोर

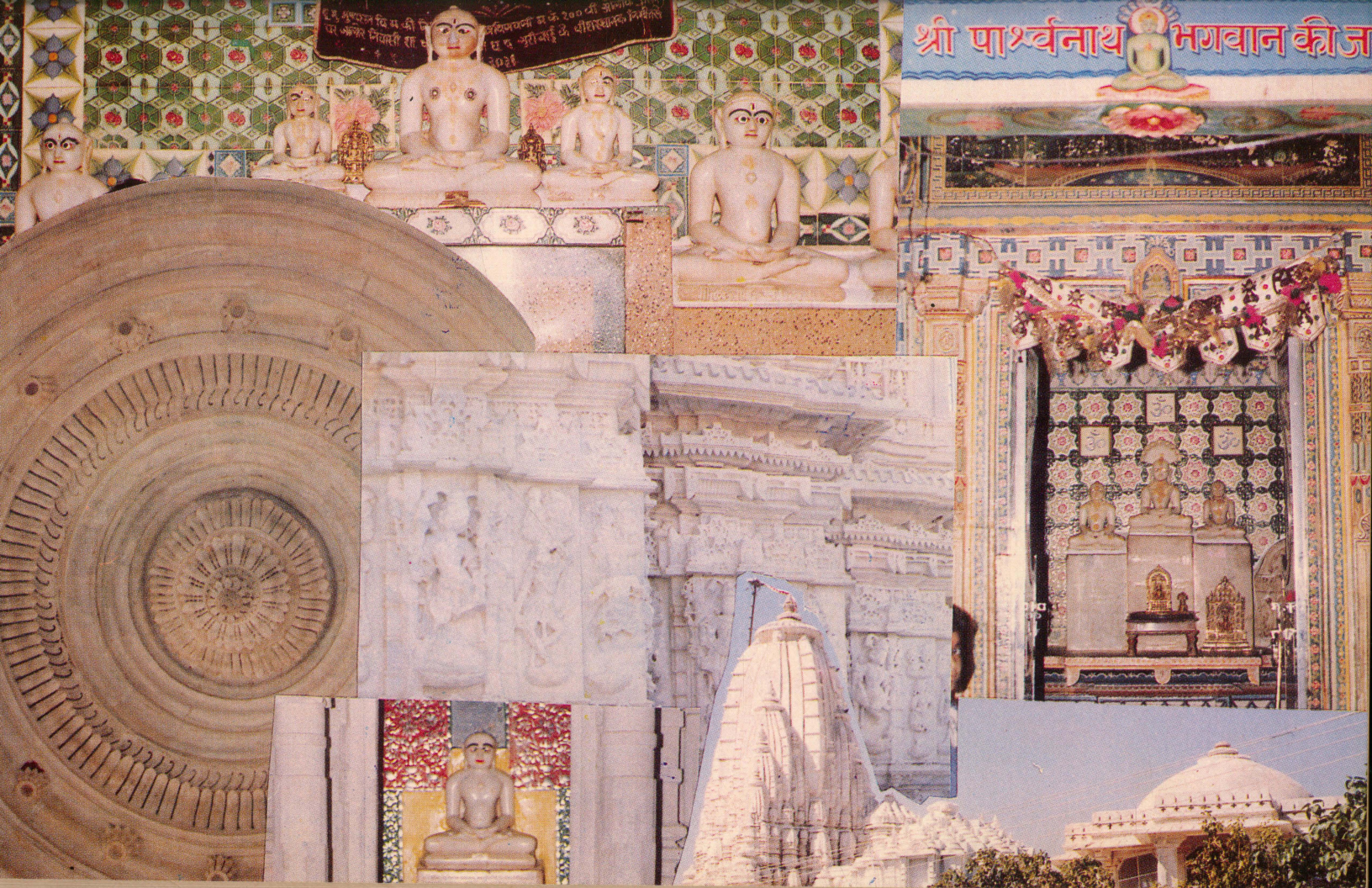
श्री पार्श्वनाथ भगवान की ज

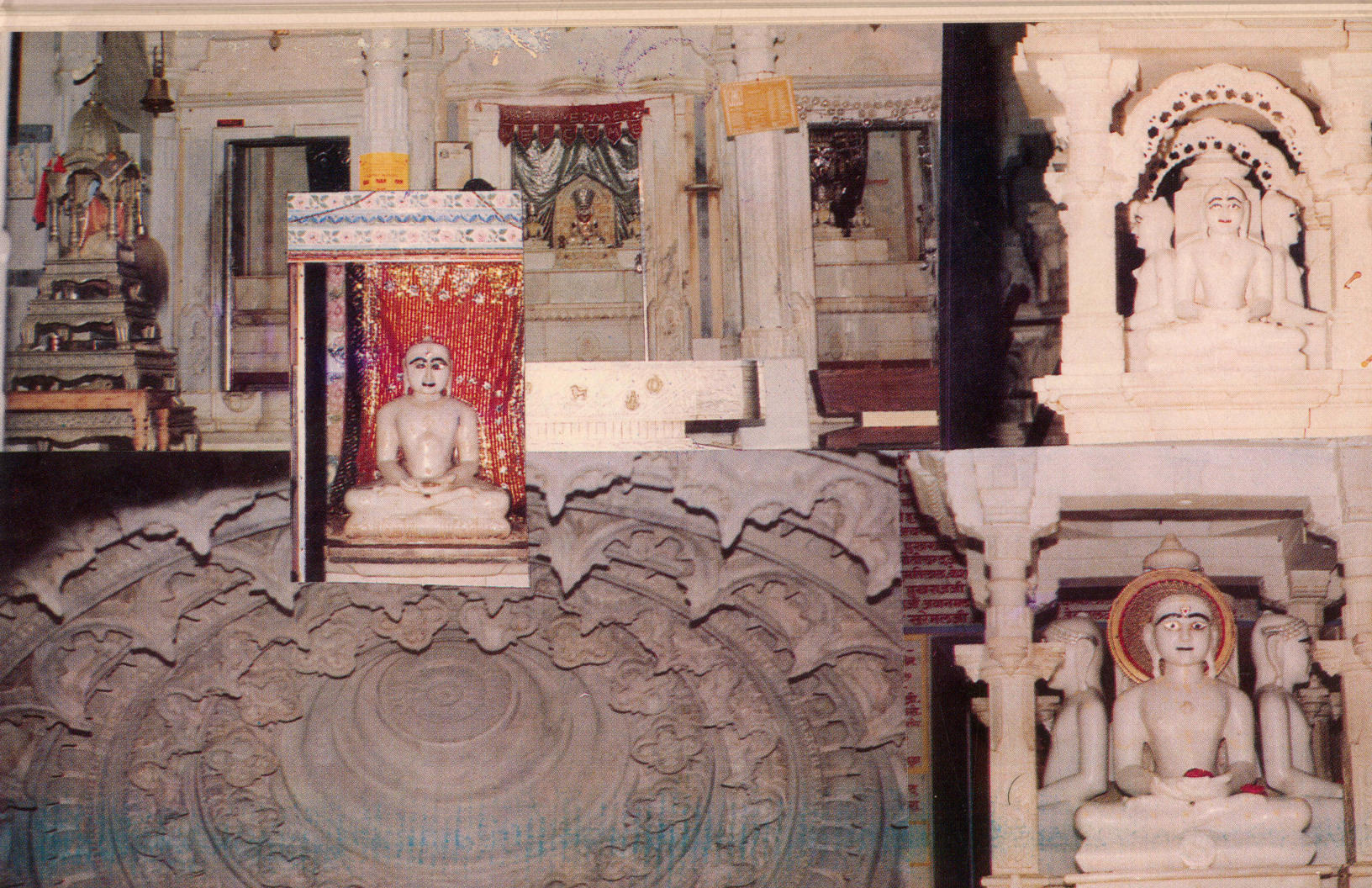

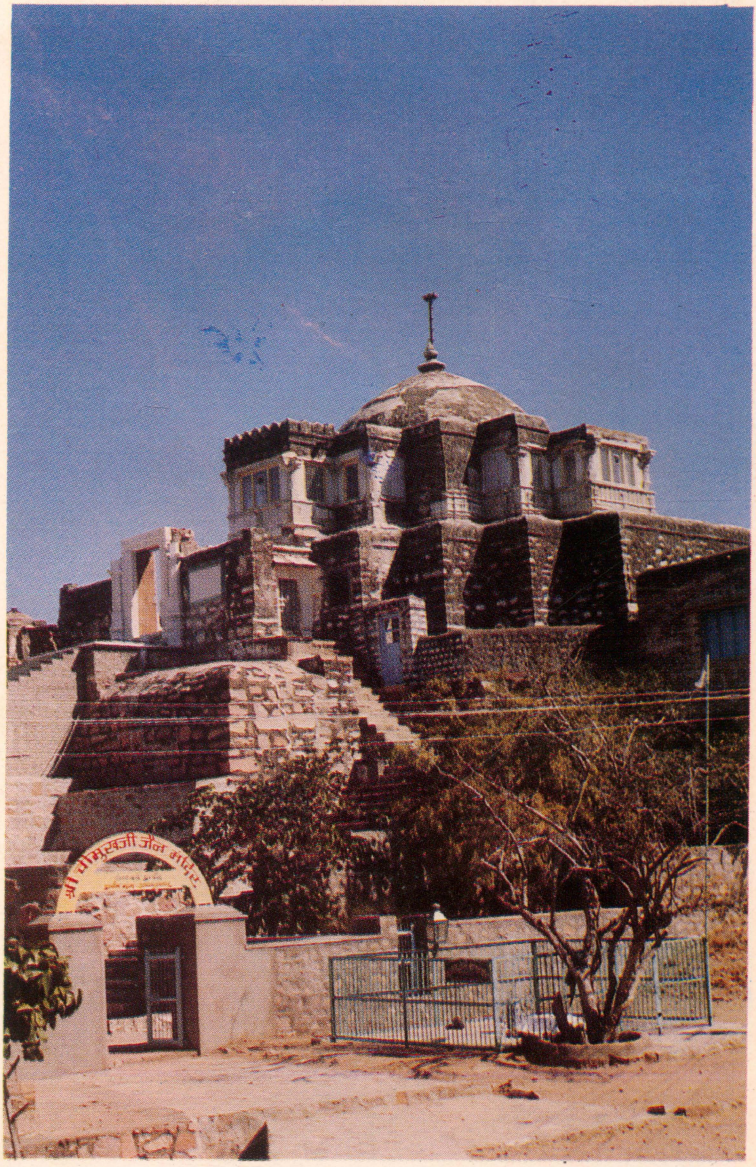

श्री चौमुखजी जैन मन्दिर स्वर्णगिरि दुर्ग, जालोर

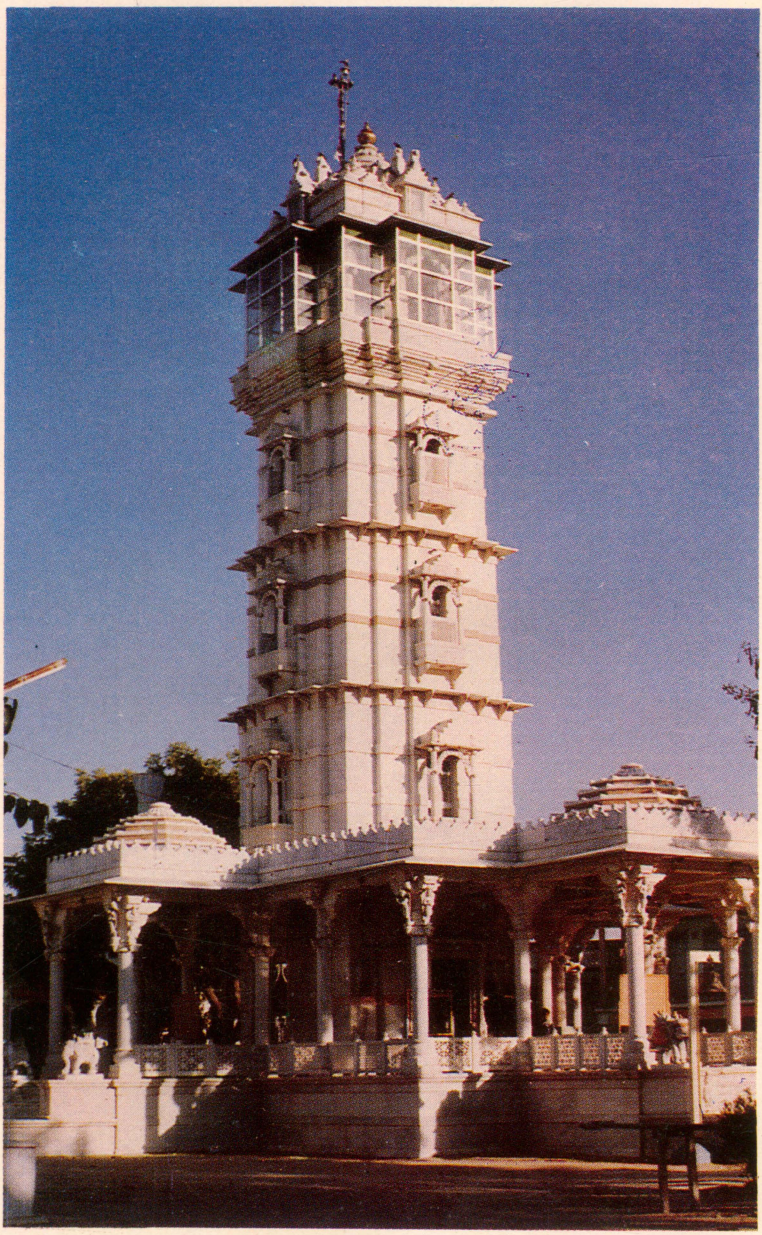

कीर्त्ति स्तम्भ - नन्दीश्वर तीर्थ, जालोर

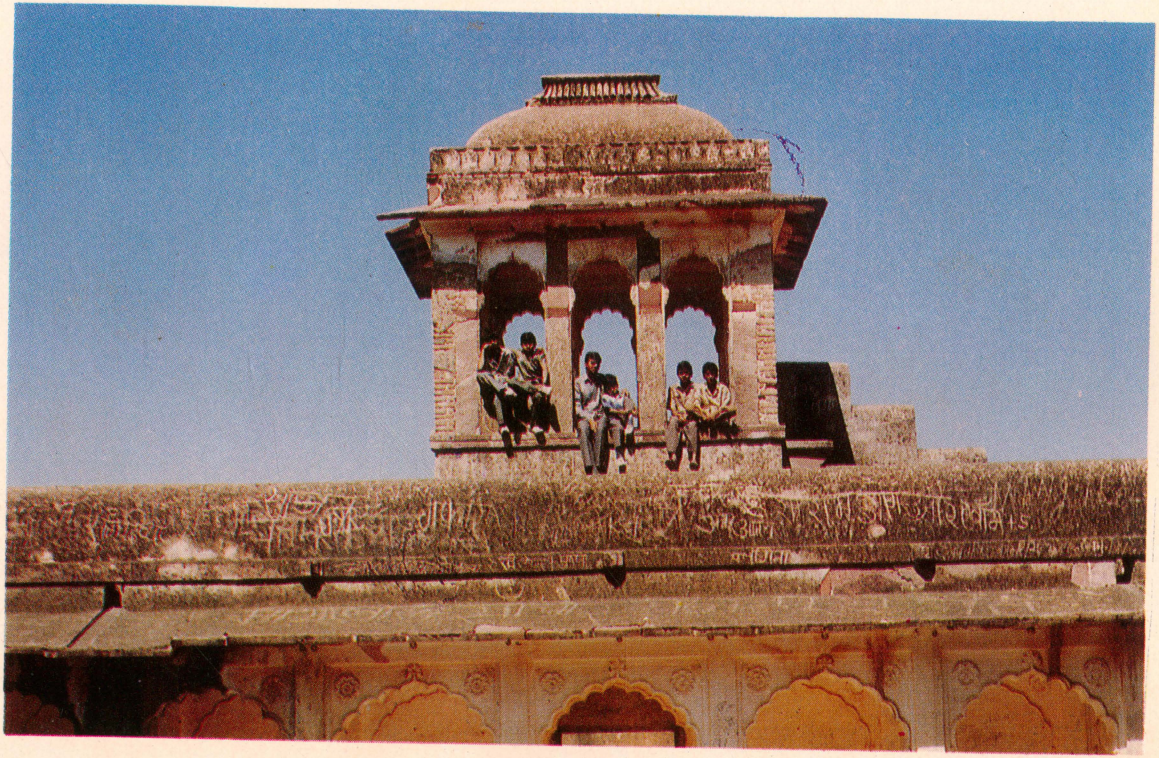

श्री स्वर्णगिरि महल, जालोर

श्री स्वर्णगिरि, जालोर

श्री जिनचन्द्रसूरि[1]

सं० १३४२ मिती बैशाख शुक्ल १० के दिन जावालिपुर में श्री महावीर स्वामी के विधि चैत्य में श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराज ने महा महोत्सव पूर्वक प्रीतिचन्द्र, सुखकीर्त्ति नामक क्षुल्लक द्वय व जयमंजरी, रत्नमञ्जरी, शील-मञ्जरी नामक क्षुल्लिका त्रय दीक्षित की। उसी दिन वाचनाचार्य विवेकसमुद्र गणि को अभिषेक पद, सर्वराज गणि को वाचनाचार्य पद, बुद्धिसमृद्धि गणिनो को प्रवर्त्तिनी पद से विभूषित किया। सप्तमी के दिन सम्यक्त्व ग्रहण, मालारोपण, सामायकारोप अदि नन्दि-महोत्सव किए गए।

मिती ज्येष्ठ बदि ९ को सेठ क्षेमसिंह द्वारा निर्मापित श्री अजितनाथ स्वामी की २७ अंगुल प्रमाण की रत्नमय प्रतिमा, ऋषभदेव, नेमिनाथ और पार्श्वनाथ प्रतिमाओं की तथा मंत्री देदा कारित युगादिदेव, नेमिनाथ, श्री पार्श्वनाथ बिम्बों

---

१. देधाकुलि सिरि देवराउ मंती सुपसिद्धउ
कामलदेवि कलत्तु तासु सोलिण सुसमिद्धउ
ताण पुत्त सिरिखंभराउ बालुवि गुणसायरु
लइय दिक्ख गुरु पासि सिक्खइ सिक्ख करि आयरु
जावालिनयरि वीरह भुवणि जिणपबोह गुरु चक्कवइ
जिणचंदसूरि तसुनामु धुरि गुरु उच्छवि नियपइ ठवइ ॥४१॥ [षट्पद में]

श्री जिनकुशलसूरिजी कृत "श्री जिनचन्द्रसूरि चतुःसप्ततिका" में श्री जिनप्रबोधसूरिजी के पट्ट पर इन्हें अभिषिक्त करने का वर्णन इस प्रकार हैं—

जुगवर नव नवुच्छव पवरे, जावालिपुरवरे पत्तो।
सिरिजिणपबोह गुरुणो, वंदिय गुरु विबुह कम कमला ॥३०॥

तत्थ सिरि वीर विहि चेइयंमि सुरवइ विमल तुल्लंमि।
तेरहसय इगयाले (१३४१) वइसाह सुद्ध तीयंमि ॥३१॥

सिरि जिणपबोह गुरुणा, निय हत्थेणं स गच्छ भार धुरा।
गुरु रयणाणं तुम्हाण, संठविया संघ पच्चक्खं ॥३२॥

मंति कुल कमल दिणयर, नाणा मइ रयण रोहण गिरिस्स।
तुह सूर मंत जा सो, गुरु राएहिं कओ ठाणे ॥३३॥

जिण तुल्ल रूव तिहुयण, आणिंदण चंद चंदिमा पडिम।
सिरि जिणचंद मुणीसर, इइ नामं देइ तुम्ह गुरु ॥३४॥

की ; भाण्डागारिक छाहड़ कारित श्री शान्तिनाथ स्वामी के महत्तम बिम्ब की, वैद्य देहड़ि कारित अष्टापद ध्वजा-दण्ड की तथा अन्य भी बहुत से जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा बड़े विस्तार से श्री सामन्तसिंह महाराजा के विजयराज्य में की। यह प्रतिष्ठा महोत्सव श्री जिनचन्द्रसूरिजी के कर कमलों से सब के चित्त को चमत्कार पैदा करने वाला और पापनाशक था। प्रसन्न चित्त महाराजा श्री सामन्तसिंह के सानिध्य से सकल स्वपक्ष-परपक्ष आह्लादकारी व विधिमार्ग प्रभावक प्रचुर द्रव्य व्यय से इन्द्र महोत्सवादि सम्पन्न हुये। मित्ती ज्येष्ठ बदि ११ को वा० देव-मूर्त्ति गणि को अभिषेक पद व मालारोपण-नन्दिमहोत्सवादि हुए।

संवत् १३४४ मिती मार्गशीर्ष सुदि १० को महावीर विधि चैत्य में सा० *कुमारपाल के पुत्र पं० स्थिरकीर्त्ति गणि को श्री जिनचन्द्रसूरिजी* ने आचार्य पद देकर श्री दिवाकराचार्य नाम से प्रसिद्ध किया।

संवत् १३४५ आषाढ़ सुदि ३ को मतिचन्द्र और धर्मकीर्त्ति की दीक्षा हुई। बैशाख बदी १ को पुण्यतिलक, भुवनतिलक और चारित्रलक्ष्मी साध्वी की दीक्षा हुई। राजदर्शन गणि को वाचनाचार्य पद से विभूषित किया।

सं० १३४६ माघ बदि १ को सा० क्षेमसिंह भा० बाहड़ द्वारा कारित सुवर्णगिरि के श्री चन्द्रप्रभ जिनालय के पास आदिनाथ नेमिनाथ बिम्बों को मण्डप के खत्तक में व समेतशिखर के २० बिम्बों का स्थापना महोत्सव हुआ।

श्री जिनप्रबोधसूरि जी के स्तूप में मूर्त्ति की स्थापना व ध्वज-दण्डारोपण महोत्सव सा० अभयचंद द्वारा किया गया। इनकी प्रतिष्ठा बैशाख सुदि ७ को हुई थी व निर्माण भी सा० अभयचंद ने करवाया था।

सं० १३४९ मिती भाद्रपद कृष्ण ८ को साधर्मिक सत्राकार संघपुरुष सा० अभयचन्द्र सुश्रावक की संस्तारक दीक्षा हुई, इनका नाम अभयशेखर रखा गया।

श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराज सं० १३५३ का चातुर्मास बीजापुर करके जावालिपुर संघ की विनती से विहार करके पधारे। अनेक नगरों के संघ एकत्र होने पर चैत्य परिपाटी आदि महामहोत्सवपूर्वक वैशाख बदि ५ को जावालिपुर से प्रस्थान करके बहुत सी मुनि मण्डली व चतुर्विध संघ सहित आबू तीर्थ की यात्रार्थ पधारें। विधिमार्ग संघ ने इन्द्र पद, स्नात्र, ध्वजारोपादि महोत्सवों के उद्देश्य से बारह हजार द्रम्म सफल किये। इसके बाद कुशलपूर्वक संघ

जावालिपुर लौटा और विस्तारपूर्वक प्रवेशोत्सव हुआ। इसमें सा० सलखण श्रावक के पुत्ररत्न सा० सीहा का अच्छा योगदान रहा।

सं० १३५४ मिती ज्येष्ठ बदि १० को जावालिपुर में श्री महावीर विधि चैत्य में सा० सलखण के पुत्र सा० सीहा की ओर से दीक्षा-मालारोपणादि महोत्सव आयोजित हुए, जिसमें वीरचन्द्र, उदयचन्द्र, अमृतचन्द्र साधु और जयसुन्दरी साध्वी की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई।

सं० १३६१ में पूज्य श्री ने शम्यानयन (सिवाणा) के शान्तिनाथ विधि चैत्य में प्रतिष्ठा महोत्सव कराया जिसमें जावालिपुरीय संघ भी सम्मिलित हुआ था।

जावालिपुरीय संघ की अभ्यर्थना से श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने पधारकर भगवान महावीर को वन्दन किया। संवत् १३६४ वैशाख कृष्ण १३ को मं० भुवनसिंह, सा० सुभट, मं० नयनसिंह, मं० दुसाज मं० भोजराज और सा० सीहा आदि समस्त सघ के प्रोत्साहन से पूज्य श्री ने राजगृहादि महातीर्थों को नमस्कार करके आने पर वा० राजशेखर गणि को आचार्य पद से विभूषित किया गया।

सं० १३६७ में श्री जिनचन्द्रसूरिजी के तत्वावधान में भीमपल्ली से शत्रुंजयादि तीर्थ-यात्रा के हेतु महान् संघ निकला, जिसमें जावालिपुर का संघ भी सम्मिलित हुआ था और यहाँ के प्रधान महाजन सा० देवसीह सुत सा० थाणलनन्दन सा० कुलचन्द्र, सा० देदा सुश्रावकों ने दोनों महातीर्थों पर इन्द्र पद आदि ग्रहण कर प्रचुर द्रव्य सार्थक किया था।

सं० १३७१ में श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराज श्री संघ की गाढ अभ्यर्थना से जावालिपुर पधारे और मिती ज्येष्ठ बदि १० को मं० भोजराज, देवसिंह आदि समस्त संघ द्वारा दीक्षा-मालारोपण-नन्दी महोत्सव आदि का समारोह आयोजित हुआ। देवेन्द्रदत्त मुनि, पुष्यदत्त, ज्ञानदत्त और चारुदत्त मुनि तथा पुण्यलक्ष्मी, ज्ञानलक्ष्मी, कमललक्ष्मी, मतिलक्ष्मी साध्वियों को भागवती दीक्षा प्रदान की।

इसके बाद जावालिपुर में म्लेच्छों द्वारा भंग हुआ।

श्री जिनकुशलसूरि

सं० १३८० में योगिनीपुर-दिल्ली के संघपति रयपति का संघ श्रीजिन-कुशलसूरिजी महाराज के नेतृत्व में शत्रुञ्जय महातीर्थ गया। वह विशाल संघ जावालिपुर आया और उसका राजलोक-नागरिक लोगों ने आडम्बर पूर्वक नगर

प्रवेश कराया एवं चैत्य-परिपाटी प्रभावनादि श्री संघ ने की। सा० महिराज आदि स्थानीय लोग यात्री-संघ में सम्मिलित हुए।

सं० १३८१ में पत्तन में श्री जिनकुशलसूरिजी ने विशाल प्रतिष्ठा कराई थी जिसमें जावालिपुर के मंत्री भोजराज पुत्र मं० सलखणसिंह रंगाचार्य लक्षण आदि सम्मिलित हुए। इनमें जावालिपुर के लिए श्री महावीर स्वामी आदि प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा हुई थी। उसी वर्ष फिर भीमपल्ली से विशाल यात्री संघ निकाला जिसमें जावालिपुर वास्तव्य सा० पूर्णचन्द्र सा० सहजा आदि सम्मिलित हुए थे।

सं० १३८३ में जावालिपुर संघ की बीनती से श्री जिनकुशलसूरिजी महाराज बाहड़मेर से विहार कर लवणखेटक, सम्यानयन होते हुए जालोर पधारे। यहां का संघ नाना प्रकार के उत्सव करने को प्रस्तुत था और सूरिजी का प्रवेशोत्सव बड़े समारोहपूर्वक कराया। तीर्थाधिराज श्री महावीर प्रभु के चरणों में वन्दन किया। मंत्रीश्वर कुलधर के पुत्र मं० भोजराज के पुत्र मं० सलखणसिंह सा० चाहड़ पुत्र सा० झांझण प्रमुख संघ की वीनति से नाना नगरों के संघ की उपस्थिति में महान् उत्सवों का प्रारम्भ हुआ। दश-पन्द्रह दिन पहले से दीक्षार्थियों के उत्सव, ताल्हारास, स्वर्ण-रजत-वस्त्र-अन्न दान, गीत-गान संघ पूजा स्वधर्मीवात्सल्यादि के साथ साथ अमारि उद्घोषणा द्वारा नाना धार्मिक प्रभावना के कार्य सम्पन्न हुए। सं० १३८३ फाल्गुन बदि ९ के दिन प्रतिष्ठा, व्रतग्रहण, मालारोपण, सम्यक्त्वारोप, नन्दी महोत्सवादि विधान हिन्दु-मुस्लिम सबके चित्त को चमत्कृत करने वाले निर्विघ्न सम्पन्न हुए। राजगृह महातीर्थ के वैभारगिरि पर स्थापनार्थ ठ० प्रतापसिंह के पुत्र ठ० अचल कारित चतुर्विंशति जिनालय के मूलनायक योग्य महावीर स्वामी आदि की अनेक पाषाण व धातु निर्मित प्रतिमाएं, गुरुमूर्त्तियाँ व अधिष्ठायकादि की प्रतिष्ठा हुई। न्यायकीर्त्ति, ललितकीर्त्ति, सोमकीर्त्ति, अमरकीर्त्ति, नमिकीर्त्ति, देवकीर्त्ति-६ मुनियों को दीक्षित किया। अनेक श्रावक-श्राविकाओं ने माला, सम्यक्त्वादि व्रत, द्वादश व्रत अङ्गीकार किए।

युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के प्रताप से हमें जालोर के इतिहास सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण इतनी जानकारी मिल सकी है इसके पश्चात् कोई व्यवस्थित इतिहास उपलब्ध नहीं है।

श्री जिनभद्रसूरिजी महाराज एक महान् प्रभावक आचार्य हुए हैं जिन्होंने जैसलमेर आदि अनेक स्थानों में ज्ञान भण्डार स्थापित किए थे। श्री समय-

सुन्दरोपाध्याय कृत अष्टलक्षी प्रशस्ति के अनुसार उन्होंने जावालिपुर-जालोर में भी ज्ञान-भण्डार स्थापित किया था। यतः—

श्री मज्जेसलमेरु दुर्ग नगरे जावालपुर्यां तथा
श्री मद्देवगिरौ तथा अहिपुरे श्री पत्तने पत्तने
भाण्डागार मबी भरद् वरतरैं नानाविधैः पुस्तकैः
स श्री मज्जिनभद्रसूरि सुगुरु र्भाग्याद्भुतोऽभूद्भुवि ॥२१॥

युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि

विहार पत्र के अनुसार श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने सं० १६४१ में जालोर में चातुर्मास किया था और प्रतिपक्षियों से शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त की थी।

इसी वर्ष श्री जिनचन्द्रसूरिजी के सान्निध्य में जालोर से आबू तीर्थ की यात्रा के हेतु संघ निकला था। जिसके वर्णन स्वरूप 'अर्बुदतीर्थ चैत्य परिपाटी' (गा-२१) में कवि लब्धिकल्लोल ने लिखा है कि—

भगवान पार्श्वनाथ को वन्दन कर जालोर का संघ युगप्रधान श्री जिनचन्द्र-सूरिजी के साथ आबू यात्रा के लिए चला जिसका संक्षिप्त वर्णन करते हुए कवि लिखता है कि— सर्वप्रथम ऋषभदेव, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर भगवान ने पांचों जिनालयों को वन्दन कर दादा साहब श्री जिनकुशल-सूरिजी के चरण कमलों में नमस्कार कर संघ ने प्रयाण किया। पहले सुविधिनाथ जिन फिर उडू गाँव में, गोहली में, सीरोही में आदिनाथादि ७ जिनालय, संघणोद, हम्मीरपुर, सीरोढी, पालडी हणाद्रपुर, के जिनालयों को वन्दन कर क्रमशः देवलवाड़ा पहुँचे। वहाँ विमलवसही, लूणिगवसई श्रीमावसही, मंडलीक (खरतर) वसही और हुम्बड़ वसही की यात्रा करके अचलगढ गए। वरराध विहार में शान्तिनाथ भगवान और युगप्रवर श्री कीर्त्तिरत्नसूरिजी (की प्रतिमा) को वन्दन किया। सहसा के चौमुख प्रासाद में आदिनाथ, तीसरे मन्दिर में कुन्थुनाथ प्रभु को वन्दन किया। ओरीसइ में महावीर भगवान की यात्रा कर लौटते हुए फिर हणाद्रा, वेलांगिरि, कालन्द्री होकर कुशलक्षेम पूर्वक अपने घर सोवनगिरि-जालोर पहुंचे। (युगप्रधान जिनचन्द्रसूरिजी गुजराती पृ० ३०५)

सम्राट अकबर के आमन्त्रण से खंभात से लाहौर जाते हुए सं० १६४८ का चातुर्मास अकबर के वचनानुसार जालोर में बिताया जिसका वर्णन श्री सुमति कल्लोल कृत गीत में इस प्रकार है—

"गुरु जालउरि पधारिया, तिहां किणि रहचा चउमासि।
श्रीजी नइ वचनइ करी, पूरइ भवियणरे २ मन केरी आसकि ॥६॥"

कविवर समयसुन्दर कृत अष्टक में—
"एजी गुजंरतें गुरूराज चले, विच में चौमास जालोर रहे"

श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास में—
सोवनगिरि श्री संघ आवउ, उच्छव कर गुरू वंदिया
× × × ×
गुरू संघ श्री जावालपुर नइ, वेगि पहुंता पारणइ।
अति उच्छव कीयउ साह वन्नइ, सुजस लीधउ तिणि खणइ ॥६६॥

कवि कुशललाभ कृत संघपति सोमजी के संघ यात्रा स्तवन में जालोर के संघ-के सम्मिलित होने का उल्लेख है। यह स्तवन गा० ७५ का अपूर्ण है जिसका सार जैन सत्यप्रकाश वर्ष १८ अंक ३ में प्रकाशित है।

साधुकीर्त्ति उपाध्याय

सुप्रसिद्ध विद्वान उपाध्याय साधुकीर्त्ति जी ने जालोर में विचरण किया था। सं० १६४६ में आप का यहीं पर स्वर्गवास हुआ था। श्री जयनिधान कृत साधुकीर्त्ति गुरु स्वर्गगमन गीत में :—

गाम नगर पुरि विहरी महीयलइं, पड़िबोही जन वृन्दोजी।
सोल छयालइ आया संवतइ, पुरि जालोर मुणिंदोजी ॥५॥

माह बहुल पखि अणसण उच्चरि, आणी नियमन ठामोजी।
..... ॥६॥

आउ पूरी चउवसि दिम मलइ, पहुता तब सुरलोक जी।
थूंभ अपूर्व कियउ गुरु तणउ प्रणमीजइ बहुलोक जी ॥७॥

श्री जिनसागरसूरि

श्री धर्मकीर्त्तिकृत जिनसागरसूरि रास में :—
जालउरइ आवइ गच्छराज, बाजित्र वाजइ बहुत दिवाज।
श्री संघ सुं वंदइ कामिनी, रूपइ जोती सुर भामिनी ॥६३॥
× × × ×
साधु विहारइ पग भरइए, सोवनगिरइ अहिठाण।
श्री संघ उच्छव नितकरइए, अवसरनउ जे जाण ॥९६॥

कवि सुमतिवल्लभ कृत जिनसागरसूरि रास में :—

बीलाड़ा मइं संघवी कटारियाजी, जइतारण जालोर।
पचियाख पालणपुर भुज सूरतमइजी, दिल्ली नइ लाहोर ॥६॥

कविवर समयसुन्दरोपाध्याय कृत जिनसागरसूरि अष्टक में—

"श्री जावालपुरे च योधनगरे श्री नागपुर्य्यां पुनः
श्री मल्लाभपुरे च वीरमपुरे, श्री सत्यपुर्यामपि ॥"

श्री जिनरत्नसूरि

ये श्री जिनराजसूरि के पट्टधर थे। श्री जिनरत्नसूरि निर्वाण रास में इनके जालोर पधारने पर सेठ पीथा द्वारा प्रवेशोत्सव कराये जाने का उल्लेख इस प्रकार है :—

सोवनगिरि श्रीसंघ आग्रहि, आविया गणधार रे।
पइसारउछब सबल कीधउ सी (से)ठ पीथइ सार रे ॥३॥

संघ नइ वंदावि सुपरइ, पूज्यजी पटधार रे।
विचरता मरुधर देश मांहे, साधु नइ परिवार रे ॥४॥

ज्ञानमूर्त्ति—सं० १६८८ में खरतर गच्छीय श्री ज्ञानमूर्त्ति मुनि जालोर में विचरे थे और मिती फाल्गुन शुक्ल १४ को जिनराजसूरि कृत शालिभद्र चौपाई की प्रति लिखी जो पत्र २४ की प्रति सूरत के वकील डाह्याभाई के संग्रह में है।

युग प्रधानाचार्य गुर्वावली के व्यवस्थित वर्णन में हम देख चुके हैं कि जालोर के मन्त्री, श्रेष्ठि आदि सैकड़ों वैराग्य रंजित धर्मात्माओं ने भागवती दीक्षा स्वीकार की है और यहाँ के संघ ने तदुपलक्ष में महोत्सव आयोजित कर अपनी चपला लक्ष्मी का उन्मुक्त सदुपयोग किया है। उसके पश्चात् इतिहास अप्राप्त है पर इतना तो सहज ही माना जा सकता है कि यह परम्परा अवश्य ही चालू रही है। जयपुर वाले श्री पूज्यों के दफ्तर में जालोर में जो साधु-यतिजन की दीक्षाओं का उल्लेख है उसे यहाँ उद्धृत किया जाता है—

श्री जिनसुखसूरिजी ने सं० १७७० माघ बदि १२ को जालोर में पं० कर्मचन्द्र को दीक्षा देकर पं० कीर्तिजय नाम से पं० दयासार के शिष्य रूप में प्रसिद्ध किया था।

श्री जिनभक्तिसूरिजी ने सं० १७९३ मिती पोष सुदि १५ बुधवार के दिन जालोर में "सौभाग्य" नन्दि (नामान्त पद) प्रवर्त्तित कर निम्नोक्त ७ दीक्षा देकर भिन्न-भिन्न उपाध्याय, वाचकादि के शिष्य रूप में प्रसिद्ध किये थे—

दीक्षार्थी	दीक्षानाम	गुरुनाम
पं० कुशलौ	कुशलसौभाग्य	वा० अमरमूर्त्ति
पं० हीरौ	हितसौभाग्य	पं० जयसुख
पं० यशौ	युक्तिसौभाग्य	पं० अभयराज
पं० लालौ	लक्ष्मीसौभाग्य	उ० क्षमाप्रमोद
पं० आत्माराम	अभयसौभाग्य	पं० अभयसुन्दर
पं० कानौ	कनकसौभाग्य	पं० हेमविजय
पं० जयकरण	जगतसौभाग्य	पं० अभयराज

इसी 'नंदि' में भादवा सुदि २ को पं० हेमा को दीक्षित कर हर्षसौभाग्य नाम से पं० चारित्रहंस के शिष्य रूप में प्रसिद्ध किया था।

श्री पूज्य श्री जिनमहेन्द्रसूरिजी ने सं० १९०२ में जालोर में निम्नोक्त ३ दीक्षाएं दी।

पं० शोभाचन्द	सुखकीर्त्ति	म० श्री हितप्रमोद गणे पौत्रः	(क्षेम शाखा)
पं० श्रीचन्द	सदाकीर्त्ति	,,	,,
पं० विरधौ	विनयकीर्त्ति	,,	,,

श्री पूज्य श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने सं० १९७७ चैत्रकृष्ण ९ शुक्रवार को जालोर दुर्ग में पं० वीरा को दीक्षा देकर पं० विवेकरत्न मुनि नाम से क्षेम शाखा के पं० प्र० पुण्यराज गणि के शिष्य और पं० उदयलाभ गणि के प्रशिष्य रूप में प्रसिद्ध किया था। इन दोनों श्री पूज्यों के उपर्युक्त दीक्षा विवरण से ज्ञात होता है कि जालोर में उनके आदेशी क्षेमशाखा के यतिजन रहते थे।

इसी प्रकार खरतर गच्छ की आचार्य शाखा में सं० १७७४ मिति पोष सुदि १३ को जालोर में पं० जग्गा को दीक्षित कर पं० विनयशील नाम से प्रसिद्ध किये जाने का उल्लेख मिला है।

श्री जिनहर्षसूरि

सं० १८६३ का चौमासा श्री जिनहर्षसूरिजी ने जालोर में किया था। श्री पूज्यजी के दफ्तर में खानपुरा आदि मुहल्लों के अधिवासी लूणिया, डोसी,

पारख, वछावत, सेठिया मोदी, संखवालेचा गोत्रीय कितने तत्कालीन श्रावकों के नाम भी हैं।

इसी वर्ष फाल्गुन सुदि १२ के श्री गौड़ी पार्श्वनाथ जिनालय (जालोर दुर्ग) के अभिलेख में महाराजाधिराज मानसिंह और महाराजकुमार छत्र सिंह के विजय राज्य में वन्दा मुंहता अखयचन्द्र लक्ष्मीचन्द, द्वारा प्रासाद निर्माण और भट्टारक श्री जिनहर्षसूरिजी द्वारा प्रतिष्ठित होने का उल्लेख है।

युग प्रधानाचार्य गुर्वावली के विशद वर्णन में हम देख चुके हैं कि जालोर स्वर्णगिरि में अनेक बार मन्दिरों, देहरियों, प्रतिमाओं आदि की सैकड़ों की संख्या में प्रतिष्ठा हुई है। यहाँ प्रारम्भ से ही खरतर गच्छ का प्रभाव सर्वाधिक रहा है। प्राचीन साहित्य में जालोर को विधिमार्ग रूपी कमल का सरोवर बतलाया गया है। यहाँ श्री जिनेश्वरसूरि, श्री जिनप्रबोधसूरि आदि अनेक महान् पूज्य पुरुषों का स्वर्गवास हुआ है और उनकी प्रतिमाएं, स्तूप-चरण आदि की प्रतिष्ठाएं हुई जिनका वर्णन हम आगे कर चुके हैं। काल की कराल गति से स्वर्णगिरि की हजारों इमारतें, बहुत से प्राचीनतम मन्दिरादि ध्वस्त कर भूमिसात् कर दिए गए जिनका नाम निशान भी नहीं रहा तो उन सबका अस्तित्व समाप्त होना स्वाभाविक था। सतरहवीं शताब्दी से फिर स्वर्णगिरि के मन्दिरों का जीर्णोद्धारादि हुआ और उनके चरण-स्तूपादि स्थापित हुए। सतरहवीं शताब्दी में यहाँ दादा साहब के स्तूप चरणादि होने के उल्लेख फिर मिलते हैं। आज खरतरावास के मन्दिर में दादा साहब के चरण-छतरी है। स्वतंत्र दादावाड़ी की खोज आवश्यक है जिसका अस्तित्व निम्नोक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है।

१. राजसमुद्र कृत स्तवन में स्वर्णगिरि पर दादा स्तुंभ का उल्लेख—

जी हो वीरमपुर सोवनगिरे दादा योधपुरे विलसंत।

२. राजसागर कृत गा० ९ के दादा स्तवन में—

अरे लाल जोधपुरै नै मेडतै, जैतारण ने नागोर रे लाल।
सोजत नै पालीपुरे, जालोर श्री साचोर रे लाल ॥४॥

३. राजहर्ष कृत श्री जिनकुशल सूरि अष्टोत्तर शत स्थाने स्थुंभ नाम गर्भित स्तवन में—

"सोवनगिरि मंडण सीरोही, नूतनपुरनित चढतउ नूर"

४. अभयसोम कृत जिनकुशलसूरि छंद में—

"जालोर जेति सिंघरी, खंभाइते खराखरी"

५. उदयहर्ष कृत स्तवन में—

"जी हो साचोरे सोभा धरें, जालोरे जस वास"

६. खुश्याल कृत दादा साहब के ७९ गाथा के छंद (सं० १८२३) में—

पूजत थुंभ पाटलै खंभायतै सुपाव ए
जालोर सेतराव में जपंत चित्त चाव ए

७. उ० क्षमाकल्याणजी कृत श्री जिनकुशलसूरि वृहत्स्तोत्र (गा० २२) में—

श्री युक्ते जेसलाद्रौ प्रवर जिनगृहे पत्तने लौद्रवाख्ये।
सेत्रावे कोट्टड़े वा विदित पुरवरे चारु बीकादिनेरे।
मूलत्राणे मरोट्टे गिरि विषमपुरे बाहड़ाद्ये च मेरौ।
जालोरे पुष्करिण्यां वर महिमपुरे श्री फलाद्वर्द्धिकायाम् ॥१४॥

८. अमरसिन्धुर कृत दादाजी छंद (गा० ६५) में—

लुलि नै पाय लागंत लाहोर, जागंती जोत गुरु जालोर।

अंचल गच्छ

मेरुतुंगसूरिजी ने लघुशतपदी की प्रशस्ति में लिखा है कि जब अशाता के कारणवश आचार्य श्री महेन्द्रसिंह तिमिरवाटक में विराजते थे, तब जालोर का संघ वन्दनार्थ आया। आचार्य श्री ने एक ही व्याख्यान में उनके ८२ प्रश्नों का एवं एकान्त में उनके दो प्रश्नों का समाधान कर दिया।

श्री अजितदेवसूरि को सं० १३१६ में जावालिपुर-स्वर्ण गिरि में गच्छनायक पद पर प्रतिष्ठित किया गया। संघ के आग्रह से उन्होंने वहीं चातुर्मास किया फिर पत्तन पधार कर अपने १५ शिष्यों को उपाध्याय पद दिया।

आचार्य अजितसिंहसूरि जब जालोर में थे उस समय अनेक स्थानों से उन्हें वन्दनार्थ संघ आया करता। संघ के सभी लोग तत्कालीन राजा समरसिंह से साक्षात्कार करते और उनके समक्ष भेंट नजराना अवश्य रखते। राजा उन लोगों के मुँह से गुरु महाराज के विषय में त्याग तपस्या की चहुत कुछ जानकारी प्राप्त करता और प्रभावित हो कर धर्म-देशना श्रवण करने आता और फल स्वरूप जैन धर्म को स्वीकार कर अपने देश में अमारि उद्घोषणा कराता रहता। राजा के अनुकरण में सभी वर्ण के लोग जैन धर्म का आचार पालन करने लगे। मेरुतुंगसूरिजी लिखते हैं कि नमस्कार-स्मरणादि प्रवृत्तियों के कारण आज भी शाणादि गांव धर्मक्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध हैं।

श्री धर्मप्रभसूरि—भिन्नमाल से व्यापार हेतु जावालिपुर में आकर वसने वाले सेठ लींबा-वीजलदे माता के ये पुत्र थे। इनका जन्म सं० १३३१ और दीक्षा १३४१ में हुई। ये देवेन्द्रसिंहसूरि के शिष्य थे। श्री देवेन्द्रसिंहसूरि एक वार विचरते हुए जालोर पधारे। राज्य मंत्री लालन सेवाजी ने प्रवेशोत्सव किया। सं० १३४१ का चातुर्मास संघाग्रह से जालोर में हुआ। धर्मचंद्र ने प्रतिबोध पाकर माता-पिता की आज्ञा से जालोर में दीक्षा ली। इनको सं० १३५९ में आचार्य पद मिला। कविवर कान्ह के अनुसार इनका सूरि पद भी जालोर में ही हुआ था।

सिरि धम्मपहसूरि गुरु, भीनवालि अइ रम्मु,
लींबाकुलि वीजल उयरे, तेर इगतीसइ जम्मु ॥७९॥

तेर इगतालइ मुनि पवरो, महिम महोदधि सारु,
अगुणसठइ जालउरि हुउ, आचारिज सुविचारु ॥८०॥

सं० १४४५ में आचार्य पद पाने वाले आचार्य मेरुतुंगसूरिजी के विहार वर्णन में उनके जालोर में विचरने का भी उल्लेख आया है। चक्रेश्वरी देवी की सूचना से दिल्ली पर भारी संकट ज्ञात कर मेरुतुंगसूरि की आज्ञा से दिल्ली छोड़ कर आने वाले श्रावकों में देवाणंद शिखा गोत्र के श्रावक जालोर आकर वसे थे।

अंचलगच्छ दिग्दर्शन में गोत्र प्रतिबोध के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है—

सं० ७१३ में जालोर के सोनगिरा सोढा वंश का कान्हड़ दे नामक सोलंकी राजपूत राज्य करता था। स्वाति आचार्य के उपदेश से उसने जैन धर्म स्वीकार किया और जालोर में चन्द्रप्रभ स्वामी का जिनालय निर्माण कराया, उसके वंशजों ने जैन धर्म की बड़ी सेवाएं की और लालन गोत्र हुआ [पृ० ७८]

सं० १२५५ में जेसलमेर में जयसिंहसूरि द्वारा प्रतिबोधित देवड़ नामक चावड़ा राजपूत से बने ओसवाल के पुत्र झामर ने जालोर में एक लाख सत्तर हजार टंक खरच के श्री आदिनाथ प्रभु का शिखरबद्ध प्रासाद कराया, वस्त्रादि की लाहण की, बन्दीजनों को छुड़ाया। देवड़ा, देढिया गोत्रीय ओसवाल इसी वंश के हैं।

सं० १२५२ में धर्मघोषसूरि के समय पूर्व दिशा के कान्तिनगर में दहिया राजपूत जाति के हेमराज और खेमराज दो भाई थे। हेमराज वहां का राजा

हुआ और खेमराज ने जालोर आकर राजा कान्हड़दे का प्रीतिपात्र बन कर सायला आदि ४८ गांव प्राप्त किए। उसके वंशज बाद में स्याल नाम से प्रसिद्ध हुए।

सं० १२६५ में धर्मघोषसूरि जालोर पधारे तब चौहान वंश के भीम नामक क्षत्रिय ने जैन धर्म स्वीकार किया। ओसवाल जाति में उसका गोत्र चौहान प्रसिद्ध हुआ। जालोर नरेश ने भीम को डोड गांव दिया जिससे वह डोड गाँव में आकर डोडियालेचा कहलाया। धर्मघोषसूरि के उपदेश से उसने वासुपूज्य जिनालय कराया। इसी वंश के वीरा सेठ ने जालोर में चन्द्रप्रभ प्रासाद बनवाया था। सं० १२६६ में डोड गांव के मन्दिर की प्रतिष्ठा धर्मघोषसूरि ने की। डोडियालेचा के सिवा गोवाउत, सुवर्णगिरा, संघवी, पालनपुरा और सेंधलोरा भी इसी गोत्र से सम्बन्धित हैं।

कविवर कान्ह ने गच्छनायक गुरु रास में लिखा है कि धर्मघोषसूरि ने बील्ह आदि को प्रतिबोध दिया। यतः—

"जालउरि पडिबोहिय बील्ह पमुहो गणहरि धम्मघोषसूरि"

इससे ज्ञात होता है कि उन्होंने जालोर में अनेकों को प्रतिबोध दिया था।

लाखण भालाणी गाँव के परमार रणमल के पुत्र हरिया को सर्प दंश से विष मुक्त करके जीवनदान देने वाले धर्मघोषसूरि से प्रतिबोध पाकर हरियासाह जैन हुए जिनको सं० १२६६ में जालोर और भिन्नमाल के श्रावकों ने ओसवाल जाति में मिला लिया।

भट्ट ग्रन्थों में उल्लेख है कि कान्हड़देव के शासनकाल में महेन्द्रसिंहसूरि ने भीम चौहान को बोध दिया। भावसागरसूरि ने उसे 'भीम नरेन्द्र' संज्ञा से पुकारा है यतः—

"सिरिपास भवण मज्झे भीम नरिंदेण कहिय पास थुइ"

ओसवाल वंश, के चौहान गोत्रीय वीरा सेठ ने जालोर में चन्द्रप्रभ जिनालय बनवाया (पृ० २६९) वाहणी गोत्रीय ओसवाल वरजांग ने जालोरी, साचोरी राडद्रही, सीरोही चार देशों को जिमाया इसी वंश के कर्मा ने जालोर में धर्म कार्यों में प्रचुर द्रव्य व्यय किया।

सं० १७०० में आचार्य श्री कल्याणसागरसूरि जालोर पधारे। चंडीसर गोत्रीय सेलोत जोगा मंत्री ने महामहोत्सव पूर्वक नगर प्रवेश कराया। आचार्य श्री ने मंत्र प्रभाव से महामारी रोग दूर किया। अन्य दर्शनी लोगों ने भी सम्यक्त्व स्वीकार किया। स० १७०० का चातुर्मास जालोर हुआ।

तपागच्छ

उदयपुर के शीतलनाथ जिनालय स्थित धर्मनाथ प्रतिमा के अभिलेख से विदित होता है कि जालोर में श्री लक्ष्मीसागरसूरिजी ने इसकी सं० १५४२ में प्रतिष्ठा कराई थी। यह बिंब प्राग्वाट कुटुम्ब द्वारा निर्मापित है इसका निम्न लेख नाहरजी के लेखाङ्क ११०० में व श्री विजयधर्मसूरिजी के लेखाङ्क ४८१ में छपा है।

सं० १५४२ वर्षे फा० ब० २ दिने जालउर महादुर्गे प्राग्वाट ज्ञातीय सा० पोष भा० पोमादे पुत्र सा० जेसाकेन भा० जसमादे भ्राता लाखादि कुटुंब युतेन स्व श्रेयोऽर्थं श्री धर्मनाथ बिंबकारितं प्र० तपा० श्री सोमसुन्दरसूरि संताने विजय मान श्री लक्ष्मीसागर सूरिभिः ॥ श्रियोस्तु ॥

जहांगीर बादशाह का फरमान लेकर जब मुकरबखान गुजरात जा रहा था तो जब वह रास्ते में जालोर पहुंचा तो उपाध्याय श्री भानुचंदजी उससे जाकर मिले और श्री सिद्धिचंदजी को उसके साथ अहमदाबाद भेजा (जैन सत्य प्रकाश वर्ष ५ पृ० २१७)।

विजयसिंहसूरि विजय प्रकाश रास में जालोर को मारवाड़ के ९ कोटों में तीसरा कोट बतलाया है—

"बीजो अर्बुद गढ ते जाण्यो, त्रीजउ गढ जालोर वखाण्यो ॥२७॥

जब आचार्य महाराज वरकाणा तीर्थ पधारे तब जालोर का संघ उन्हें वन्दनार्थ गया था यतः—

जंगम थावर तीर्थ दोइ मिलिया वरकाणइ।
जालोरउ संघ वंदवा आव्यो जग जाणइ ॥८८॥

जालोर नगर के तपावास स्थित श्री नेमिनाथ जिनालय में सं० १६६५ में प्रतिष्ठित जगद्गुरु श्री हीरविजयसूरिजी महाराज की सुन्दर प्रतिमा है।

सं० १६५१ में नर्गाष गणि कृत 'जालुर नगर पंच जिनालय चैत्य परिपाटी' में जालोर के ५ जिनालयों की बिंब संख्या अवश्य दी है पर स्वर्णगिरि के मन्दिरों का कोई उल्लेख नहीं है अतः उस समय वे मन्दिर भग्न दशा में या खाली दशा में होंगे। जहाँगीर के समय में महाराजा गजसिंह राठौड़ और उनके मंत्री मुहणोत जयमलजी हुए। मुहणोतजी ने स्वर्णगिरि पर जिनालय बनवा कर प्रतिष्ठा करवाई और अन्य मन्दिरों का जीर्णोद्धार भी करवाया। सं० १६८१ में तपागच्छीय आचार्य श्री विजयदेवसूरिजी के आज्ञानुवर्त्ती मुनि जयसागर गणि द्वारा प्रतिष्ठा कराये जाने के अभिलेख विद्यमान हैं। कुछ प्रतिमाओं पर मुहणोतों के अतिरिक्त कावेड़िया-कोठारी, चोरवेड़िया आदि के भी लेख पाये जाते हैं।

मुनि श्री कल्याणविजयजी सम्पादित "श्री तीर्थ माला संग्रह" नामक पुस्तक में कवि जससोम रचित मेड़ता से शत्रुंजय तीर्थ मार्ग चैत्य परिपाटी प्रकाशित है जिसमें सं० १६८६ का निम्न उल्लेख है। इस समय स्वर्णगिरि के महावीर स्वामी के जिनालय के जीर्णोद्धारित हो जाने से उसका भी उल्लेख है।

शुभ मुहूर्त्त शकुन प्रमाण, पहिलुं हिव कीध प्रयाण।
संघ मिलिउ बहु समेलो, जालोर थयो सहु भेलो ॥८॥

पूज्या तिहां पंच विहारि, जिन फाग रमइ नर नारि।
सोवनगिरि वीर जुहार्या, भव पातक दूर निवार्या ॥९॥

महोपाध्याय विनयविजय कृत इन्दु दूत-विज्ञप्ति पत्र (पद्य १३१ व गद्य) में जोधपुर से सूरत के मार्ग में सुवर्णाचल का वर्णन ६ श्लोकों में किया है। इसमें जालोर को जालंधरपुर लिखा है तथा सीरोही को श्रीरोहिणी लिखा है। इसमें स्वर्णगिरि पर महावीर, पार्श्वनाथ के जिनालयों का ही उल्लेख है। यतः—

तस्मिन् शैलेऽन्तिम जिनवरा वाम वामेय देव,
प्रासादौ यौ तरुण किरणैः संगरं निर्मिमाते।
मध्यस्थः सन् सुघटित रुचौ तौ कुरु प्रायशो यत्,
प्रोत्तुंगानां भवति महते वाप ने यो विरोध ॥३५॥

तत्र क्रीडोपवन सरसो स्वच्छ नीरान्तरेषु,
स्नात्वा स्वैरं प्रतिकृति मिषान्तव्य धौतांशुकः सन्।
ज्योत्स्ना जालैः स्नपय मधुरै वीर वामेय देवौ,
कर्पूराच्छैस्तदनु च करै रर्जयाभ्यर्च्य पुण्यम् ॥३६॥

तस्या धस्तान्नगर मपरः स्वर्ग एवास्तियस्य,
प्रौढेश्यानां भवन निकरै र्ध्वस्तमाना विमानाः।
क्वाप्येकान्ते कृत वसतयः सज्जलज्जाभिभूता,
भूमी पीठा वतरण विधौ पङ्गुता माश्रयन्ति ॥३७॥

पट्टावली समुच्चय में लिखा है कि जोधपुर नरेश के मुख्य मान्य जयमल्ल ने सं० १६८१ चातुर्मास के बाद श्री विजयदेवसूरिजी को सिरोही से जालोर बुलाकर उपरा ऊपरी तीन चौमासे कराके अपने बनवाये हुए सुवर्णगिरि के चैत्यों की प्रतिष्ठा करवायी। सं० १६८४ पो० सु० ६ को गणानुज्ञा का नंदि महोत्सवादि किया।

श्री विजयसिंहसूरिजी ने सं० १७०४ में जैतारण चातुर्मास कर अहमदाबाद जाते हुए मार्ग में स्वर्णगिरि तीर्थ की यात्रा की।

सं० १६८६ प्रथम आषाढ़ बदि ५ को मंत्री जयमल्लजी ने जालोर में प्रतिष्ठा कराई थी। श्री पद्मप्रभस्वामी की प्रतिमा नाडोल के रायविहार में स्थापित की जिसका लेख जिनविजयजी के प्राचीन जैन लेख संग्रह के लेखांक ३६७ में प्रकाशित है।

जालोरी गच्छ

जालोर के प्राचीन नामों में जाल्योद्धर-जाल्लोधर भी पाया जाता है। जैन साहित्य संशोधक वर्ष ३ अंक १ में चौरासी गच्छों के नामों की दो सूचियां छपी है जिनमें एक जालोरी गच्छ भी है। नगरों के नाम से अनेक गच्छ और जाति-गोत्र पाये जाते हैं उसी प्रकार इस प्राचीन और महत्वपूर्ण स्थान के नाम से प्रसिद्ध गच्छ के कतिपय प्रतिमा लेख पाये जाते हैं। यहाँ उन लेखों को उद्धृत किया जाता है—

१. १ सं० १३३१ मोढ ज्ञातीय परी० महणाकेन निज माता····**जाल्हण देवि श्रेयोऽर्थं श्री पार्श्व बिम्बं कारितं ॥ प्रतिष्ठितं श्री जाल्योधर गच्छे श्री हरि प्रभसूरिभिः** [प्राचीन जैन लेख संग्रह नं० ४८३]

२. ६०॥ संवत् १३४९ वर्षे चैत्र बदि ६ रवौ मोढ ज्ञातीय परी० पूना सुत परी० **तिहुणाकेन भ्रातृ महणा श्रेयोऽर्थं श्री महावीर बिंबं कारितं ॥ प्रतिष्ठितं श्री जोल्योधर गच्छे श्री देवसूरि संताने श्री हरिभद्रसूरि शिष्यैः श्री हरिप्रभसूरिभिः शुभंभवतु** [प्रा० जै० ले० सं० ४८४]

३. सं० १३९····बैशाख सुदी ३ **मोढ वंशे श्रे० पाजान्वये व्य० देवा सुत व्य० मुंजाल भार्यया व्य० रत्नदिव्या आत्म श्रेयोर्थं श्री नेमिनाथ बिंबं कारितं श्री जाल्योद्धर गच्छे श्री सर्वाणंदसूरि सताने श्री देवसूरि पट्टभूषणमणि प्रभु श्री हरिभद्रसूरि शिष्यैः सुविहित नामधेय भट्टारक श्री चन्द्रसिंहसूरि पट्टालंकरण श्री विबुधप्रभसूरीणां श्री पाजावसहिकायां भद्रं भवतु ।**

[प्राचीन लेख सं० ले० ६७]

४. सं० १४२३ वर्षे फा० सु० ९ **मोढ ज्ञातीय श्रे० गणा भा० व० लाडी सुतसामलेन मा० पितृ० श्रे० श्री शांतिनाथ बिं० का० प्र० जाल्योधर ग० प्र० श्री ललितप्रभसूरिभिः** [प्रा० ले० सं० ले० ७६]

५. सं० १५०३ वर्षे माघ सुदि १४ **सोमे कुमारदेव्या सुपुण्याय श्री पार्श्वनाथ बिंबं कारितं श्री जाल्लोधर गच्छे भद्ररत्नसूरि माणिक्यसूरिभिः शिष्यैः प्रतिष्ठितं** [जैन धातु प्रतिमा ले० ९९]

६. **श्री जालोहरीय गच्छे श्री वच्छ सुत निमितं शांतन····णेनकारिता ।**

[प्रतिष्ठा लेख संग्रह ले० २३]

७. ९॥ सं० १३३१ वर्षे बैशाख सुदि १५ **बुधे जाल्योधर गच्छे मोढ वंशे श्रे० यशोपाल सुत ठ० पूनाकेन मातृ माल्हाण श्रेयोर्थं विमलनाथ बिंबं कारितं प्रतिष्ठितं श्री हरिप्रभसूरिभिः** [प्राचीन जैन लेख संग्रह नं० ४९८]

इन लेखों में चार लेखों में प्रतिमा निर्मापक मोढ ज्ञाति के थे, दो में निर्देश नहीं है। किन्तु देवसूरि संतानीय उल्लेख होने से संभवतः वृहद् गच्छीय वादीन्द्र देवसूरि की पट्ट परम्परा ही आगे चल कर जालोरी गच्छ नाम से प्रसिद्ध हो गई मालुम देती है। तोपखाने में स्थित कुमरविहार के अभि लेख में इन्हीं देवसूरि संतानीय आचार्यों को मन्दिर की व्यवस्था से सम्बन्धित नियुक्त किया गया था, स्पष्ट उल्लेख है, पट्ट परम्परादि अन्वेषणीय है इनकी नियुक्ति महाराज समरसिंह के आदेश से हुई थी।

नाणकीय गच्छ

सं० १३२० और सं० १३२३ के अभिलेखों से विदित होता है कि चंदन विहार नामक महावीर जिनालय इस गच्छ से सम्बन्धित था और वह महाराज चंदन के समय का निर्मित होगा। आचार्य धनेश्वरसूरि के विद्यमानता में तेलहरा गोत्रीय श्रावक इस गच्छ के अनुयायी थे।

साधु पूर्णिमा गच्छ

जालोर में सभी गच्छों के आचार्यों का आवागमन और मान्यता थी। उन आचार्यों द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमा लेखों से यह चारु तया प्रमाणित है। बीकानेर के पार्श्वनाथ जिनालय (कोचरों का चौक) की एक चन्द्रप्रभ चौबीसी प्रतिमा सं० १५०८ में स्वर्णगिरि पर प्रतिष्ठित है जिसका निर्माण जालोर के श्रीवत्स गोत्रीय ओसवाल वंश द्वारा हुआ था। प्रस्तुत अभिलेख यहाँ दिया जा रहा है—

सं० १५०८ वर्षे ज्येष्ठ सुदि ५ रवौ अद्येह स्वर्णगिरौ जाल्योद्धर वास्तव्यः श्री ऊकेश वंशे श्रीवत्स गोत्रीय प० देवा भा० देवलदे तत्पुत्र सं० बाबाख्य तद्भार्या विल्हणदे भ्रातृ देवसिंह पुत्र जागा भार्या कपूरीति कुटुंब युतः श्री चन्द्रप्रभस्य बिबं स चतुर्विंशति जिनमची करत श्री साधु पूर्णिमा पक्षे श्री रामचंद्रसूरि पट्टे परमगुरु भट्टारक श्री पुण्यचंद्रसूरीणामुपदेशेन विधिना श्राद्धैः मंगलंभूयात् श्रमण संघस्य। [बीकानेर जैन लेख संग्रह नं० १६२५]

सुराणा गच्छ

संवत् १५५४ व० पौष ब० २ बुधे सुराणा गोत्रे सा० चीचा भा० कुंती पु० मेघा भा० रंगी पु० सूर्यमल्ल स्वपुण्यार्थं श्री वासुपूज्य बिबं कारितं प्र० सूराणा गच्छे श्री पद्माणंदसूरि पट्टे श्रीनंदिवर्द्धनसूरिभिः जालुर वास्तव्यः।

[बी जै० ले० सं० नं० ११२३]

नागपुरी तपा (पायचंद गच्छ)

६६ विवेकचन्द्रसूरि—जालोर के ओसवाल संघवी शा० मूलचंद पिता और महिमादे माता की कोख से सं० १८०९ में इनका जन्म हुआ। सं० १८२० नागौर में दीक्षा और आचार्य पद सं० १८३७ मिती आश्विन सुदि २ को वीरम गाँव में एवं भट्टारक पद माघ सुदी ५ को हुआ। सं० १८५४ श्रा० ब० १३ को उज्जैन में स्वर्गवासी हुए।

उपकेश गच्छ

देवगुप्तसूरि के शिष्य वीरचंद जो आगम, छंद, मंत्र शक्ति आदि में बड़े प्रवीण थे। जावालिपुर में खंडेरक आचार्य के पास जा कर क्रिया होते देख सूरि जी से कहा—आज से २९वें दिन मेरे (शव के) पास आप लोग ऐसी क्रिया करोगे! वचन सत्य हुआ और कथनानुसार वह वीरचंद जो आठ शास्त्रों का (अष्टाङ्ग निमित्त) पण्डित और मात्र २८ वर्ष की अवस्था में था, स्वर्गस्थ हो गया और भविष्यवाणी सत्य हुई।

वड़ गच्छ

राजस्थान शोध संस्थान, चौपासनी के ग्रन्थाङ्क ३०५ (७) में करमप्रभसूरि कृत बड़ गच्छ परम्परा स्तवन में श्री जयमंगल सूरि द्वारा जालोर में वर्द्धमान स्वामी के स्थापन करने का उल्लेख इस प्रकार है—

वर्द्धमान जिणि थापिया ए, सिरि जालोर मंझारे।
जुगप्रधान वंदु सहिय, श्रीजय मंगल सूरे ॥८॥

नागोरी लुंका

पट्टावली प्रबन्ध संग्रह में आचार्य हस्तीमल्ल जी ने लुंका शाह और पूज्य रूपचंद जी के सम्बन्ध में लिखा है—

"·····इधर किसी पौषधशालिकों ने भूमिघर में स्थित सिद्धान्त ग्रन्थों को गलता हुआ जान कर जालोर निवासी लुंका नाम के लेखक को बुलाकर उसे एकान्त में रख कर पुस्तक लेखन करवाया। × × "बाद लुंका साह ने जालोर नगर से सभी आगम लिख कर रूपचंद जी के पास भेज दिए × × जालोर में कोचर वंशीय वेलावत, कालू निवासी भंडारी, जेसलमेर में बोहरावंशी, कृष्णगढ़ में वाघचार, चण्डालिया चौधर·····अनेक जाति के ओकेश वंशीय (ओसवाल) और अग्रवाल भी नागोरी लुंका गच्छी हो गए। इस तरह एक लाख अस्सी हजार घर को उन्होंने प्रतिबोध दिया।

प्राग्वाट धणदेव की वंश परम्परा

श्री संघ के भंडार, पाटण की श्री शान्तिनाथ चरित्र की ताड़पत्रीय प्रति जो चौदहवीं शती की है, श्रीमाल वंशी श्राविका सलवणा प्रदत्त है इसमें ५-६ प्रशस्तियां है एक में जालोर का नाम जाल्योधर लिखा है।

पाटण भंडार सूची (पृ० ३४४) में धर्म विधि वृत्ति की वस्त्र पर लिखी प्रति है जिसकी दाता की प्रशस्ति से विदित होता है कि सं० १४१८ के लिखे इस ग्रन्थ को श्री रत्नप्रभसूरि ने वांचा था। प्रशस्ति यह है :—

जावालि दुर्गे नगरे प्रधाने बभूव पूर्वं धणदेव नामा।
सहजल्हदेवि दयिता तदीया ब्रह्माक लिंबा तनयौ च तस्या ॥१॥

गौरदेवि दयिता प्रबभूव लिंबकस्य तनयः कडुसिंहः।
तस्य च प्रियतमा कडुदेवी तस्य चैव समभूद् धरणाकः ॥२॥

ब्रह्माक पुतः प्रबभूव झंझणः प्राग्वाट वंशस्य शिरोमणिस्तु।
आशाधरस्तस्य बभूव नंदन पुत्रश्च तस्य प्रबभूव गोगिलः ॥३॥

गोगिलस्य तनयः प्रबभूव पद्मदेव सुकृती सुकृतज्ञः।
तस्य चैव दयिता सुर लक्ष्मी जैन धर्म करणैक कोविदा ॥४॥

अमी जयंति तनया यस्याश्च जगती तले।
सुभटसिंहः क्षेमसिंहः स्थिरपालस्तथैव च ॥५॥

जाया सुभटसिंहस्य सोनिका हेम वर्णिका।
तस्याः सुता जयन्त्युच्चै रेते विदत विक्रमाः ॥६॥

तेजाको जयतश्चैव ना(जा)वड़ पातलस्तथा।
एताः पुत्र्यश्च यस्या हि कामी नामल चामिका ॥७॥

जाया स्थविरपालस्य श्राविका देदिकाभिधा।
तस्याः सुताः षडेते च जयंती जगती तले ॥८॥

नरपालश्च हापाक स्त्रिभुवनस्तु कालुकः ।
केल्हाकः पेथड़ श्चैव षडेते सुर सुन्दराः ॥९॥

स्थविरपालस्य साहाज्जा (य्या) त् श्री रत्नप्रभसूरिभिः ।
विशालाया धर्मविधेः पुस्तकं वाचितं वरम् ॥१०॥छः॥

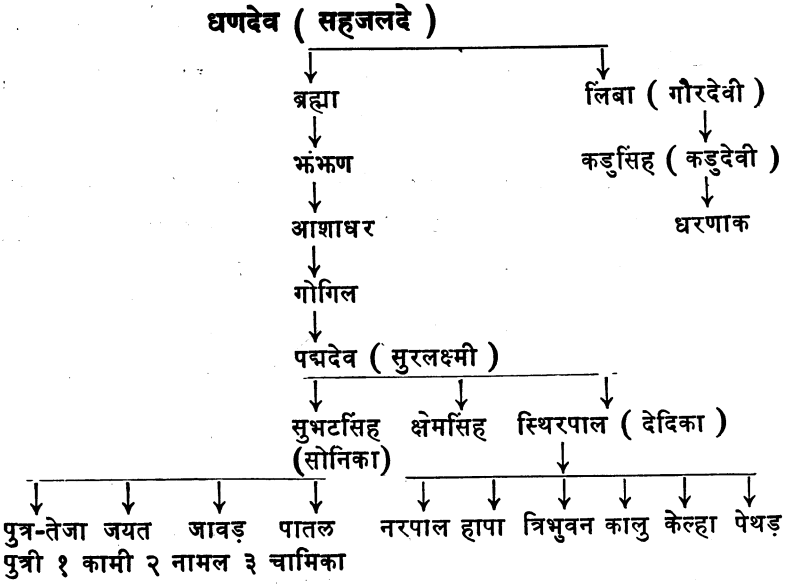

इस प्रशस्ति से प्राग्वाट वंशी स्थिरपाल का वंशवृक्ष इस प्रकार बनता है, ये जावालिपुर वासी थे ।

जालोर के मंत्री आभू, अभयद और अंबड़

माण्डवगढ़ के सुप्रसिद्ध विद्वान और साहित्यकार मंत्री मण्डन और धनदराज आदि ने केवल माण्डवगढ़ मालवा में ही नहीं अपनी सत्प्रवृत्तियों द्वारा उनके व उनके पूर्वजों की महान् सेवाओं का उल्लेख उनकी प्रशस्तियों आदि में पाया जाता है। उनका गोत्र सोनिगिरा—श्रीमाल वंश जालोर—सुवर्णगिरि से ही सम्बन्धित था। जालोर में उनके पूर्वजों की सेवाओं का उल्लेख कवि महेश्वर कृत 'काव्य मनोहर' महाकाव्य के सप्तम सर्ग में इस प्रकार है—

यदुद्भवाः पुण्यधियो महान्तः कीर्त्यञ्चिता जीवदया कुलाङ्काः।
नन्दन्ति जन्याः स तु लोक मध्ये श्रीमाल वंशो जयति प्रकामम् ॥२॥

गोत्रे स्वर्णगिरीयके समभव ज्जावाल सत्पत्तने,
ह्याभूरित्यभिधान भृन्मतिमतां वर्यः प्रधानेश्वरा।
श्री सोमेश्वर भूभुजः प्रतिदिनं यातोन्नतिः ख्याति ते,
व्यापारे निखिले सुकीर्त्ति विमले लोकोत्सवालङ्कृते ॥३॥

तस्यात्मजस्त्वभयदो ऽभवदत्र वंशे ह्यानंदनाम नृपतेः सकलं प्रधानम्।
चातुर्य निर्मल गुणोत्तम कर्मकीर्त्तिः सद्यायकौघ सततामित दत्तभूतिः ॥४॥

यो गूर्ज्जरान्नृपवराद्विजय श्रियंवै लेभेऽमित्र इह धैर्य गुणै प्रशस्तः।
जावालनाम्नि नगरे स बभूववर्ये श्रीमन्निकेतन विभासित विग्विभागे ॥५॥

तस्माद भू दम्बड़ नाम धेयः स्व विक्रमै स्तर्ज्जित वैरिवर्गः।
यो ऽरोपयत्स्वर्णगिरौ गरिष्ठे राजन्य वर्ये वर विग्रहेशम् ॥६॥

अर्थात्—श्रीमाल वंश के स्वर्णगिरीयक (सोनगरा) गोत्र में जावालपत्तन (जालोर) में आभू नामक प्रतापी पूर्वज हुआ वह बुद्धिमान था और राजा सोमेश्वर का मुख्य मंत्री था। आभू का पुत्र अभयद हुआ जो आनंद नामक राजा का मुख्य मंत्री था और उसने गूर्जर राज पर विजयश्री प्राप्त की थी। यह जालोर में प्रसिद्ध हुआ था इसके पुत्र अंबड़ ने सुवर्णगिरि पर विग्रहेश (वीसलदेव) को स्थापित किया।

इसके बाद लिखा है कि उसका पुत्र सहणपाल मोजदीन नृप का मुख्य प्रधान था। उस राजा ने कच्छप तुच्छ (कच्छ ?) देश को घेर लिया तब दुख से रोते हुए लोगों पर दया लाकर सहणपाल ने देश को मुक्त कराया। यवनाधिप ने १०१ तार्क्ष्य और ७ मुद्राओं से मंत्री को पुरष्कृत किया। सहणपाल के पुत्र नैणा को सुलतान जलालुद्दीन ने समस्त मुद्राएं देकर राज्य का सम्पूर्ण अधिकार सौंपा। उसने कलिकाल केवली श्री जिनचंद्रसूरिजी के साथ शत्रुंजय-गिरनार तीर्थों की यात्रा की थी।

इस ४७ श्लोकों की प्रशस्ति में और भी अनेक ऐतिहासिक ज्ञातव्य हैं। मण्डन के काव्य चम्पूमण्डन, अलङ्कारमंडनादि ग्रन्थों की प्रशस्तियों में भी ऐतिहासिक तथ्य हैं। यहाँ उपर के श्लोकों में जालोर के सम्बन्धित श्लोकों को ही दिया गया है तथा बाद के ५-६ श्लोकों का भावार्थ समय निर्द्धारित करने में सहायक होगा क्योंकि इन श्लोकों में जालोर के सोमेश्वर और आनन्द पिता-पुत्र नृपति द्वय के आभू और अभयद के मुख्य मंत्री होने का उल्लेख है। ये पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रामाणिक उल्लेख हैं जिन पर जालोर के इन दोनों शासकों पर नया प्रकाश पड़ता है। ये दोनों राजा सम्भवतः नाडुल के चौहानों—कीर्त्तिपाल और परमार धारावर्ष—वीसल के मध्यवर्त्ती चौहान शासक थे जिनका आगे उल्लेख किया जा चुका है।

"प्रतिष्ठा लेख संग्रह" के लेखाङ्क ३६४ में सवार्ड माधोपुर के विमलनाथ जिनालय की पंचतीर्थी का लेख प्रकाशित है जो मांडवगढ़ के सुप्रसिद्ध स्वर्णगिरिया वंश का है जो इस प्रचार है—

।। संवत् १५०३ वर्षे वैशाख सु० ५ श० श्रीमालवंशे स्वर्गगिरिया गोत्रे सा० चाहड़ भार्या गौरी सुतस्य सं० चंद्रस्य स्व पितृव्य भ्रातुः पुण्यार्थं सं० देहड़ भा० गांगा सुत सं० धनराजेन ल० भ्रातृ सं० खीमराज सं० उदयराजादि युतेन श्री आदिनाथ बिंबं कारितं श्री खरतर ग० श्री जिनचंद्रसूरिभिः प्रतिष्ठितं नंदतात् ।।

टिप्पणी—बिजोलिया के सं० १२२६ के शिलालेखानुसार अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान के पिता सोमेश्वर थे जिनके पूर्वज विग्रहराज ने जाबालिपुर (जालोर), पाली और नाडूल को जीत लिया था। अतः आभू सोमेश्वर का मुख्य मंत्री होगा। आनंद का मंत्री अभयद बतलाया है यह आनंद सोमेश्वर का पुत्र था। विग्रहेश सोमेश्वर का बड़ा भाई विग्रहराज चतुर्थ—अपर नाम वीशलदेव था। जिसे अभयद के पुत्र अम्बड़ ने स्थापित किया। अंबड़ का पुत्र सहणपाल जिस मोजदीन का मुख्य मंत्री था वह रजिया बेगम का भाई मोइजुदीन-बहराम (सं० १२९६-९७ से १२९८-९९) था।

यवनों का अत्याचार—शासनदेव का चमत्कार

मुस्लिम शासनकाल में देवालयों की जो दुर्गति की गई वह वर्णनातीत है। जालोर-स्वर्णगिरि के वैभवशाली मन्दिरों को भूमिसात् करके सैकड़ों वर्षों की अर्जित गरिमा को नष्ट करने के साथ-साथ विस्मृति के गर्भ में न जाने कितने कीर्तिकलाप नेस्तनाबूद किए हुए अज्ञात घाव विद्यमान हैं, कल्पना नही की जा सकती। वे दुराशय शासक दुरभिसन्धि से अपने खतरनाक पंजे फैलाये रखते और जहां भी मौका लगता अपनी राक्षसी वृत्ति का शिकार उन पावन स्थानों को भी बना लेगे, इतिहास साक्षी है।

जीरावला की घटना

जालोर से जीरावला तीर्थ अनतिदूर है उसकी पवित्रता नष्ट करने के लिए जो किया, उसकी संक्षिप्त झांकी जो मिलती है अविकल उद्धृत् की जाती है।

सं० १३६८ में वे दुष्टात्मा यमदूत की भाँति जीरावला तीर्थ जा पहुंचे, जैन सत्यप्रकाश वर्ष १९ अंक ९ "जीरावला पार्श्वनाथ तीर्थ स्थापना का समय शीर्षक लेख से २०वीं गाथा यहाँ दी जाती है—

अह तेरह अड़सट्ठा वरसिहि सुरताणीह दल अमरस वरसिहि, उक्करसिहि अइ पुट्ठ।
अण जाणह जालुरह हुंता, जीराउलिवेगि पहुंता, जमदूत जिम दुट्ठ ॥२०॥

जैन परम्परा के इतिहास पृ० ७२३ में इसका विशेष खुलासा इस प्रकार है :—

एक बार जालोर के मुसलमानों ने तीर्थ को तोड़ने का विचार किया पर वे सफल न हो सके। इससे ७ शेख-मौलवी लोग जैन यति का वेश धारण कर मन्दिर में आये। रात्रि में उन्होंने खून छिड़क कर उसे अपवित्र किया और प्रतिमा को तोड़कर उसके ९ टुकड़े कर डाले। इस दुष्कृत्य से वे बेभान होकर गिर पड़े। बाहर न निकल सकने से सुबह में लोगों ने उन्हें पकड़ कर मार डाला। इस घटना से सबको दुःख हुआ। सेठ ने उपवास किया तो रात्रि में देव ने आकर कहा—खेद न करो, जो भावि भाव हों वैसा होता है। अब दरवाजे बन्द कर नौ सेर लापसी बना कर उसमें प्रतिमा के नवों टुकड़े दबा कर सात दिन रखो।

श्री संघ ने वैसा ही किया पर सातवें दिन एक छः री पालता संघ आया, जिसके आग्रहवश दरवाजा खोलना पड़ा। सबने प्रभु दर्शन किये, अंग जुड़ गये पर थोड़ी रेखाएं रह गईं जिससे खड्डे रह गए।

इसी अरसे में जालोर के सूबेदार के यहाँ भयानक उपद्रब हुआ। उसने दीवान के कथन से जीरावला जाकर भ० पार्श्वनाथ की प्रतिमा के समक्ष शिर मुंडा कर माफी मांगी, जिससे उन्हें शान्ति हुई। तब से यहां सिर मुंडाने की प्रथा चली जो सोलहवीं शती तक थी।

भीनमाल की घटना

सं० १६५१ में देवल की ईंट खोदते हुए भिन्नमाल में श्री पार्श्वप्रभु की प्रतिमा प्रकट हुई। श्री वीर प्रभु का समवशरण तथा सुन्दर प्रतिमा, श्री शारदा की मूर्त्ति आदि ८ मूर्त्तियाँ प्रगट हुई। यतः—

ईंट खणतां देवल भणी ए, प्रगटचा श्री पास।
संवत सोल एकावने, बहु पुगी आस ॥८॥
समवशरण श्री वीर नुं ए, प्रतिमा सुन्दर सार।
मूरत श्री सारद तणी ए, आठ मूरत अंबार ॥९॥

[भिन्नमाल पार्श्वस्तवन]

मेहता लक्ष्मण और भावडहरा गच्छ के चतुर्दशी पक्ष के पन्यास आदि यह देख कर अति प्रसन्न हुए। शान्तिनाथ जिनालय में यह प्रतिमा लाये और स्नात्र-महोत्सव, गीत-गान होने लगे।

उस समय जालोर नगर में देशपति गजनीखान का राज्य था और उसका सेवक भिन्नमाल में शासक था। उसने खान को जाकर कहा—साहेब! पीतल का अद्भूत बुतखाना प्रगट हुआ है, वह आप लाओगे तो बहुत सा द्रव्य देंगे। खान ने यह सुनकर तुरन्त इस प्रतिमा को अपने पास मंगवा ली और कहने लगा कि आज मुझे बहुत पीतल मिला है, हाथी के लिए घण्ट कराऊंगा। यह बात जब सर्वत्र फैली तो चतुर्विध संघ एकत्र हुआ। गजनीखान के पास जाकर प्रार्थना की। महाजनों ने मान पूर्वक जवाब मांगा। उन्होंने कहा पीतल का धन हमारे पास लो और बुतखाना छोड़ दो! बाबा आदम का यह रूप है, इसके बहुत स्वरूप हैं जिसकी सेवा करनी चाहिए, उसे नष्ट कैसे किया जाय? सलाम करके आप पार्श्वनाथ को छोड़ दें, जिससे सबके मन की आशा पूर्ण हो। हम चार हजार पीरोजी (मुद्रा) दे देंगे!

उस समय गजनीखान ने कहा—लाख रुपये के मामले में इतने से कैसे छोड़ूं ? संघ लौट आया। हृदय में अत्यन्त दुःख हुआ। हाय ! यह दुःख किससे कहें ? म्लेच्छ से प्रतिमा कैसे लें ? लोगों ने विविध प्रकार के अभिग्रह लिए। उस गाँव में अति गुणवान संघवी वीरचन्द रहता था, उसने पार्श्वनाथ प्रतिमा छूटे तब तक नियम लिया कि पार्श्वनाथ मूर्ति को पूज करके ही अन्न ग्रहण करूँगा।

इस पर नीले घोड़े पर सवार और नीले वस्त्राभूषण से पार्श्व (यक्ष) धरणेन्द्र पद्मावती के साथ प्रगट हुए और अभिग्रहधारी सेठ से कहा—सेठ ! मेरी बात सुनो, रात-दिन क्यों भूखे मरते हो ? पार्श्वनाथ भगवान की वास्तविक प्रतिमा को तो गजनीखान ने तोड़ डाला है, अब वह किसी प्रकार नहीं आ सकती ! तुम इतने लंघन क्यों करते हो ? सेठ ने कहा—इस भव में तो मैंने जो नियम लिया है वही सार है, यदि पार्श्वनाथ प्रतिमा नहीं आवेगी तो मर जाना ही श्रेयस्कर है !

सेठ का चित्त निश्चल जान कर धरणेन्द्र जालोर गया और गजनीखान से कहा—तुम सोये हो तो जागो ! जल्दी उठकर मेरे पाँव पड़ो और भिन्नमाल नगर में मुझे छोड़ो ! नहीं तो तुम्हारे पर कलिकाल रुष्ट हुआ—समझना ! जो मैं रुष्ट हुआ तो बुरा होगा और तुष्ट हुआ तो अपार ऋद्धि दूंगा, शत्रुओं पर विजय कराऊंगा !

गजनीखान अहंकार में भरकर कहने लगा—अरे बुतखाना ! तू मुझे क्या डराता है ? तुम रुष्ट या तुष्ट होकर मेरा क्या कर सकते हो ? मैं भाग्यबली हूँ, डरने वाले हिन्दू गोबरे, हम तो खुदा के यार हैं। मुल्क में मुसल्मान बड़े हैं, बुतखाने के लिए तो वे कालस्वरूप हैं। मेरी बात सुन लो स्पष्ट, तुम्हारी देह के टुकड़े-टुकड़े कर डालूंगा और गली-गली में फिराऊंगा। मैं देखूंगा कि तुम तुष्ट होकर मुझे क्या दे सकते हो और रुष्ट हो करके क्या ले लोगे ! मेरे सेवक होकर तुम मुझे क्या दोगे ?

गजनीखान ने तत्काल फैसला कर देने का निर्णय कर सिरोही के चार सुनारों को बुलाया और उन्हें कहा—इसको तोड़कर टुकड़े करो ! जिसमें (निकले हुए सोने) से बीबी के लिए नवसर हार तथा घोड़े के गले के लिए घूघरमाल तैयार करो !

आज्ञा पाकर जब सोनी लोग तोड़ने को प्रस्तुत हुए तो सहसा भौंरों का दल गुंजारव करने लगा। और उसी समय बीबी व्याकुल होकर दौड़ने लगी। मतवाली काली घटा आसमान में देख कर खान भी चित्त में व्याकुल हुआ।

धरणेन्द्र ने चेतावनी दी—अरे खान ! तुम पार्श्वनाथ के कोप-भाजन क्यों बनते हो ? मैं धरणेन्द्र, पार्श्वनाथ का प्रधान हूँ, ध्यान रख कर सोचो !

लश्कर में मार पड़ने लगी, हाथी घोड़ों का संहार होने लगा, स्थान-स्थान पर मनुष्य मरने लगे। बीबी, बन्धु, बेटे नजर देखते अकेले जाने लगे, धीरज टूटने लगा। जहाँ जालोरी संकोसी था, वर्षा की बूँद भी न गिरी और तेज धूप तपने लगा। प्रजा पुकार करने लगी—खूनकार ! पार्श्वनाथ मूर्त्ति को छोड़ो, सब की सार करो ! खान (भीनमाल के हाकिम) ने कहा—मालिक ! इसे मत छोड़ो, इससे बहुत काम निकलेंगे, अधिक धन की मांग करो !

धरणेन्द्र ने सोये हुए मल्लिक गजनीखान को नीचे गिरा दिया। वह मुख से पार्श्वनाथ ! पार्श्वनाथ ! कहने लगा। आवाज आई—मूर्त्ति को छोड़ो तो तुम्हें छोड़ूँगा ! उसे मार्मिक प्रहार से मारा, अंग में अपार रोग उत्पन्न हो गया, अपार वेदना हुई। अन्न जल के प्रति अरुचि हो गई, निद्रा दूर चली गई। मरणान्त समय आया देख गजनीखान ने विचारा—पार्श्व जिनेश्वर मान चाहते हैं ! उसने कहा – प्रभु, मेरी वेदना रात्रि में शान्त हो गई तो प्रातःकाल आपको अवश्य छोड़ दूंगा ! खान के ऐसा कहते ही वेदना शांत हो गई। खान ने पार्श्वनाथ को सिंहासन पर बैठा कर निरभिमान हो पूजा—सलाम करते हुए कहने लगा—

अल्लाह, अलख और आदम तुम्हीं हो, तुम्हारे जैसा कोई नहीं ! पीर, पैगम्बर, खुदा और सुलतान तुम्हीं हो ! बालक पर कृपा करो ! तुम्हारी आज्ञा कभी उल्लंघन नहीं करूंगा। पीर तो बहुत से हैं पर हे तेवीसवें राय (पार्श्वनाथ !) आप जैसा अन्य कोई नहीं !

इतनी स्तुति करने के पश्चात् संघ को बुलाकर उन्हें पार्श्वनाथ प्रतिमा सौंप दी। जालोर नगर में उत्सव हुआ। नित्य नये वाजित्र वजने लगे। सधवा स्त्रियाँ भास गाने लगी। रंग भर के खेलने लगे, याचकों की आशा पूर्ण हुई।

भ० पार्श्वनाथ की प्रतिमा को रथारूढ़ करके आडंबर पूर्वक जालोर से भिन्नमाल पहुंचाया। संघवी वीरचंद हर्षित हुआ और इस अवसर पर उसने महोत्सव किया, सतरह-भेदी पूजा रचाई। चारों दिशाओं के संघ को आमन्त्रित कर महोत्सव के पश्चात् संघ को पेहरावणी करके बहुमान दिया। शोक-सन्ताप दूर होकर मन के मनोरथ सिद्ध हुए।

सतरहवीं शती की इस घटना को कवि पुण्यकमल ने वर्णित किया है। अन्य तीर्थमाला, चैत्य-परिपाटी आदि में भी वर्णन पाया जाता है।

जालोर का मंत्री यशोवीर

तेरहवीं शताब्दी में जालोर में यशोवीर नाम के तीन नामाङ्कित व्यक्ति हुए हैं। तीनों धनवान, धर्मिष्ठ और राज-समाज में प्रतिष्ठित प्रभावशाली पुरुष थे। प्रथम यशोवीर श्रीमाल यशोदेव के पुत्र थे जिन्होंने महाराजा समरसिंह के समय सं० १२३९ में आदिनाथ जिनालय का रमणीय मण्डप बनवाया। दूसरे भां० पासु के पुत्र भां० यशोवीर थे जिन्होंने सं० १२४२ में महाराजा समरसिंह के आदेश से 'कुमर विहार' का जीर्णोद्धार कराया था। तीसरे यशोवीर का यहाँ परिचय कराना अभीष्ट है।

जालोर के इतिहास में मंत्री यशोवीर का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। उस पर सरस्वती और लक्ष्मी की समान कृपा थी। राजनीति के क्षेत्र से भी वह धर्मनीति और दानवीरता में किसी प्रकार न्यून नहीं था। इसके पिता धर्कट वंशीय दुसाध उदयसिंह और माता का नाम उदयश्री था। जिनहर्ष कृत वस्तुपाल चरित्र में मंत्री यशोवीर के सम्बन्ध में विस्तृत उल्लेख हैं। वह चौहान राजा समरसिंह व उदयसिंह का मंत्री था। उसके निर्माण कराई हुई देवकुलिकाएं आबू तीर्थ की विमलवसही और लूणिगवसही में है, जिनके लेख इस प्रकार हैं :—

(१) संवत् १२४५ वर्षे वैशाख बदि ५ गुरौ श्री यशोदेवसूरि शिष्यैः श्री नेमिनाथ प्रतिमा श्री देवचंद्रसूरिभिः प्रतिष्ठिता। श्रीषंडेरक गच्छे दुसा० श्री उदय सिंह पुत्रेण मंत्री श्री यशोवीरेण मातृ दु० उदयश्री श्रेयोऽर्थं प्रतिमा सतोरणा सद्देवकुलिका कारिता श्रीमद्धर्कट वंशे।

(२) दं० ॥ सं० १२४५ वर्षे। श्रीषंडेरक गच्छे महति यशोभद्रसूरि सन्ताने। श्री शांतिसूरि रास्ते तत्पाद सरोज युग भृंगः ॥१॥ वितीर्णधन संचयः क्षत विपक्ष लक्षाग्रणीः कृतोरु गुरु रैवत प्रमुख तीर्थ यात्रोत्सवः। दधत क्षिति भृतां मुदे विशदधीः सदुःसाधतामभूदुदय संज्ञया विविधवीर चूडामणि ॥२॥ तदंगजन्मास्ति कवीन्द्र बन्धु मंत्री यशोवीर इति प्रसिद्धः। ब्राह्मी रमाभ्यां युगपद् गुणोस्य विरोध शान्त्यर्थं मिवाश्रितोयः ॥३॥ तेन सुमतिना जिनमत

नैपुण्यात् कारिता स्व पुण्याय। श्री नेमिबिंबाधिष्ठित मध्या सद्देव-कुलिकेयं ।।४।। शुभं भवतु ।।छः।।

ये दोनों लेख विमलवसही के हैं, प्रथम तो नेमिनाथ प्रतिमा की चरण चौकी पर व दूसरा स्तम्भ पर है। लूणगवसही में दो देहरियां अपने पिता और माता की स्मृति में बनाई थी जिसमें उपर्युक्त दूसरे लेख की ३ गाथाएं अविकल हैं, केवल पहली गाथा में 'तच्चरणांभोज" और 'तच्चरण सरोज' का अन्तर है। अतः यहाँ सुमतिनाथ और पद्मप्रभ भगवान की देवकुलिकाओं के चतुर्थ श्लोक ही यहां दिये जा रहे हैं।

(३) .....**तेन लुमतिना जिनमत निपुणेन श्रेयसे पितुरकारि।**
श्रीसुमतिनाथ बिंबेन संयुता देवकुलिकेयं ।।४।।छ।।६० ।।छ।।

(४) .....**तेन सुमतिना मातुः श्रेयार्थं कारिता कृतज्ञेन।**
श्रीपद्मप्रभबिंबालंकृत सद्देवकुलिकेयं ।।४।।छ।।६०३।।छ।।

ये चारों लेख "श्री अर्बुद-प्राचीन-जैन-लेख संदोह" के लेखाङ्क १५०-५१ एवं ३५९-३६१ में प्रकाशित हैं। लेखाङ्क ३६० और ३६२ में सुमतिनाथ व पद्मप्रभ की पंच कल्याणक तिथियाँ हैं जिन्हें यहाँ नहीं लिखा गया है।

श्री जयन्तविजयजी महाराज ने जैन सत्यप्रकाश वर्ष २ अंक १० में तीन अभिलेख प्रकाशित किये हैं जो गुडा-बालोतान के हैं। मादड़ी गाँव में यशोवीर का ननिहाल था। वहां इस समय जैनों की बस्ती नहीं है, साठ वर्ष पूर्व मादड़ी गाँव की सीमा में निकली हुई पांच प्रतिमाओं को यति राजविजयजी ने ला कर अपनी बगीची में घर देरासर बना कर विराजमान कर दी थी। उस मादड़ी गाँव में और भी अनेक प्रतिमाएं छिपी पड़ी हैं किन्तु उस समय गाँव का जागीर-दार पावठा का ठाकुर अनुकूल न होने से प्राप्त करना तो दूर पर जैन संघ देख तक न सका था।

इन तीन लेखों में दो लेख मंत्री यशोवीर के हैं, जो इस प्रकार हैं :—

१ संवत् १२८८ वर्षे ज्येष्ठ सुदि १३ बुधे श्री खं (षं)डेरक गच्छे श्री यशोभद्र सूरि संताने दुसाध श्री उदयसिंह पुत्रेण मंत्री श्री यशोवीरेण स्वमातुः श्री उदयाश्रयः श्रेयसे मादड़ी ग्राम चैत्ये जिन युगलं कारितं प्रतिष्ठितं च श्री शांतसूरिभिः।

अर्थात्—सं० १२८८ जेठ सुदि १३ बुधवार को श्री खंडेरक गच्छीय श्री यशोभद्रसूरिजी की परम्परा की आम्नाय वाले दुःसाध विरुदधारक श्री उदय

सिंह के पुत्र मंत्री श्री यशोवीर ने अपनी माता श्री उदयश्री के श्रेय के हेतु मादड़ी गाँव के जिनालय में जिन युगल (कायोत्सर्ग प्रतिमाएं) कराये और उसकी प्रतिष्ठा श्री शांतिसूरिजी ने की ।

दूसरी प्रतिमा पर भी इसी संवत् —मिती का यही लेख है जो मूलनायकजी के दाहिनी ओर है, मुनि जयन्तविजयजी ने उसका लेख अलग से नहीं दिया है ।

२ ॐ श्री खं(षं)डेरक गच्छ सूरि चरणोपास्ति प्रवीणान्वये ।
दुःसाधोदर्यसिंह सूनु रखिल क्ष्माचक्र जाग्रद्यशाः ।
बिंबं शांति विभोश्चकार स यशोवीरो गुरु मंत्रिणा ।
मातुः श्रीउदयश्रियः शिवकृते चैत्ये स्वयं कारिते ॥१॥

ज्येष्ट(ष्ठ) शुक्ल त्रयोदश्यां वसुवस्वर्क वत्सरे ।
प्रतिष्टा(ष्ठा) मादड़ी ग्रामे चक्रे श्री शांतिसूरिभिः ॥

अर्थात् —संडेरक गच्छ के आचार्यों के चरणोपासना में प्रवीण वंशोत्पन्न दुसाध उदयसिंह के पुत्र, समस्त राजाओं में फैली हुई कीर्त्ति वाले यशस्वी महामंत्री यशोवीर ने अपनी मातुश्री उदयश्री के आत्म श्रेयार्थ श्री शांतिनाथ स्वामी की प्रतिमा मादड़ी में अपने बनवाये हुए चैत्यालय में सं० १२८८ ज्येष्ठ सुदि १३ बुधवार को श्री शांतिसूरिजी द्वारा प्रतिष्ठा कराई ।

सं० १२९३ में आबू की लूणिगवसही की प्रतिष्ठा में ८४ राणा, १२ मण्डलिक, ४ महाधर और चौरासी जातियों की विशद सभा में सोभन सूत्रधार द्वारा निर्मित 'लूणिग वसति' के शिल्प कला समृद्ध अद्भुत चैत्य की भूलों के सम्बन्ध में पूछने पर विद्वान मंत्री यशोवीर ने १४ भूलें बतलाई थी, जिसका उपदेशसार टीका में भी उल्लेख है । मंत्रीश्वर ने वस्तुपाल यशोवीर मंत्री के शिल्प शास्त्रादि सभी विद्या कौशल आदि सद्गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी ।

प्रबन्ध-चिन्तामणि (चतुर्थ प्रकाश) में मंत्री यशोवीर के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है कि —

जावालिपुर निवासी मंत्री यशोवीर शिल्प शास्त्रादि का बड़ा अनुभवी विद्वान था । आबू पर तेजपाल मंत्री द्वारा अपने भ्राता की स्मृति में विशाल, 'लूणिगवसही' का निर्माण होकर प्रतिष्ठा के बाद मंत्री यशोवीर को बुलाकर प्रासाद के गुण-दोष का अभिप्राय पूछा । उसने स्थपति शोभनदेव को बुला कर कहा—रंगमण्डप में शाल-भंजिका (पुत्तली) की जोड़ी की विलास घटना,

तीर्थङ्कर प्रासाद में सर्वथा अनुचित और वास्तु शास्त्र से निषिद्ध है। इसी तरह भीतरी गृह के प्रवेश द्वार पर सिंहों का यह तोरण देवता की विशेष पूजा का विनाश करने वाले हैं। तथा पूर्वज पुरुषों की मूर्त्तियों से युक्त हाथियों के सन्मुख प्रासाद का होना बनाने वाले के भविष्य के विनाश का सूचक होता है। इस विज्ञ कारीगर के हाथ से भी जो इस प्रकार के अप्रतिकार्य ये तीन दोष हो गए, ये भावी कर्म का दोष है। ऐसा निर्णय करके वह जैसे आया था, वैसे ही चला गया। उसकी स्तुति के ये श्लोक हैं—

२२० हे यशोवीर, यह जो चन्द्रमा है वह तुम्हारे यश की रक्षा के लिए (किसी की नजर न लग जाय इस लिए) किया गया रक्षा (राख) का 'श्री' कार है।

२२१ हे यशोवीर, शून्य जिसके मध्य में है ऐसे ये बिन्दु यों तो निरर्थक ही हैं पर तुम रूप एक (अंक) के साथ हो जाने से ये संख्यावान बन जाते हैं।

२२२ हे यशोवीर, जब विधाता ने चन्द्रमा में तुम्हारा नाम लिखना प्रारंभ किया तो उसके पहले के दो अक्षर (यशः) ही भुवन में न समा सके।

[१६३] यशोवीर के निकट न कोई [कवि] माघ की प्रशंसा करता है न कोई अभिनंद का अभिनंदन करता है, और कालिदास भी उसके पास कलाहीन (निस्तेज) मालूम देता है।

[१६४] यशोवीर मंत्री ने सज्जनों के साक्षात् (सन्मुख), मुख में रही दाँतों की ज्योति के बहाने ब्राह्मी (सरस्वती) को और हाथ में रही हुई सोने की मुद्रा के बहाने श्री (लक्ष्मी) को प्रकाशित किया।

[१६५] इस चौहान नरेन्द्र के मंत्री ने वैसे गुण अर्जन किए जिनसे ब्रह्मा और समुद्र की पुत्रियों (सरस्वती और लक्ष्मी) को भी नियन्त्रित कर दिया।

[१६६] जहाँ लक्ष्मी है वहाँ सरस्वती नहीं है, जहाँ ये दोनों हैं वहाँ विनय नहीं है। पर हे यशोवीर, यह बड़ा आश्चर्य है कि तुम में ये तीनों विद्यमान हैं।

[१६७] वस्तुपाल और यशोवीर ये दोनों सचमुच ही वाग्देवता (सरस्वती) के पुत्र हैं, नहीं तो फिर इन दोनों का दान करने में एक ही जैसा स्वभाव कैसे होता ?

चन्द्रगच्छीय खरतर सा० सलखण

आबू तीर्थ की विमलवसही के स्तंभादि पर उत्कीर्णित लेख से विदित होता है कि सं० १३०७ में जावालिपुर के खरतरगच्छीय श्रावक सलखण ने भगवान आदिनाथ के सर्वांगाभरणों का जीर्णोद्धार कराया था, जिसका लेख इस प्रकार है :—

संवत् १३०८ वर्षे फाल्गुण बदि ११ शुक्रे श्री जावालिपुर वास्तव्य चन्द्र-गच्छीय खरतर सा० दुलह सुत सधीरण तत्सुत सा० वीजा तत्पुत्र सा० सलखणेन पितामही राजू माता साउ भार्या माल्हणदेवि (वी) सहितेन श्री आदिनाथ सत्क सर्वांगाभरणस्य साऊ श्रेयोर्थं जीर्णोद्धारः कृतः ॥

अर्थात् —सं० १३०८ मिती फाल्गुन बदि ११ को जावालिपुर निवासी खरतर गच्छीय सा० दुलह पुत्र सधीरणतत्पुत्र वीजा के पुत्र सा० सलखण को अपनी पितामही राजू, माता साऊ और भार्या माल्हणदेवी आदि के साथ माता साउ के श्रेय-कल्याण निमित्त श्री आदिनाथ भगवान के सर्वांगाभरणों का जीर्णोद्धार कराया।

नागौर के वरहुडिया साहु नेमड़ का परिवार

सं० १२९६ मिती वैशाख सुदि ३ की आबू की लूणिगवसही की प्रशस्ति जो प्राचीन जैन-लेख-संग्रह के लेखाङ्क ६६ में प्रकाशित है, उसमें नागौर के वरहुडिया साहु नेमड़ सुत सा० राहड़ सा० जयदेव, सहदेव पुत्र सा० खेटा, गोसल, जयदेव के पुत्र सा० वीरदेव, देवकुमार, हालू एवं राहड़ के पुत्र सा० चिणचन्द्र, धनेश्वर, अभयकुमार लघु भ्रातृ लाहड़ ने अनेक स्थलों-तीर्थों-मन्दिरों में जो निर्माण कराये, उनका उल्लेख है यह अभिलेख ४५ पंक्ति में है। पंक्ति ३२-१३ दोवार लिखा प्रतीत होता है। इसमें जालोर के पार्श्वनाथ चैत्य की जगती में श्री आदिनाथ बिम्ब और देवकुलिका निर्माण कराने का उल्लेख १३-१४वीं पंक्ति में है तथा ३३-३४वीं पंक्ति में फिर पार्श्वनाथ चैत्य की जगती में अष्टापद (देहरी) में खत्तक द्वय निर्माण कराने का उल्लेख इस प्रकार है :—

"श्री जावालिपुरे श्री पार्श्वनाथ चैत्य जगत्यां श्री आदिनाथ बिंब देवकुलिका च"
"श्री जावालिपुरे श्री सौवर्णगिरौ श्री पार्श्वनाथ जगत्यां अष्टापद मध्ये खत्तक द्वयं च"

जालोर में रचित साहित्य

जैन धर्म में ज्ञान-दर्शन-चारित्र त्रिरत्न को मोक्ष का मार्ग बतलाया है। स्वर्णगिरि-जालोर तीर्थ इनकी सम्यक् आराधना में गत दो सहस्राब्दी से अग्रणी रहा है। विश्व साहित्य में आदरणीय स्थान पाने वाले महान ग्रन्थों का यहाँ निर्माण हुआ, दर्शन के आधारभूत महान् जिनालयों के निर्माण कार्य विक्रम की दूसरी शती से अब तक अनवरत होता रहा। भारत पर यवन राज्य ग्रहण से ग्रसित हो अनेक पावन जिनालय भूमिसात् कर दिए गए पर समय-समय पर जीर्णोद्धार-नव निर्माण द्वारा आज भी भव-समुद्र से तिराने वाले तीर्थ के रूप में आज भी यह पवित्र तीर्थ गौरवान्वित है। यहाँ महान् जैनाचार्यों ने विचरण कर अपने चरण रज से पवित्र किया, अनेक नव्य जैनों को प्रतिबोध दिया और अपने सारभूत उपदेशों को अक्षर देह-ग्रन्थ रूप में निर्माण कर भावी पीढी के लिए प्रकाशस्तभ स्थापित किये। राजस्थान में चित्तौड़ और भिन्नमाल की भाँति जालोर-स्वर्णगिरि भी श्रुत-ज्ञान की सेवा में अग्रणी रहा है। यहाँ उन महान् ग्रन्थों का संक्षेप में परिचय दिया जा रहा है।

(१) कुवलयमाला

विश्व साहित्य के महत्वपूर्ण ग्रन्थों में अपना स्थान प्राप्त करने वाले कुवलय-माला ग्रन्थ की रचना भी जावालिपुर-जालोर में हुई। वि० सं० ८३४ (शक सं० ६९९) के अन्तिम दिन में उद्योतनसूरि नामक जैनाचार्य ने अपना नाम दाक्षिण्यांकसूरि रख कर इसकी रचना की है। यह ग्रन्थ प्राकृत साहित्य का एक अमूल्यरत्न है इसकी रचना बाण की कादम्बरी और त्रिविक्रम की दमयन्ती कथा की भाँति चम्पू शैली में है। इस मनोरम कृति में प्राकृत भाषा के अतिरिक्त अपभ्रंश और पैशाची भाषा में भी किए हुए वर्णन भाषाशास्त्र की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं। अपभ्रंश भाषा के उदाहरण सर्वप्राचीन हैं और अठारह देशों में प्रयुक्त होने वाली भाषा का आभास मिलता है। कवि ने अपने से पूर्ववर्त्ती पादलिप्त, सातवाहन, षटपर्णक, गुणाढ्य व्यास, वाल्मीकि, बाण, विमलाङ्क, दि० रविषेण, देवगुप्त, प्रभंजन और भव-विरह (हरिभद्र) आदि कवियों को भी स्मरण किया है।

कवि ने अपना विशेष परिचय देते हुए ग्रन्थ के अन्त में लिखा है कि 'ह्रीं' देवी के दर्शन के प्रताप से यह कथा लिखी है। अपने को सिद्धान्त सिखाने वाले गुरु वीरभद्र और युक्ति सिखाने वाले गुरु ·····को माना है। अपने सांसारिक अवस्था के पूर्वज आदि का परिचय देते हुए लिखा है कि त्रिकर्माभिरत, महादुकर में प्रसिद्ध उद्योतन नामक क्षत्रिय हुआ जो वहां का तत्कालीन भूमिपति था। उसका पुत्र संप्रति या वडेसर कहलाता था। उसके पुत्र उद्योतन ने जावालिपुर नगर में वीरभद्र कारित श्री ऋषभदेव जिनालय में चैत्र कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दिन भव्यजन को बोध देनेवाली इस कथा का निर्माण किया। उस समय वहां श्री वत्सराज नामक राजा राज्य करता था। कवि ने अपना चन्द्रकुल लिखा है। काव्य बुद्धि या कवित्वाभिमान से नहीं पर धर्म कथा कहने के आशय से इस ग्रन्थ की रचना की है। कवि के दीक्षा गुरु तत्त्वाचार्य थे।

प्रतिहार वंशी राजा वत्सराज जावालिपुर में राज्य करते हुए भी गौड़, बंगाल, मालव प्रदेशों में दिग्विजय करके उत्तरापथ में महान् राज्य स्थापित करने में उद्यमशील था।

२. **चैत्यवन्दनक**—जैन धर्म में फैले हुए चैत्यवास शिथिलाचार को दूर कर विधिमार्ग प्रकाशक, दुर्लभराज की सभा, पाटन में खरतर विरूद प्राप्त करने वाले जैनाचार्य जिनेश्वरसूरि ने सं० १०८० का चातुर्मास जावालिपुर-जालोर में करके प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना की।

३. **अष्टक प्रकरण वृत्ति**—यह रचना भी सं० १०८० में श्री जिनेश्वरसूरिजी ने की।

४. **पंच ग्रन्थी व्याकरण**—उपर्युक्त श्री जिनेश्वरसूरिजी के गुरु भ्राता श्री बुद्धिसागरसूरिजी ने इसी सं० १०८० के चातुर्मास में ७००० श्लोक परिमित इस महान् व्याकरण ग्रन्थ की रचना की है। इसकी प्रशस्ति के ११वें श्लोक में रचना समय और स्थान का निर्देश इस प्रकार है :—

श्रीविक्रमादित्य नरेन्द्र कालात् साशीतिके याति समा सहस्रे।
सश्रीक जावालिपुरे तदाद्यं दृब्धं मया सप्त सहस्र कल्पम् ॥११॥

५. **विवेक विलास**—यह ग्रन्थ अनेक व्यवहारिक विषयों से संपृक्त है जिसकी रचना वायड़गच्छीय श्री जिनदत्तसूरिजी ने जावालिपुर नरेश चाहमान उदयसिंह के मंत्री देवपाल के पुत्र धनपाल के लिए की है जिसकी प्रशस्ति यहां उद्धृत की जाती है।

विवेक विलास प्रशस्ति :

अस्ति प्रीतिपदं गच्छो जगतः सहकारवत् ।
जन पुंस्कोकिलाकीर्णा वायड़ स्थानक स्थितिः ॥१॥

आम्रवृक्ष के तुल्य जगत् को प्रीति उपजाने वाले और श्रेष्ठ पुरुष रूपी कोकिलों से व्याप्त ऐसा वायड़ नामक गच्छ है ।

अर्हन् मत पुरी वप्र-स्तत्र श्री राशिलः प्रभुः ।
अनुल्लंघ्यः परैर्वादि-वीरैः स्थैर्य गुणैक भूः ॥२॥

उस गच्छ में, जनमत रूपी नगरी के रक्षक किले के सदृश, वादि रूपी शूरवीरों से अजेय और स्थिरता आदि सद्गुणों के निवास स्थान ऐसे राशिल (सूरि) प्रभु हुए ॥

गुणाः श्रीजीवदेवस्य, प्रभो रद्भुत केलयः ।
विद्वज्जन शिरोदोलां यन्नोज्झन्ति कदाचन ॥३॥

श्री जीवदेव गुरु महाराज के गुणों की लीला कुछ अद्भुत है । क्यों वे (गुण) विद्वज्जनों के मस्तक रूपी झूले को किसी समय नहीं छोड़ते । अर्थात् विद्वान लोग हमेशा शिरधुन कर श्रीजीवदेव महाराज के गुणों की प्रशंसा करते हैं ।

अस्ति तच्चरणोपास्ति - संजात स्वस्ति विस्तरः ।
सूरिः श्री जिनदत्ताख्यः ख्यातः सूरिषु भूरिषु ॥४॥

उन जीवदेव महाराज के चरण सेवा से कल्याण-परम्परा प्राप्त श्रीजिनदत्त-सूरि नामक आचार्य सब आचार्यों में प्रसिद्ध हैं ।

चाहुमानान्वय पाथोधि - संवर्धनविधौ विधुः ।
श्रीमानुदयसिंहोऽस्ति, श्रीजावालिपुराधिपः ॥५॥

चाहुमान (चौहान) वंश रूप समुद्र को उल्लास देने को चन्द्रमा सदृश श्रीउदयसिंह जाबालिपुर का राजा ।

तस्य विश्वास सदनं, कोश रक्षा विचक्षणः ।
देवपालो माहामात्यः, प्रज्ञानन्दन चन्दनः ॥६॥

उस उदयसिंह राजा का विश्वास स्थान, कोश-भण्डार की रक्षा में निपुण देवपाल नामक महामंत्री बुद्धिरूपी नन्दन वन में चन्दन जैसा यानी बड़ा बुद्धि-शाली है।

आधारः सर्वधर्माणा - मवधिर्ज्ञान शालिनाम्।
आस्थानं सर्वपुण्याना - माकर सर्वसम्पदाम् ॥७॥

प्रतिपन्नात्मजस्तस्य, वायड़ान्वय सम्भवः।
धनपाल शुचिर्धीमान् विवेकोल्लासि मानसः ॥८॥

सर्व धर्मों का आधार ज्ञानशाली लोगों में अग्रसर, सब पुण्यों का वसतिस्थान सब सम्पदाओं की खान पवित्र, बुद्धिशाली, विवेक विकसित मनवाला वायड़ वंशोत्पन्न धनपाल नामक देवपाल का पुत्र है।

तन्मन स्तोष पोषाय, जिनाद्यैर्दत्तसूरिभिः।
श्री विवेकविलासाख्यो, ग्रन्थोऽयं निर्ममेऽनघः ॥९॥

श्री जिनदत्तसूरिजी ने उस धनपाल के मन को सन्तुष्ठ करने के लिए यह विवेकविलास नामक पवित्र ग्रन्थ रचा है।

देवः श्री धरणो भुजंगम गुरुर्यावद्युगादि प्रभोः,
श्री मद्विश्व विदः प्रविस्फुर कलालंकार शृङ्गारिणः।

भक्ति व्यक्ति विशेषमेष कुरुते तावच्चिरं नन्दतात्,
ग्रन्थोऽयं भृशमश्लथादरपरैः पापठ्यमानो बुधैः ॥१०॥

नागकुमार का स्वामी श्री धरणेन्द्रदेव, स्फुरण पाती हुई सब कलाओं को शोभा देने वाली और सर्वज्ञ श्री युगादि नाथ ऋषभ भगवान की अतिशय भक्ति जहां तक प्रगट करता है वहां तक पंडित पुरुषों के द्वारा आदर से और बार-बार पढ़ा जाने वाला यह विवेकविलास ग्रन्थ चिरकाल तक आबाद रहे।

६. **जीवदया रास**—कवि आसिगु जालोर निवासी था। उसने सं० १२५७ में इस रास की रचना की है।

आदि—उरि सरसति आसिगु भणइ, नवउ रासु जीवदया सारु।
कन्नु धरिवि निसणेहु जण, दुत्तरु जेम तरहु संसारु ॥१॥

× × ×

जालउरउ कवि वज्जरइ, देहा सरवरि हंसु वखाणउं ॥२॥

× × ×

वंदहु सामिउ पास-जिणु, जालउरागिरि कुमर विहारि ॥४९॥

अंति—वाला-मंत्रि तणइ पाछोपइ, वेहल महिनंदन महिरोपइ ?
तसु सक्खहं कुलचंद फलु, तसु कुलि आसाइत अच्छंतु ।
तसु वलहिय पल्ली पवर, कवि आसिगु वहुगुण संजुत्तु ॥५१॥

सातउ परिया कवि जालउरउ, माउसालि सुम्मइ सोयलरउ ।
आसी दव दोही वयण, कवि आसिगु जालउरह आयउ
सहजिगपुर पासह भवणि, नवउ रासु इहु तिणि निप्पाइउ ॥५ ॥

संवत बारह सय सत्तावन्नइ (१२५७), विक्कम कालि गयइ पडिपुन्नइ ।
आसोयहँ सिय-सत्तमिहिं हत्थो हत्थि जिण निप्पायउ ।
संतिसूरि-पय-भत्तयरि, रयउ रासु भवियहँ मण मोहणु ॥५३॥

७. **चंदनबाला रासु**—यह रास भी उपर्युक्त कवि आसिगु की रचना है ।

अंत—एहु रासु पुण वुड्ढिहि जंतो, भाविहिं भगतिहिं जिणहरि दिंतो ।
पढइँ पढावइ जे सुणइ, तह सवि दुक्खइँ खइयह जंती ॥
जालउर-नयरि आसिगु भणइ, जम्मि जम्मि तूसउ सरसत्ती ॥३५॥

८. **प्रबुद्ध रोहिणेय नाटक**—सं० १२६८ वादिदेवसूरि प्रशिष्य रामभद्र

९. **शांतिदेव रासु**—यह रचना सं० १३१३ में लक्ष्मीतिलकोपाध्याय ने की । जालोर के राजा उदयसिंह के राज्य में स्वर्णगिरि पर फाल्गुन सुदि ४ को श्री जिनेश्वरसूरि द्वारा महोत्सव पूर्वक स्थापना करने का उल्लेख निम्नोक्त गाथाओं में है—

जालउर उदयसिंह-रज्जि सोवनगिरी
उवरि सो संति ठाविउ जिणेसरसूरी
पवर-पासाय - मज्झंमि संवच्छरे
फग्गुण-सिय-चउत्थि तेरहइ तेरुत्तरे ॥४८॥

जेम इंदिहि जेम इंदिहि लच्छि-विच्छड्डि,
नेऊण सोवन्नगिरि संतिनाहु जम्मक्खणि न्हाविउ ।
तिम गुरुयाडंबरिण सिरि-सुवन्नगिरि-उवरि ठाविउ ॥
जयतसिंह-इंद-प्पमुह, इंदहि न्हाविज्जंतु ।
सयल संघ-दुरियइ हरउ, संतिनाहु अइकंतु ॥४९॥

१० **श्रावक धर्म विधि वृहद् वृत्ति**—इसे १५१३१ श्लोकों में श्रीलक्ष्मीतिलकोपाध्याय ने सं० १३१७ माघ सुदि १४ के दिन जालोर में रचा। यह मूल प्रकरण श्री जिनेश्वरसूरि कृत है। प्रशस्ति गत निम्नोक्त २ श्लोक उद्धृत किये जाते हैं—

"श्रीबीजापुर-वासुपूज्य भवने हेमःसदण्डो घटो,
यत्रारोप्य थ वीर चैत्य मसिधत् श्री भीमपल्यां पुरि।
तस्मिन् वैक्रम वत्सरे मुनि शशि त्रेतेन्दु माने (१३१७) चतु-
दश्यांमाघ सुवीह चाचिगनृपे जावालिपुर्यां विभौ॥
वीरार्हद्-विधि चैत्य मण्डन जिनाधीशां चतुर्विंशति-
सौधेषु ध्वजदण्ड-कुम्भ पटलीं हैमीं महिष्ठैर्महैः।
श्रीमत्सूरि जिनेश्वराः युगवरा प्रत्यष्ठु रस्मिन् क्षणे,
टीकाऽलङ्कृति रेषिकाऽपि समगात् पूर्त्ति प्रतिष्ठोत्सवम्॥

अर्थात्—जिस वर्ष बीजापुर के वासुपूज्य जिनालय पर सुवर्णदण्ड एवं स्वर्ण कलश चढ़ाये गए और जिस वर्ष में भीमपल्लीपुर में वीर प्रभु का चैत्य सिद्ध हुआ, उस विक्रम संवत् १३१७ में माघसुदि १४ के दिन यहाँ जावालिपुर-जालोर में चाचिग राजा के राज्यकाल में वीर जिनेश्वर के विधि-चैत्य के मण्डन रूप चौवीस जिनेश्वरों के मन्दिरों पर बड़े महोत्सव पूर्वक युगप्रधान श्री जिनेश्वरसूरि ने ध्वजा दण्ड के साथ स्वर्ण-कलशों की प्रतिष्ठा की। उसी क्षण यह टीका रूपी अलंकार भी परिपूर्ण प्रतिष्ठित हुआ।

११. **श्रावकदिनचर्या**—संवेगरंगशाला नामक १८००० श्लोक परिमित महान् ग्रन्थ के रचयिता श्री जिनचंद्रसूरिजी जब जावालिपुर पधारे तो उन्होंने "चीवंदणमावस्सय" आदि गाथाओं का व्याख्यान श्रावक संघ के समक्ष किया। इसमें जो सैद्धान्तिक संवाद आये वे सूरिजी के शिष्य ने लिख लिए जिससे ३०० श्लोक परिमित 'दिनचर्या' ग्रन्थ तैयार हो गया जो श्रावकों के लिए बड़ा उपकारी है।

१२. **निर्वाणलीलावती कथा सार**—श्री जिनेश्वरसूरिजी द्वारा सं० १०९२ में रचित निर्वाणलीलावती कथा के सार रूप श्री जिनरत्नसूरि ने सं० १३४१ में जावालिपुर में इस ग्रन्थ की रचना की जिनकी २६७ पत्र की कागज पर लिखी प्रति (क्रमाङ्क ३५१) में जेसलमेर भंडार में है जिसमें निम्न उलेख है—

मार्गा····दि····शि पुष्य योगे जावालिपतन वरेऽथ समर्थितोऽयम्।
प्रत्यक्षर गणनया····पञ्चाशताढ्यं साढ्यंत्रिशत्यधिक युक्त मनुष्टुभांभोः ॥१८॥

१३. **महावीर कलश गा०-२९**—इस अज्ञात कर्त्तृक रचना का उल्लेख जैन मरु-गूर्जर कवि और उनकी रचनाएं पृ० ४५ में है।

१४. **जालोर नवफणा पार्श्व १० भव स्तवन**—यह गा० ३५ की रचना सं० १५४३ में पद्ममन्दिर की है जिसकी प्रति सं० १५४६ लिखित जैसलमेर भण्डार के गुटके में है।

१५. **सुमित्रकुमार रास**—पिप्पलक विवेकसिंह शि० धर्मसमुद्र का यह रास सं० १५६७ में रचित उपलब्ध है।

१६. **शील रास**—सं० १६१२ से पूर्व श्री विजयदेवसूरि द्वारा भ० नेमिनाथ के सम्बन्ध में यह जालोर में रचित है।

१७. **विल्हण पंचाशिका चौपाई**—सं० १६३९ आ० सु० १ को मडाहड़ गच्छीय सारंग कवि की रचना गा० ४१२ की है।

१८. **मातृका बावनी**—सं० १६४० पौष बदि १० गुरुवार, मडाहड़ गच्छीय कवि सारंग।

१९. **भोज प्रबन्ध चौपाई**—सं० १६५१ श्रावण बदि ९ जालोर, मडाहड़ गच्छीय कवि सारंग।

२०. **वीरांगद चौपाई**—सं० १६४५ ज्येष्ठ सुदि ५ जालोर मडाहड़ गच्छीय कवि सारंग।

२१. **भावषट्त्रिंशिका सटीक**—सं० १६७५ आषाढ़ सुदि ५ जालोर मडाहड़ गच्छीय कवि सारंग।

२२. **जालोर चैत्य परिपाटी**—सं० १६५१ में नगर्षि कृत है।

२३. **वरकाणा पार्श्वनाथ स्तोत्र**—*सं० १६५१ जालोर नगर्षि गा-७१।

२४. **पार्श्वनाथ स्तवन**—(संस्कृत) गा० १३ सतरहवीं शती के कवि ज्ञान-प्रमोद।

२५. **सूक्ति द्वात्रिंशिका विवरण**—तपा गच्छीय कवि राजकुशल द्वारा सं० १६५० में गजनीखान के राज्य में।

२६. **मदनकुमार चरित्र रास**—दयासागर (पिप्पलक उदयसमुद्र शि०) सं० १६६९ लघु गुरु-बंधु देवनिधान के आग्रह से।

२७. **शत्रुञ्जय यात्रा रास**—सं० १६७९ हेमधर्म शि० विनयमेरु।

२८. **वृत्त रत्नाकर वृत्ति**—समयसुन्दरोपाध्याय सं० १६९४ जालोर—लूणिया फसला के स्थान में।

२९. **क्षुल्लककुमार चौपाई**—समयसुन्दरोपाध्याय सं० १६९४ जालोर—लूणिया फसला के स्थान में।

३०. **चम्पक सेठ चौपाई**—समयसुन्दरोपाध्याय सं० १६२५ जालोर

३१. **सप्त स्मरण वृत्ति**—समयसुन्दरोपाध्याय सं० १६९५ लूणिया फसला प्रदत्त बसति में शि० हर्षनंदन स०।

३२. **कथा कोश**—समयसुन्दरोपाध्याय सं० १६९५ चैत सुदि ५ लि० ग्रं ६०००

३३. **परिहां (अक्षर) बत्तीसी**—धर्मवर्द्धन सं० १७३५ जालोर।

३४. **रोहिणी चोपाई**—कर्मसिंह (पायचंद गच्छ) सं० १७३७ का० सु० १० रवि जालोर।

३५. **जालोर मंडन षट् जिणहर स्तवन**—गा० १७ मतिकुशल सं० १७२७।

३६. **रसिक प्रिया टीका**—समयमाणिक्य (समरथ) सं १७५५।

३७. **प्रदेशी संबंध**—तिलकचंद (जयरंग शिष्य) सं० १७४१ जालोर।

३८. **समयसार बालावबोध**—*रामविजय (ख० दयासिंह शि०) सं० १७९२ स्वर्णगिरि।

३९. **साधु वन्दना**—जयमल सं० १८०७ जालोर।

४०. **अजितनाथ स्तवन**—जयमल सं० १८०७ जालोर।

*पृथ्वी पति विक्रम के राज मरजाद लीन्है, सत्रहसैवीते पर बानुआ वरस में।
आसू मास आदि द्यौस संपूरन ग्रंथ कीन्हौ, वारतिक करिकै उदार वार ससि में ।।

जो पै यहु भाषा ग्रंथ सबद सुबोध याकौ, तोहू बिनु संप्रदाय नावै तत्व वस में।
यातें ज्ञान लाभ जानि संतनि कोवैन मानि बात रूपग्रंथ लिख्यौ महाशान्त रस में ।।

खरतर गच्छ नाथ विद्यमान भट्टारक जिनभक्तिसूरिजू के धर्म राज धुर में।
खेम साख मांझि जिनहर्षजू वैरागी कवि शिष्य सुखवर्द्धन सिरोमनि सुघर में ।।

ताके शिष्य दयासिंघ गणि गुणवंत मेरे धरम आचारिज विख्यात श्रुतधर में।
ताको परसाद पाइ रूपचंद आनंद सौं पुस्तक बनायो यह सोनगिरि पुर में ।।

मोदी थापि महाराज जाकौं सनमान दीन्हौ फतैचंद पृथीराम पुत्र नथमाल के।
फतैचंद जू के पुत्र जसरूप जगन्नाथ गोत गुनधर में धरैया शुभ चाल के ।।

तामें जगन्नाथ जू के बूझिवै के हेतु हम व्यौरि के सुगम कीन्है वचन दयाल के।
वांचत पढत अब आनंद सदा ए करो संगि ताराचंद अरु रूपचंद बाल के ।।

देशी भाषा कौ कहूं, अर्थ विपर्यय कीन।
ताकौ भिच्छा दुक्कड़ं सिद्ध साख हम कीन ।।

★अंत—चंद्र अनइ रस जाणीइ तु भमरुली बाण वली ससी जोइ तु सा नवरंगी,
ते संवच्छर नाम कहुतु भमरुली सावण सुदि तिय होइ सा नवरंगी····६९
श्री जालुर नयर भलुं तु भमरुली, जिणहर पंच विसाल सा नवरंगी,
हरखि तिहां मइं तवन करुं तु भमरुली, भणतां मंगलमाल सा नवरंगी····७०

कान्हड़दे प्रबन्ध में जालोर वर्णन

कवि पद्मनाभ का कान्हड़दे प्रबन्ध राजस्थानी का एक सर्वोत्तम महाकाव्य है जिसमें अल्लाउद्दीन खिलजी के साथ कान्हड़दे-वीरमदे के युद्धों का प्रामाणिक इतिवृत्त है। इसमें जालोर नगर का बड़ा ही सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है, यहां उसका कुछ अंश उद्धृत किया जाता है :—

श्रीनगर जालहुर तणी रचना। गढ मढ मन्दिर पोलिपगार। अट्टालीय। मालीयां टोडडे त्रिकलसं गगन चुम्बित कोसीसां। सातखणां धवलगृह। रम्य प्रवेश।

सूकड़िया गवाक्ष। मलयागिरी जाली। कृष्णागिरि थांभली। मणिबद्ध काचबद्ध भूमि। उराउरी वलभी। पगथीयांरी चउकीसर चूनालूआं। शतभूमिका सहस्रभूमिका सभा नी रचना।

महाराजाधिराज श्री कान्हड़दे सभा पूरी बइठउ छइ। सिंहासनि पाउ परठिउ छइ। मेघवना उलच बांध्या छइ। परीयछ ढली छइ। केतकी ना गंध गहगहीया छइ। सोरभना सोड़ सांचरिया छइ। सभा मांहि सेरी मेल्हाणी छइ। जाइ वेली वालउ पाडल ना परिमल पंचवर्ण पुष्फजाति ना प्रकर पाथरिया छइ। गुल्लाल ना गंध गह गहीया छइ। पडीयां कपूर पाए चंपाइ छइ। घोड़ा वही-आलइ घालोया छइ। हाथीयानी सारसी आगलि कानि पडिउं कांइ नथी संभलातुं। पंच शब्द वाजित्र वाजइ छइ। गल्यां पीतल रतांजणी तणां पषावज धौंकार करइ छइ। नृत्यकी पात्र नृत्य करइ छइ। तत वितत घन शुखिर पंचवर्ण वाजित्र वाजइ छइ। पंच वर्ण छत्र धरियां छइ। चामर व्यिजन बिहूं पषि हुइ छइ। अमात्य प्रधान सामंत मंडलीक मुकुट वर्द्धन श्रीगरणा वइगरणा धर्मादि करणा मसाहणी टावरी बारहीया पुरुष वइठा छइ।

॥ चउपई ॥

कोठा नइ कोसीसां घणां, गुष बार मढ मतवारणां।
वली धवलहर जोयां चडी, रतन जडित बइठी फूदडी ॥२४२॥

राजलोक जोया कुंयरी, जिहां कान्हड़नी अंतेउरी।
कूंयरि करइ केतलउं वषाण, जोया पंच वर्ण केकाण ॥२४३॥

॥ दूहा ॥

कणयाचल जणि जाणीइ, ठाम तणउ जावालि ।
तहीं लगइ जगि जालहुर, जण जंपइ इणि कालि ॥५॥

विषम दुर्ग सुणीइ घणा, इसिउ नही आसेर ।
जिसउ जालहुर जाणीइ, तिसउ नहीं ग्वालेर ॥६॥

चित्रकूट तिसउ नहीं, तिसु नहीं चांपानेर ।
जिसउ जालहुर जाणीइ, तिसउ नहीं भांभेर ॥७॥

मांडवगढ तिसउ नहीं, तिसउ नहीं सालेर ।
जिसउ जालहुर जाणीइ, तिसउ नहीं मूलेर ॥८॥

॥ चउपई ॥

वसइ नगर गिरि ऊपरि घणउँ, किसूं वर्णवउं तलहटी तणउं ।
वेद पुराण शास्त्र अभ्यसइ, इस्या विप्र तिणि नयरी वसइ ॥९॥

विद्यावाद विनोद अपार, विनय विवेक लहइ सुविचार ।
राजवंश वसइ छत्रीस, छिन्नू गुण लक्षण बत्रीस ॥१०॥

चाहूआण राउ तिणिठाइ, अबला विप्र मानीइ गाइ ।
छत्रीसइ दंडायुध धरइ, हीण कर्म को नवि आचरइ ॥११॥

च्यारि वर्ण उत्तम जाणीया, विवहारीया वसइ वाणीया ।
वुहरइ वीकइ चालइ न्याय, देसाउरि करइ विवसाय ॥१२॥

जलवट थलवट चिहुं दिसि तणी, वस्त विदेसी आवइ घणी ।
वीसा दसा विगति विस्तरी, एक श्रावक एक माहेसरी ॥१३॥

फडीया दोसी नइ जवहरी, नामि नेस्ती कामइ करी ।
विविध वस्तु हाटे पामीइ, छत्रीसे किरीयाणां लीइ ॥१४॥

नगरि मांडवी वारु पीठ, आछी षेरा चोल मंजीठ ।
पाडसूत्र पटूआ सालवी, वुहरइ वस्त अणावइ नवी ॥१५॥

कंसारा नट नाणुटीआ, घडिया घाट वेचइ लोहटीजा।
कागल कापड़ नइ हथियार, साथि सुदागर तेजी सार ॥१६॥

तल्यां सूषडां तोलइ मान, नागरवेलि अणीआलां पान।
इणिपरि वस्त विकाइ बहू, जे जोईइ ते लाभइ सहू ॥१७॥

घडी घडी घडीयाले सान, राति दिवस नुं लाभइ मान।
चहुटां चउक चउतरा घणां, ठामि ठामि मांडइ पेषणां ॥१८॥

सेरी सांथ मोकली वाट, नगर मांहि छोह पंकित हाट।
घांची मोची सूई सूतार, वसइ नगर मांहि वर्ण अढार ॥१९॥

गांछा छीपानइ तेरमा, विवसाईया वसइ नगरमां।
जापापणि काजि सहु मिलइ, चहुटइ हईइ हईउं दलइ ॥२०॥

आसापुरी आदि योगिनी, देव चतुर्मुख गणपति अनी।
कान्ह स्वामि गिरूआ प्रसाद, शिषर तडोवडि लागु वाद ॥२१॥

आठ पुहर नितपूजा करइ, ईडे ध्वजा वस्त्र फरहरइ।
वलतइ वारि हुइ नितुजात्र, नाटक नृत्य नचावइ पात्र ॥२२॥

पूरइ प्रत्या ध्याइ लोक, भूष दूष नइ टालइ शोक।
जोइ जिणालां ठाम विसाल, वसही देहरां नइ पोसाल ॥२३॥

गढ ऊपरि जल ठाम विसाल, झालर वावि कुंड जावालि।
वारू वावि मांडही तणी, साहण-वावि अति सोहामणी ॥२४॥

राणी तणी वावि गंभीर, नटरष वावि निरमल नीर।
सोभित बुर्ज बुर्ज काकरउ, नदी तरूअर ऊमाहरउ ॥२५॥

साल्हा चउकी करहड़ी जाणि, कान्हमेर रूयड़उ वषाणि।
साल्हा वाडी तरूअर चंग, राय तणउ छइ मंडप रंग ॥२६॥

जीणइ वसइ जालउरउ कान्ह, राज ऋद्धि छइ इंद्र समान।
राम पोलि अतिरुलियामणी, त्रिणइ पोलि तलहटी तणी ॥२७॥

पोलि फूटरी पाटण तणी, चीत्रुडी नइ ढीली तणी।
बारी पोलि भलेरउ भाव, कुंअर तणउ तलहटी तलाव ॥२८॥

सूंदर नाम तलावह जेउ, भोलेलाव कचोली बेउ।
पाणी तणी पर्व अपार, सहू को मांडइ सत्रूकार ॥२९॥

जे पहिरइ मुद्रा कांथड़ी, आवइ जती जोगी कापड़ी।
देसंतरि पंषीया भाट, अन्न अवारी पूछइ वाट ॥३०॥

तरुअर छांह परस चउवटे, राउत रमइ नितु जूवटे।
नगर नायका रूप अपार, नितु नितु करइ नवा सिणगार ॥३१॥

तास तणा मंदिरि वीसमइ, भोगी पुरुष तेहस्यूं रमइ।
वावि सरोवर वाडी कूआ, नगर निवेसि ढलइ ढींकूआ ॥३२॥

गढ गिरुउ जिसउ कैलास, पुण्यवंत नउ ऊपरि वास।
जिसउ त्रिकूट टांकणे घड़िउ, सपत घात कोसीसे जडिउ ॥३३॥

घणी फारकी विसमा मार, जीणइ ठामि रहइ जूझार।
झूझ बाणनी समदावली, विसमा वार वहइ ढींकुली ॥३४॥

गोला यंत्र मगरवी तणा, आगइ गढ ऊपरि छइ घणा।
ऊपरि अन्न तणा कोठार, व्यापारीया न जाणूं पार ॥३५॥

माणिक मोती सोना सार, गढ मांहि गरथ भरिया भंडार।
टांकां वावि भरचां घी तेल, वरस लाष पहुचइ दीवेल ॥३६॥

जूनां सालणा सूकां षड, ईधण भणी घणा लाकड़।
जालहुर गढ विसमउ घणउ, चाहूआण राय नूं बइसणउ ॥३७॥

यह रचना संवत् १५१२ की है, इसका रचयिता अवश्य ही राजवंश से संबन्धित था जिसने विश्वसनीय ऐतिहासिक तथ्यों पर प्रकाश डाला है। जब गुजरात पर आक्रमण करने अलाउद्दीन की सेना जा रही थी तो वीर कान्हड़दे ने मार्ग देना अस्वीकार कर दिल्ली सल्तनत से शत्रुता मोल ले ली थी पर सोमनाथ और गुजरात को तहस नहस कर वह मारवाड़ की ओर बढ़ी तो सोनगरा चौहान

सेना ने वीरता पूर्वक मुकाबला करके शाही सेना को असफल कर दिया सुल्तान ने पुनः आक्रमण करना तय किया और उसने समीयाणे पर आक्रमण किया। कान्हड़दे ने अपने भतीजे शीतलसिंह की भरपूर सहायता की और शाही सेना को हरा दिया। सुल्तान ने दूसरी वार सयियाणा पर स्वयं सदल बल आक्रमण किया और सात वर्ष डेरा डाले रहा अन्त में गो मांस से जलाशय को अपवित्र करने के कुत्सित उपाय से उस पर आधिपत्य कर लिया। फिर उसने आधीनता स्वीकार करने के लिए कान्हड़दे के पास प्रस्ताव भेजा जिसे अस्वीकार करने पर अलाउद्दीन ने जालोर पर आक्रमण किया और जालोर के समीप ही शाही सेना ने पड़ाव डाला। इस समय सुल्तान के साथ उसकी शाहजादी फिरोजा भी थी जो कान्हड़दे के कुमार वीरमदे के गुणों की प्रशंसा सुनकर उस पर पूर्णतया आसंक्त हो गई थी सुलतान अलाउद्दीन ने विवाह का प्रस्ताव कान्हड़दे के पास भेजा जिसे उसने सर्वथा ठुकरा दिया। सुलतान ने जालोर पर घेरा डाल दिया पर वह असफल होकर दिल्ली लौटने लगा। कुमारी फीरोजा वीरमदे का दर्शन करना चाहती थी अतः वह थोड़ी सी सेना के साथ गढ़ में गई। कान्हड़दे ने उसका स्वागत किया। वीरमदे भी उससे मिला अवश्य पर उसने शाहजादी फीरोजा द्वारा स्वयं किये हुए विवाह प्रस्ताव को जाति मर्यादा की रक्षा के हेतु अस्वीकार कर दिया। राजकुमारी ने जालोर घूम-फिर कर देखा, कान्हड़दे ने उसे प्रचुर मात्रा में भेंट देने के साथ ससम्मान बिदा किया। अलाउद्दीन इस आतिथ्य से प्रभावित होकर राजधानी लौट गया।

आठ वर्ष बाद फिर अल्लाउद्दीन की सेना ने जालोर पर आक्रमण किया। इस बार शाहजादी फिरोजा स्वयं न आकर अपनी धाय को सेना के साथ भेजा और उसे जीवित वीरमदे को बन्दी बनाकर लाने का कहा यदि वह वीरगति प्राप्त हो जाय तो उसका मस्तक वह ले आवे।

जालोर पर घेरा डाला हुआ था, चार वर्ष युद्ध चला। मालदेव और वीरमदे ने कड़ा मुकाबला कर शाही सेना के छक्के छुड़ा दिए। किन्तु भण्डार रिक्त हो गया तो प्रजा ने स्वदेश के लिए पूर्ण सहायता की जिससे आठ वर्ष और शत्रु का सामना किया। बारह वर्ष युद्ध करने के अनन्तर दुर्भाग्य वश प्रलोभन में आकर सेजवाल वीकम द्वारा शाही सेना को गुप्त मार्ग का पता लग गया जिससे वह दुर्ग में प्रविष्ट हो गई। सेजवाल की स्त्री हीरादेवी ने अपने देशद्रोही पति को अपने हाथ से मार डाला और राजा को सूचना दे दी। राजपूत सेना थोड़ी ही रह गई थी। फिर भी वीरतापूर्वक लड़ते हुए कान्हड़दे मारा गया, वीरमदे ने साठ दिन तक युद्ध किया अन्त में रानियों ने जौहर किया और वीरमदे ने शत्रु के

हाथ न मर के स्वयं कटार अपने उदर में भौंककर भी शत्रु पक्ष के अनेक सामन्तों को मार कर प्राण त्यागे। फीरोजा की धाय ने उसका मस्तक ले जाकर उसे भेंट किया। राजकुमारी फीरोजा उसकी वीरता से मुग्ध तो थी ही उसने यमुनातट पर जाकर सिरके साथ कूदकर नदी में जल समाधि लेली और अपने मनोनीत प्रियतम के साथ सच्चे प्रेम का प्रमाण प्रस्तुत कर आत्म विसर्जन कर दिया।

राठौड़ वंशावली के नवकोटों की विगत में—

आठमो कोट जालोर पमार भोज रो बैसणो छै। भाखर ऊपर बड़ो गढ छै। मांहे झालर बाव अखूट पाणी छै। घास बलीता नै घणी ठौड़ छै पाखती कलस जलंधरीनाथ बेवड़ा भाखर छै सहर हेठै बसै छै सह दोलौ कोट छै तलाव बावड़ी बड़ी जायगा छै गांव ३६० लगै छै। डोडीवाल, सीवाणो, रामसेण, लोहीयाणो, बड़गांव, गूंदाऊ, राड़धडो इतरा तो परगना लागै छै धरती मांहै रजपूत मैणा, भील रहै छै। बड़ी बांधी जायगा छै घणी उनाली परगनै नीपजै छै। जोधपुररा धणी रौ राज छै ॥८॥

सं० १३०१ कानड़दे सोनिगरै जालंधरीनाथरी दवा सुं सोवनगिरि उपर गढ करायो। जालंधरीनाथ जोगी रे नांवै आबै पहाड़रो नाम जालंधर कहीजै छै। सं० १३१५ बैशाख सुदि ९ जालोर गढ़ भांगो कानड़दे वीरमदे राणगदे काम आया।

नोट—इसमें उल्लिखित संवत गलत है, ईस्वी सन् होतो फिर भी वास्तविकता से निकट आ सकता है।

प्राचीन तीर्थमालाओं में स्वर्णगिरि जालोर

प्राचीन तीर्थमालाओं में सहस्राब्दि से स्वर्णगिरि-कनकगिरि-स्वर्णशैल आदि अनेक पर्यायवाची नामों से इस महातीर्थ को नमस्कार किया गया है। खरतर-गच्छ में प्रातःकालीन प्रतिक्रमण में बोले जाने वाले "सद्भक्त्या" संज्ञक सकल तीर्थनमस्कार में 'कनकगिरौ' और 'स्वर्णशैले' नाम दो वार आये हैं जिनमें से एक नाम इसी स्वर्णगिरि को उद्देश्य कर लिखा है। स्वर्णशैल नाम निम्न पद्य में है—

श्री शैले विन्ध्यभृंगे विमलगिरिवरेह्यर्बुदे पावके वा
सम्मेते तारके वा कुलगिरि शिखरेऽष्टापदे स्वर्णशैले
सह्याद्रौ चोज्जयन्ते विपुल गिरिवरे गूर्जरे रोहणाद्रौ
श्री मत्तीर्थंकराणां प्रति दिवसमहं तत्र चैत्यानि वन्दे ॥३॥

'सकलार्हत्' स्तोत्र के अन्तिम पद्य में जो प्रसिद्ध गिरि तीर्थ बतलाए हैं उनमें सुवर्णगिरि का कनकाचल नाम से उल्लेख किया गया है। यतः

"ख्यातोऽष्टापद पर्वतो गजपदः सम्मेत शैलाभिधः
श्रीमान् रैवतकः प्रसिद्ध महिमा शत्रुञ्जयो मण्डपः
वैभारः कनकाचलोऽर्बुदगिरिः श्री चित्रकूटादय
स्तत्र श्री ऋषभादयो जिनवराः कुर्वन्तु वोमङ्गलम् ॥"

अब तेरहवीं शती के जैनाचार्य श्री महेन्द्रप्रभसूरि कृत तीर्थमाला वृत्ति का महत्त्वपूर्ण विराट उल्लेख देखिए—

बहुविह अच्छरिय निही रहोअ पडहोअ पयड़ सादिव्वो।
बलभिच्चगाइ दुन्निवि जालउरे वीरजिण भवणे ॥८६॥

नवनवइ लक्ख धणवइ अलद्धवासे सुवण्णगिरिसिहरे।
नाहड़ निव कालीणं थुणि वीरं अक्खवसहीए ॥८७॥

तह चिर भवणे बीए वंदे चंदप्पहं तओ तइए
पणय जण पूरियासं कुमर विहारंमि सिरि पासं ॥८८॥

टीका—जावालिपुरे श्री वीरजिन भवने अति बहु आश्चर्य निधिः रथोवर्त्तते तत्र तदा रथयात्रा प्रवर्त्ततेस्म सच रथः सज्ज स्वयमेव उपरि निविष्टायां श्री वीर मूर्त्तौ स्वयमेव पुरमध्ये संचरति प्रकट सादिव्यः प्रकटातिशयः पटहश्चास्ति सच पटहो रथयात्रायां अवादितः स्वयं पुरो गर्जते द्वौच बलभृत्यौ पुरुष रूप प्रतिभाधरौ वृषभ स्थाने भूत्वा रथयात्रायां रथ वाहयत इति ॥८६॥ सुवर्णगिरि शिखरे यक्ष वसति नाम प्रासादे नाहड़ नृप कालीन नाहड़ नृप वारके प्रतिष्ठितं वीर श्री वर्द्धमान स्तुति विषयं कुरु कि० वि० सुवर्णगिरि शिखरे नवनवति लक्ष धनपत्य लब्ध वासे नवनवति लक्ष प्रमाण धनस्य पतिभिः अलब्धो वासो यत्र यदाहि नाहड़ नृप वारके ९९ लक्ष धन स्वामिनः सुवर्णगिरि शिखरे वासं न प्रापुः कोटि-ध्वजा एव तत्र तदाऽवसन्नेति ॥८७॥ यथा द्वितीये चिर भवने चिरंतन प्रासादे चंद्रप्रभुं वंदे ततस्तृतीये भवने पुनः कुमरबिहारे कुमारपाल नृप कारित प्रासादे प्रणत जन पूरिताशं पार्श्व वंदे प्रणतानां जनानां पूरिताः सिद्धि नीता आशायेन ॥८८॥

जैन सत्यप्रकाश वर्ष १९ अंक ४-५ में प्रकाशित मुनिप्रभसूरि कृत अष्टोत्तरी तीर्थमाला में—

मंगल नमिवउ नव पल्लव, सोवनगिरि समरी
सफलउ भव, करिवउ कुंकुमलोलो ॥१०॥

उ० विनयप्रभ कृत तीर्थयात्रा स्त० (गा० २५) जैन सत्यप्रकाश वर्ष १७-१।

वाहड़मेरिहिं रिसह संति जालउरहिं वीरो।
सिरि साचउरिहिं भीमपल्ली वायड़पुरि वीरो ···४

सं० १४७७ में हेमहंससूरि लिखित मातृकाक्षर चैत्य परिपाटी में—

जीराउलि जालउरि जूनइगढ जिण जालहरे।
जिणहर जिणह विहारि जालंधरि जमणा तड़िहि ॥११॥

श्री सिद्धसेनसूरिकृत सकल तीर्थ स्तोत्र गा० ३२ में—

सम्मेय सेल सेत्तुज्ज उज्जले अब्बुयंमि चित्तउड़े।
जालोरे रणथंभे गोपालगिरिम्मि वंदामि ॥१९॥

तपा जयसागर कृत तीर्थमाला (जैन सत्य प्रकाश वर्ष २२ अंक ८) से—

भवियण जोधपुर जालोर भिन्नमाल मां ते जिन नमी आत्म तार ।

प्राचीन तीर्थमाला संग्रह भाग १ के अवतरण—

पं० महिमा कृत चैत्य परिपाटी (पृ० ५८) में—

जालुर गढ मां सुंदरू रे, देहरां छि उत्तुंग रे च०
सहिस दोय इकताल स्युं रे लाल, प्रतिमास्युं मुझ रंग रे च०
सोवनगिरि मां साहिबा रे, उपरि त्रण्य प्रसाद रे च०
पंच्यासी प्रतिमा कहुं रे लाल, भमराणीइ उल्हास रे च०

शीलविजय कृत तीर्थमाला (पृ० १०३) से—

जालोर नगरि गजनीखान, पिशुन वचन प्रभु धरिया जान ।
बजरंग संघवी वरीउ जाम, पास पेखि नइ जिमस्युं ताम ॥२५॥

स्वामी महिमा धरणेन्द्र धर्यो, मानी मलिक नि वली वसि कर्यो ।
पूजी प्रणमी आप्या पास, संघ चतुर्विध पूगी आस ॥२६॥

स्वामी सेवा तणि संयोगि, पाल्ह परमार नो टलीओ रोग ।
सोल कोसीसां जिनहरि सरि, हेम तणा तिणिकीधां घरि ॥२७॥

श्री ज्ञानविमलसूरि कृत तीर्थमाला (पृ० १३६) में—

सोवनगिरि तिहां निरखियो ए, जे पहिला जिन ठाम ।
विविध देहरा वंदिया निरमालड़ी ए प्रणम्यां ते अभिराम मनरहिए ॥४२॥

श्री मेघविजय कृत पार्श्वनाथ नाममाला (पृ० १५०)

जालोरउ जगि जागइं जी, मंडोवर मन लागइ जी ।

पं० मेघ विरचित तीर्थमाला (पृ० ५४)

श्री जालउरि नयरि भीनवालि, एक विप्र बिहु नंद विचालि ।

पं० कल्याणसागर कृत पार्श्वनाथ चैत्य परिपाटी (पृ० ७०)

जालोरें जग जागतौ, सरवाडै हो सेवक साधार ।

रत्नाकर गच्छीय हेमचंद्रसूरि शिष्य जिनतिलकसूरि कृत सर्व चैत्य परिपाटी में—

चारूपी फलउधी सामीय पास, जालउरी नागउरी जइ उची पास ।
कलिकुंडि वाणारसी महुरी पास, सचराचरि जगथिउ पूरइ आस ॥२५॥

जयनिधान कृत पार्श्वनाथ स्तवन में—

जीराउलि जालोर उजेणी, फलवधि रावण इम बहु खोणी, नमियइ पासकुमार ॥

स्तवन स्तोत्रादि संग्रह

श्री नगर्षि कृत

जालुर नगर पंच जिनालय चइत्य परिपाटी*

श्री गुरु चरण नमी करी, सरसति समरीजइ,
कवियण[1] माडी तुं भली, निरमल मति दीजइ ;
हरख धरी हुं रचिस्युं हेव वर चियपरिवाड़ी,
मन वंछित सुख वेलि तणी, वाधइ वरवाडी ।।१।।

सोहइ[2] जंबूदीप भलुं जिम सोवन - थाल,
लांबुं जोयण लाख एक, तेनुं सुविशाल ;
ते वचि मेरु महीधरू, जोयण लख तुंग[3],
भरतखेत्र दखिण दिशि, तेह थी अति चंग[4] ।।२।।

मध्यम खंडि नयर घणां, नवि जाणु पार,
श्री जालुर नयर भलुं, लखिमी भंडार ;
सोवनगिरि पासइ भलुं, वाडी बन सोहइ,
वनसपती बहु जाति भाति, दीठइ मन मोहइ ।।३।।

मढ मंदिर पायार[5] सार, धनवंत निवेस[6],
न्यायवंत ठाकुर भलु, जाणइ सविसेस ;
सावय[7] सावी[8] धरमवंत, दातार अपार,
दयावंत दीसइ घणा, करता उपगार ।।४।।

---

*जैन सत्य प्रकाश वर्ष १० अंक ६ में श्री अंबालाल प्रेमचंद शाह संपादित ।

१. कविजन २. शोभित ३. ऊंचा ४. सुंदर ५. प्राकार-गढ ६. घर ७. श्रावक ८. श्राविका

चंद्रुया[९] चउसाल सार, चुकी[१०] बहु सोहइ,
पोषधशाला[४] च्यारी मली, दीठइ मन मोहइ ;
पंच[५] य जिणहर दीपतां, सोहइ सुविसाल,
तलिया-तोरण तेज पुंज, करि झाकझमाल ॥५॥

॥ ढाल ॥

हिव[१] पहिले रे, जिणहरि त्रिसला कूंयरू,
वंदंतां रे, पूजंता संकट हरू ;
पंचाणुं[१५] रे, प्रतिमा सहित जिणेसरू,
वचि बइठुं रे, वीर जिणंद मनोहरू ॥६॥

मनोहर तव सार मूरति, पेखतां मन(ड़)उ हुलसइ[११],
मुख देखि पूनिमचंद बीहतु, गयण[१२] मंडलि जइ वसइ ॥७॥

अणियाली रे, उची नासा दीसती,
जाणुं छुं रे, सुय चंचु नइं जीपती ;
बे लोचन रे, अणियालां अति सुंदरू,
सरवंगि[१३] रे, वरणन हूं केतुं करूं ॥८॥

करूं वरणन केम तोरूं, अनंत गुण नुं तूं धणी,
मुखि एक जीहा[१४] थेव[१५] बुद्धि, केम गुण जाणुं गुणी ॥९॥

मंन - मोहन रे, जगबंधव जग - नायकू,
जगजीवन रे, भविजन ने सुख - दायकू ;
तुझ दरसनि रे, मन वंछित सुख पामीइ,
चिंतामणि रे, कामकुंभ नवि कामीइ[१६] ॥१०॥

कामीइ जे अरथ सघला, वीर जिन तुझ नाम थी,
पामीइ भवियण कहइ कवियण, नमइं जे तुझ भाव थी ॥११॥

---

९. चंद्रोवा १०. चौकी ११. उल्लसित हो १२. आकाश १३. सर्वांग-सब प्रकार से १४. जीभ से १५. अल्प १६. कामना करना

॥ ढाल ॥

हिव बीजइ[१] जिण मंदिरि जास्युं भाव थी रे अति मोटइ मंडाणि,
थुणस्युं नेमि जिणेसर राजीउ रे ॥१२॥

समुद्रविजय भूपति[१७] कुलगयण दिणेसरू[१८] रे, माता शिवादेवी पूत ;
सोहइ रे सोहइ रे, राजीमती वर सुंदरू रे ॥१३॥

मस्तक मुकुट विराजइ रे, हेम[१२] रयण तणुं रे काने कुंडल सार ;
झलकइ रे झलकइ रे, रवि शशि मंडल जीपतां रे ॥१४॥

हियइ[२०] हार तिम बाहिं, अंगइ दीपतारे अवर विभूषण सार ;
पेखी रे पेखी रे, संघ सहु मनि हरखीउ रे ॥१५॥

जाणे धन घनसार[२१] सुधारस नीपनी रे, कय निज जस घन पिंड ;
सोहइ रे सोहइ रे, नेमि जिणेसर मूरती रे ॥१६॥

चउसय[४२३] तेडोतर[२२] जिन प्रतिमा सोभतूं रे, नेमि जिणंद दयाल ;
वंदुं रे वंदुं रे, भवियण भाव धरी सदा रे ॥१७॥

॥ ढाल ॥

गीत गान नाटक करी, नेमि भवन थी वलिया रे ;
त्रीजइ[3] जिणहरि मनिरली, जातां बहु संघ मिलिया रे ॥१८॥

जय जय संति जिणेसरु नमतां विघन पुलाया[२३] रे
पूजंतां संकट टलइ, शुभ ध्यानि चित्त लाया रे....
जय जय संति जिणेसरू, आंचली,

हथणाउर[२४] पुर सुंदरू, विस्ससेन[४५] भूपाला रे,
तस कुल-कमल-दिवाकर, सयल जीव रखवाला रे....जय जय ॥१९॥

---

१७. राजाओं के समुदाय रूप आकाश में १८. सूर्य १९. स्वर्णरत्न २०. हृदय पर २१. कपूर २२. ४१३ २३. दूरहटे २४. हस्तिनापुर २५. विश्वसेन

एक पसू[२६] नइ कारणि, निज जीवित नवि गणीया रे,
पगिलागी सुर वीनवइ, साचा सुरपति थुणिया[२७] रे····जय जय ॥२०॥

अचिरा कूखि सरोवर, राजहंस अवतरिया रे,
तीणी अवसरि रागादिकू, श्री जिनइं अवहरिया[२८] रे····जय जय ॥२१॥

भवभय भंजन जिन तूं सुणी, लंछण मसि[२९] पगि लागु रे,
मिगपति बीहतु मिग सही, हिव मुझ नइ भय भागु रे····जय जय ॥२२॥

तुझ गुण पार न पामीइ, तूं साहिब छइं मोरा रे,
जे तुम सेव करइ सदा, ते सुख लहइं भलेरा रे ···जय जय ॥२३॥

इक[३०] सत पणवीसय[१२५] भत्ती, संति सहित जिन प्रतिमा रे,
भावधरी जे वांदिसिइं, ते लहसीइ वर पदमा[३१] रे···· जय जय ॥२४॥

॥ ढाल ॥

चउथइ[४] जिणहरि हेव, भाव धरी घणुं, जास्युं अति ऊलट धरी ए,
नमस्युं प्रथम जिणंद, विधि पूरव सदा, तीन पयाहिण स्युं करी ए ॥२५॥

नाभि भूप कुलचंद, माता मरूदेवा उयरि[३२] सरोवर हंसलु ए,
अवतरिउ जगनाह, त्रिहुं नाणे करी, पूरउ निरमल गुण निलु ए ॥२६॥

पढम जिणंद दयाल, पढम मुणीसर, पढम जिणेसर जगधणी ए,
पढम भिखाचर[३३] जाणि, पढम जोगीसर, पढम राय तूं बहुगुणी ए ॥२७॥

आदि जिणेसर देव, मूरति तुम तणी, भविजन नइं सुख-कारिणी ए,
रूप तणुं नहीं पार, तेजि त्रिभुवन, त्रिभुवन मोहीइ ए ॥२८॥

तूं ठाकुर तूं देव, तूं जगनायक, जगदायक तूं जगगुरु ए,
माय[३४] ताय[३५] तूं मीत[३६], परम सहोदर, परम पुरुष तूं हितकरु ए ॥२९॥

[३१]एकोत्तिरि[३७] जिण-बिंब, तिणि करि सोभती, रिषभदेव तुझ मूरती ए
जे वांदइ नरनारि प्रहउठी सदा, ते जाणज्यो सुभमती ए ॥३०॥

---

२६. पशु-कबूतर के २७. स्तवना की २८. अपहरित किया २९. बहाने ३०. एक सौ पचीस ३१. श्रेष्ठ लक्ष्मी ३२. उदर ३३. भिक्षाचर-भिक्षु ३४. माता ३५. पिता ३६. मित्र ३७. इकहत्तर

॥ ढाल ॥

पंचम[५] जिणहरि जायस्युं रे, जिहां छे पास जिणंद,
कुंकुमरोल नमुं सदा रे, जिमघरि कुंकुमरोल, जिणेसर तूं महिमावंत····॥३१॥

सोवन सम तुझ मूरती रे, सपत[३८] फणामणि सोभ,
जे तुझ नाम जपइ सदा रे, ते पामइ नवि खोभ[३९] ···जिणे० ॥३२॥

सायणी[४०] डायणी[४१] जोयणी[४२] रे, भूत प्रेत न छलंति[४३],
रोग सोग सहु उपसमइ रे, जे तुझ पूज[४४] करंति··· जिणे० ॥३३॥

धरणराय पदमावती रे, अहोनिशि सारे सेव,
ठामि ठामि तूं दीपतु रे, तुझ समवड़ि नहि देव जिणे० ॥३४॥

तुझ गुण पार न पामीइ रे, तूं छइ गुण भंडार,
जे तुम सेव करइं सदा रे, ते पामइं सुखसार····जिणे० ॥३५॥

॥ ढाल ॥

चिइपरिवाड़ी जे करइं माल्हंतड़े, प्रहऊगमतइ सूर[४५], सुणिसुंदर प्रहऊ०,
बोधि बीज पामइं घणुं ए मालंतड़े तस घरि जय संपति पूर··· सुणि० ॥३६॥

तस घरि उछव नवनवाए मालंतड़े तस घरि जय जयकार,
तस घरि चिंतामणि फल्युं मालंतड़े ते जाणुं सुविचार····सुणि० ॥३७॥

ससि रस वाण ससी (१६५१) सुणुए मालंतड़े, ते संवच्छर जाणि,
भादव वदि तइया[४६] भलीए मालंतड़े, सुरगुरुवार वखाणि····सुणि० ॥३८॥

॥ कलश ॥

नयर श्री जालुर माहै, चइत परिपाटी करी,
ए तवन भणतां अनइं सुणतां, विघन सव जाइं टरी[४७],
तपगच्छ नायक सुमतिदायक, श्री हीरविजय सूरीसरो,
कवि कुशलवरधन सीस पभणइ, 'नगा' गणि वंछिय करो····॥३९॥

॥ इति श्री जालुर नगर पंच जिनालय चइत्य परिपाटी ॥

---

(७१) ३८. सात ३९. क्षोभ ४०. शाकिनी ४१. डाकिनी ४२. योगिनी ४३. छल-कपट करे ४४. पूजा ४५. सूर्य ४६. तृतीया ४७. टलजाय

श्री मतिकुशल कृतम्

जालोर मण्डण षट् जिणहर स्तवनम्

दूहा—सोरठा

सकल सदा सुखदाय, सानिधकारी सेवकां।
जालौरै जिनराय, षट् [६]जिनहर नमुं खंतिस्युं ॥१॥

पारसनाथ प्रसिद्ध, महावीर नेमीसरु।
सांति ऋषभ दें सिद्ध, परता पूरै पासजी ॥२॥

राग-सोरठ ढाल—धनरी सोरठी

आज दिवस ऊगो भलौ हे सहीयां, पेख्या पारसनाथ।
मन गमतौ आवी मिल्यौ हो जी, सूधौ शिवपुर साथ ॥३॥

प्रणमौ पासजी, बहिनी वंदौ हे भावसुं भगवान। आंकणी ॥
आरति दुख दूरे गया हे सहीयां, प्रगटयो पुण्य पडूर।
भव भय भागौ भेटीयां हो जी, हरख्यो आय हजूर ॥४॥प्र०॥

ढाल—मनहर लाहौ लोजे हो साहिबा

जिनवर नाम सुणीनै हो हरखीयौ, वीरां में महावीर जि०
अरीय उथेडचा हो आपणा, हिव करि माहरी भीर जि० ॥५॥

महिर करीजै हो मोपरा, माहरी तो परि मांड जि०।
मात पिया नै हो मूकि नै, छोरू जाइ किहां छांड जि० ॥६॥

तैं अपराधी हो तारीया, हिव करि माहरी सार जि०।
पर उपगारी हो तुं सही, तारिक विरूद चीतारि जि० ॥७॥

ढ़ाल—अलबेलौ हाली हल खड हो

नेम जिणेसर निरखीयौ हो, हरखीयौ माहरौ चीत ।
मुगति महेली मेलिवा मोनैं मिलियौ हो मन मेलू आवी मीत ।।८।।

सहू आस फली मन मांहिली हो, मोनैं मिलियौ हो अंतरजामी आइ ।सहू०
विण कहीयां मन वातड़ी हो, जाणैं उपजै जेह ।
भाग्य उदै मैं भेटीयो, सहुवंछित पूरण सामी एह ।।९।।सहू०।।

ढाल—मुखनैं मोती ल्याज्यो राज मुखनैं मोती ल्याज्यो

कांइ माहरी मुदित करेज्यो राज, माहरी मुदित करेज्यो ।
निज तन दान देइ नैं राख्यौ, पूरब भव पारेवौ ।
एह विरुद सांभलि हूं आयौ, हिवमुझ सुजस गहेवौ राज ।।१०।।मा०।।

सरणैं राखौ संति जिणेसर, एहिज अरज अम्हारी ।
परम सनेही अंतर परि हरि, वलिजाऊं बार हजारी राज ।।११।।मा०।।

ढाल—झिरमिर वरसैं मेह झरोखैं कोइली हो लाल झ०

पांचमै भवणैं प्रथम जिणेसर पेखीयौ हो लाल जि० ।
मानव जनम प्रमाण मैं आज ए लेखीयौ हो लाल मैं० ।
मरुदेवी सुत महियल महिमा सागरु हो लाल के म० ।
सुध समकित रौ आज आखां तुझ आगरू हो लाल आ० ।।१२।।

पय जुग प्रवहण रूप भवोदधि तारिवा हो लाल भ० ।
मुझ नैं मिलियौ आइ, सयल दुख वारिवा हो लाल स० ।
आज सर्या सहु काज, निवाज्यौ करि दया हो लाल नि० ।
मन सुध श्री महाराज करी मोपरि मया हो लाल क० ।।१३।।

ढाल—पंथीड़ानो

आस्या पूरण मिलीयो पासजी रे, दाइक देवा अविचल राज रे ।
कंचन नी परि कसवटीयैं कस्योजी, कोड़ि समारैं वंछित काज रे ।।१४।।

आज मनोरथ फलीया माहरा रे, पायौ पूरब भवनौ साम रे ।
सेवा सफली थासी एहनी रे, महीयल वधसी माहरी मांम रे ।।१५।।आज०।।

परतौ पूगौ पहिली पास नौ रे, सेवा थी लह्या लील विलास रे।
हिव वलि चरण गह्या प्रभु ताहरा रे, पूरो वंछित पास उल्हास रे ॥१६॥आंज०॥

॥ कलश ॥

इम नम्या जिनवर परम हित धर, जालौरें अति आसता।
नव निद्ध नमतां दीयै इण भव, परभवै सुख सासता॥
संवत सतरै सै सतावीस (१७२७) जेठ सुदि चवदिस दिनै।
मतिकुशल श्री महाराज भेटचां, मानव भव सफलौ गिणै॥१७॥

॥ इति श्री जालौर मंडल षट् जिणहर स्तवनं समाप्तम् ॥

श्री पार्श्व जिन स्तवन

राग-सारंग ढाल—पंथीड़ानी

मुझ मन भमरौ तुझ गुण केतकी रे अटकाणौ पल दूरि न जाइ रे।
मूरति मोहै मोहनवेलडी रे, निरखंतां खिण तृप्ति न थाइ रे॥१॥मु०॥

पूनिम सिस मुख सोहै स्वांम नौ रे, दीपशिखासी नासा एह रे।
अधर प्रवाली सम रंग जाणीयइ रे, अणीयाली अंखड़ी बहु नेह रे॥२॥मु०॥

सकंध कलस सोहै अति देवना रे, कानै कुंडल सिसिहर सूर रे।
सपत-फणामणि दै सुख सासता रे, पास नम्यां पातिक सहु दूरि रे॥३॥मु०॥

तुं रेवा हुं गैवर सम सही रे, हुं केकी तूं मेह समान रे।
तुं चंदो हुं चकोर तणी परै रे, चकवी चित्त चाहै ज्यूं भान रे॥४॥मु०॥

हंस तो मानसरोवर छोड़ि नै रे, नवि जायै किण सरवर पास रे।
तिम हूं हरिहरादिक देव नै रे, नवि सेवुं धरि मन उल्हास रे॥५॥मु०॥

निहचौ एक कियौ मैं एहवौरे, भव भव तुं हिज देव प्रमाण रे।
जौ तिल कूड़ कहुं इण अक्सरै रे, तौ मुझ तुमची आण रे॥६॥मु०॥

चोल मजीठ तणी पर माहरौ रे, मन लागौ तोस्युं इकतार रे।
मतिकुशल कहै कर जोड़ी करी रे, अवसरि करज्यो अम्हची सार रे॥७॥मु०॥

॥ इति श्री पार्श्व स्तवनं समाप्तम् ॥

लावण्यसागर कृत

श्री सोवनगिरि महावीर जिन स्तवन

वीर जिणेसर जगि राया, सोवनगिरि ऊपरि में पाया।
लोचन दोय अमी लाया, जब साहिब मुझ निजरें आया ॥१॥

खत्रीकुण्ड नयरें जाया, सीधारथ राय रें कुलि आया।
त्रिशला नंदन मैं ध्याया, सब इंद्र इंद्राणी मिल गाया ॥२॥

संवत सोल इक्यासीयें, जयमलजी हीयें विमासीयें।
मुहूरत परितिष्ठा वेला, बहु पंडित जन कीधा भेला ॥३॥

संघ सहु नें श्रीफल आपी, चैत्री बदि पंचमि दिन थापी।
जयसागर पंडित राया, परतिष्ठा करि बहु सुख पाया ॥४॥

जालोर नयर नी पूगी ज रली: तिहां परतिख दीसें सरग पुरी।
जालोर नगर नो संघ भावी, पूजो प्रतिमा ऊपरि आवी ॥५॥

सात आठ मिली टोली, श्री वीर भुवन फिरे दोली।
मुहणोत जसा नो सुत जीवो, तें कलियुग में थाप्यो दीवो ॥६॥

मेघ तणी परि तुं वरसें, सोवनगिरि लिषमी तुं खरचे।
काने कुंडल दोय लाया, जाणे चंद सूरिज सरणे आया ॥७॥

चंद्रूआ सखरा लाया, जाणे मुखमल सुं मंडप छाया।
तुझ गुण जेहणें मन वसीआ, सो नरनारी आ सरणे आया ॥८॥

पापीरा तुं मद चूरो, पुण्यंवत नी तुं परता पूरें।
साहिब सुणि इक वीनति मोरी, भवि भवि देयो सेवा तोरी ॥९॥

।। कलश ।।

इह अकल मूरति सकल सूरति सोवन गिरिवर थापना ।
गजसिंह राजें तूर वाजें नहिंअ कारिज पापना ।।
विजेंदेवराया मुझ सुहाया सेवा करीयें पायनी ।
मुहणोत जयमल शिखर चोहडचो सेवा सफली सामनी ।।१०।।

पंडित में परधान दिनकर जेंसागर पंडित जती ।
तस नाम लेतां रिदय धरतां पाप न रहे एका रती ।।
श्री वीर देख्यां पाप नासें अंग नासें आपदा ।
लावण्यसागर एम जंपे देज्यो सगली संपदा ।।११।।

।। इति श्री महावीर स्तवन ।।

[पत्र १ अभय जैन ग्रंथालय नं० ११९९०]

कवि पल्हु आदि कृत षट्पदानि से शांतिनाथ वर्णन

सो जयउ संतिनाहो, कासव कुल मंडणो कणय वन्नो
चालीस धणु पमाणो, जालउरे जयउ संतियरो ।।१।।

करउ संति संघस्स संति जुगपवर जिणेसर
संति सयल लोयल्स संति उदयह नरेसर
अइरा देविहि जाइ राइ विससेणह नंदणु
चक्कु लच्छि परिचत्त जयइ जिण पाव विहंडणु
कम्मट्ठ करडि घड पंचमुहु भवियलोय भव भय हरण
जय जय जयहि जयहि जय संतियर संतिनाहसिवसुह करण ।।५।।

विक्कमउरि जिण वीरु, पासजिणु जयसलमेरह
संतिनाहु सिरिमालि, पढम जिणु बाहडमेरह
विज्जाउरि वसुपुज्ज सामि झायहु तित्थेसरु
चंदप्पहु पल्हणनयरि सुमरहु परमेसरु
सोलसमु चरमु जिणु जालउरि, भविय नमह दिढ चित्तु धरि
रिसहेसरु पणमहु चित्तउड़ि जिम न पड़हु संसार सरि ।।९।।

ज्ञानप्रमोद गणि कृत

श्री सुवर्णगिरि मण्डन पार्श्वनाथ स्तवनम्

विमल गुण निधानं केवल श्री प्रधानं सकल सुख विधानं ज्योतिरच्यं दधानं ।
दुरितभिदवधानं श्रेयसांसंनिधानं जिनमुपसम धानं नौमि पार्श्वाभिधानं ।।१।।

भविक कुमुदचन्द्रस्त्यक्त दोषो वितन्द्र प्रमद दम समुद्र पुण्य पद्मा सुभद्र ।
प्रणत सुरनरेन्द्र सौख्यकारी जिनेन्द्रो जयत नति दयार्द्रस्तर्ज्जितानङ्ग मुद्र ।।२।।

अश्वसेना वनीनाथ रम्याङ्गजं पन्नगाधीश पद्माश्रितां हृयं भुजं ।
तत्वधीसौदधी पानु कारं सदा भव्य सत्वा विभु संश्रियध्वं मुदा ।।३।।

इन्द्रनीलङ्ग वर्ण निरंहस्ततं वासवाचार्यं वाचा मगम्य स्त्रुतं ।
त्वांसि माराधयंति त्रिसध्यंयके पार्श्व धन्याह्य पास्तान्यकृत्पास्तके ।।४।।

सत्य विद्या तपः श्री प्रणेताप्रधी रुग्र वंशांबरा हर्मणि धीरधी ।
पार्श्व नाथो जनै नम्यते..... म प्राग्विलीनाथि मिथ्या तमो विभ्रम ।।५।।

द्रागभवाब्धिव्वुडज्जंतु पोतोपमः कोपथिध्व..... विद्धं स पूषोत्तम ।
काम मुत्फुल्ल पद्माननः पारग पार्श्व यक्षार्च्चित स्त्वं जयां को रग ।।६।।

वामोदरोदार सरोमरालं तीर्थाधिराजं सुयशो विशालं ।
ध्यायन्तिये त्वां परमात्म रूपं भव्या लभन्ते प्रभुता स्वरूपम् ।।७।।

गीर्व्वाण धे.....कु.....काम प्र.....नांत्वद ।
भावै विश्व पूजातिसया.....।।८।।

.....र जनन व्रत केवल श्री सिद्युत्स वागल..... सुश्री ।
लोक नयी ? प्रमद वृन्द सुख प्रदानि कुर्याज्जिनो भविनृणां स समीहितानि ।।९।।

गाढं सठोग्र कमठोरु तपो तिधर्म्म निर्म्माथ पाथ उतभाषित शुद्ध धर्म्म ।
स्फूर्ज्जित्फणा मणि विभा विशथी कृतास पार्श्व प्रभुर्जयति सर्व्व जगत्प्रकास ।।१०।।

परम पुरुष नव हस्त तनुं भगवंत मनन्त गुणं सुततुं
नत पूरित काम म काम मिनं प्रयताः कृतिनो भजतार्य जिनं ॥११॥

कनकाद्रिपुरा तुल चैत्य रमा वर भूषण पार्श्व निरस्त तम
सकलानिमनोभिगतानिसतां किल पूरय विश्व पते सुकृतां ॥१२॥

इत्थं सुवर्णगिरि मण्डन पार्श्वनाथो भक्त्या श्रुतं सभविनां महिमा सनाथ ।
श्री रत्नधीर सुगुरो रणुं भावतस्तु ज्ञानप्रमोद गणिना प्रभुता प्रदोस्तु ॥१३॥

॥ इति श्री पार्श्वनाथ स्तवनम् ॥

श्री महावीर बोलिका

तागुज्जर नारिहि इह संसारिहि मणि हूयउ आणंदु ।
ता तिसलहि नंदणु कम्म विहंडणु वंदह वीर जिणिंदु ॥
ता कणयह कलसू अमियह वरिसू सुंमइ मणहर दंडु ।
ता सहियह दिट्ठइ पाऊ फिट्टइ रोरू जाइ सय खंडु ॥१॥

ता वहिल संजोई तुरिय तिचोइ लग्गउ मणि उंमाहु ।
ता धन्नु नखत्त दिवस सुमुहुत्तू जहि वंदह जिण नाहु ॥
ता रिद्धिहि सहिती अंगि नमंती पहुती सं परिवारि ।
ता कारहि सोहा जण मण मोहा जालउरह मज्झारि ॥२॥

ता पंकय नयणी ससहर वयणी मुहि कुंदुज्जल दंत ।
ता पीण पओहरि सस्स किसोयरि मयगल जिव मल्हंति ॥
ता ऊयटि किज्झहि पड़ि पहिरिज्जहि कंचुय ताडिय नेउ ।
ता मांकुणि झीणी लाटक वीणी कज्जलि अंगिय नेत्र ॥३॥

ता तिलय करेविणु घड़इ रएविणु मुहि सुगंधु तंबोलु ।
ता मयमय चंगी नव नव भंगी मंडिय ताइ कपोल ॥
ता पाए नेउर वाहा केउर कोटहि नव सरु हारु ।
ता सोवन चूड़ा पहिरहि रूड़ा वलया झणु हुणकार ॥४॥

ता चंगो वाली पहिरहि पाली कनि कुंडल झलिकंति ।
ता कणयइ कंठी रतनिहि खंची वर खिखिणि वज्जंति ॥
ता भत्तिहि जुत्तौ जिणहरि जंति नयरह हूयउ खोहु ।
ता तिहिं सिणगारी मन्नोहारी मोहिउ सयलु वि लोउ ॥५॥

ता कारहि मंडणु दोहग खंडणु पहिरावणी सुरंग ।
ता वलि मंडावहि भोगु करावहि अगरि कपूंर सुचंगु ।।
ता अभउ दियावहि पूय रयाविहि वयणु भरहि कप्पूर ।
ता केलिहि खंभा नच्चहि रंभा वज्जहि नंदिय तूर ।।६।।

ता घोडु कुदेविणु मंगल देविणु हरिसिहि तिव नच्चंति ।
ता रंभा हरणी सुरवर घरणी जिम अज्जवि समरंति ।।
ता गुज्जर रमणी सुहुगुरु वयणी उच्छउ करहि सुरंमु ।
ता मिलियउ लोऊ हुयउ पमोऊ जयउ जयउ जिण धम्मु ।।७।।

ता उदय-विहारू सारोद्धारू कारिउ कुलधरि मंति ।
ता असुर सुरिंदा खयर नरिंदा पक्खिवि सीसु धुणंति ।।
ता तासु पइट्ठा कियइ विसिट्ठा सीस धुणाविउ इंदु ।
ता धम्म कहंतू जगि जयवंतू जिणिसरसूरि मुणिंदु ।।८।।

।। श्री महावीर बोलिका समाप्ता ।।

मुनि जिनविजयजी के प्राचीन जैन लेख संग्रह से

जालोर-स्वर्णगिरि के अभिलेख

(१)

(१).....(साक्षा ?) त्त्रैलोक्य लक्षी विपुल कुल गृहं धर्म वृक्षाल वालं श्री मन्नाभेयनाथ क्रम कमल युगं मंगलं वस्तनोतु। मन्ये मांगल्यमाला प्रणत भव भृतां सिद्धि सौघ प्रवेशे यस्य स्कन्ध प्रदेशे विलसति गवल श्यामला कुंतलाली ॥१॥ श्री चाहुमान कुलांबर मृगांक श्री महाराज अणहिलान्वयो द्भव श्री महाराज आल्हण सुत।

(२).....र्यावली दुर्ललित दलित रिपु बल श्री महाराज कीर्त्तिपाल देव हृदया नंदि नंदन महाराज श्री समरसिंह देव कल्याण विजय राज्ये तत्याद पद्मोपजीविनि निज प्रौढिमा तिरेक तिरस्कृत सकल पील्वाहिका मंडल त [स्क] र व्यति करे राज्य चिन्तके जोजल राजपुत्रे इत्येवं कालं (ले) प्रवर्त्तमाने।

(३).....[f] रपुकुल कमलेन्दुः पुण्य लावण्य पात्रं नय विनय निधानं धाम सौंदर्य्य लक्ष्म्याः धरणि तरुण नारी लोचनानंद कारी जयति समरसिंह क्ष्मापतिः सिंह वृत्तिः ॥२॥ तथा ॥ औत्पत्तिकी प्रमुख बुद्धि चतुष्टयेन निर्ण्णीत भूप भवनो चित कार्य वृत्तिः। यन्मातुलः समभवत् किल जोजलाह्वो।

(४).....(दोर्द्दंड ?) खंडित दुरंत विपक्ष लक्षः ॥३॥ श्री चंद्रगच्छ मुखमंडन सुविहित यति तिलक सुगुरु श्री श्रीचन्द्र सूरि चरण नलिन युगल दुर्ललित राजहंस श्री पूर्ण्ण भद्रसूरि चरण कमल परिचरण चतुर मधुकरेण समस्त गोष्ठिक समुदाय समन्वितेन श्री श्रीमाल वंश विभूषण श्रेष्ठि यशोदेव सुतेन सदाज्ञाकारि निज।

(५).....(भ्रा) तृ यशोराज जगधरविधीयमान निखिल मनोरथेन श्रेष्टि (ष्ठि) यशोवीर परम श्रावकेण संवत् १२३९ वैशाख सुदि ५ गुरौ सकल त्रिलोकी तला भोग भ्रमण परिश्रां [त] कमला विलासिनी विश्राम विलास

मंदिरं अयं मंडपो निर्मापितः ।। तथा हि ।। नानादेश समागतै र्नव नवैः स्त्री पु स वर्गेर्मु [हु] र्यस्यै—

(६)·····बावलोकन परैर्नो तृप्ति रासाद्यते । स्मारं स्मारमयो यदीय रचनावैचित्र्य विस्फूर्जितं तैः स्वस्थान गतै रपि प्रतिदिनं सोत्कंठ मावर्ण्यते ।।४।। वि [श्वं] भरावर वधू तिलकं किमेतल्लीलारविंद मथ किं दुहितु पयोधेः । दत्तं सुरैरमृत कुंडमिदं किमत्र यस्यावलोकनविधौ विविधा विकल्पा ।।५।। गर्त्तापूरेण पातालं ।

(७)·····(विस्तारे ?) [ण] महीतलं । तुंगत्वेन नभो येन व्यानशे भुवन त्रयं ।।६।। किंच ।। स्फूर्ज्जद् व्योम सरः समीन मकरं कन्यालि कुंभा [कु] लं मेषाढ्यं सकुलीर सिंह मिथुनं प्रोद्यद्वृषालंकृतं । तारा कैरव मिंदुधाम सलिलं सद्राज हंसास्पदं यावत्तावदिहादिनाथ भवने नंद्यादसौ मंडपः ।।७।। कृतिरियं श्री पूर्णभद्रसूरीणां ।। भद्रमस्तु श्री संघाय ।।

(२)

(१) ॐ ।। संवत् १२२१ श्री जावालिपुरीय कांचन f [ग] रि गढस्योपरि प्रभु श्री हेमसूरि प्रतिबोधित श्री गूर्ज्जरधराधीश्वर परमार्हत चौल्लक्य ।

(२) महारा [ज] धिराज श्री [कु] मारपाल देव कारिते श्री पा [श्वं] नाथ सत्क मू [ल] बिंब सहित श्री कुवर विहाराभिधाने जैन चैत्ये । सद्विधि प्रव [र्त्त] नाय वृ [बृ] हद्गच्छीय वा—

(३) दींद्र श्री देवाचार्याणां पक्षे आचंद्रार्क्कं समर्पिते ।। सं० १२४२ वर्षे एतद्देसा [शा] धिप चाहमान कुल तिलक महाराज श्री समरसिंह देवादेशेन भां० पासू पुत्र भां० यशो ।

(४) वीरेण स[मु]द्धते श्रीभद्राजकुलादेशेन श्री दे[वा]चार्य शिष्यैः श्रीपूर्णदेवाचार्यैः । सं० १२५६ वर्षे ज्येष्ठ सु० ११ श्री पार्श्वनाथ देवे तोरणादिनां प्रतिष्ठा कार्ये कृते । मूल शिख—

(५) रे व च कनकमय ध्वजादंडस्य ध्वजारोपण प्रतिष्ठायां कृतायां ।। सं० १२६८ वर्षे दीपोत्सव दिने अभिनव निष्पन्न प्रेक्षामध्यमंडपे श्री पूर्णदेवसूरि शिष्यैः श्री रामचंद्राचार्यै [:] सुवर्ण्णमय कलसारोपण कृता ।। सु (शु) भं भवतु ।। छ ।।

(३)

१. ॐ ।। [सं] वत् १३५३ [वर्षे]
२. वै [शा] ख बदि ५ [सोमे] श्री
३. सुवर्णगिरौ अद्येह महा—
४. राजकुल श्री साम (मं) तसिंह
५. कल्याणं (ण) विजयराज्ये त —
६. त्पादपद्मोपजीविनि
७. [रा] जश्री कान्हड़ देव रा—
८. ज्यधुरा (मु) द्वहमाने इहै
९. व वास्तव्य संघपति गुणध —
१०. र ठकुर आंबड़ पत्र व (ठ) कुर
११. जस पु [त्र] सोनी महणसीह
१२. भार्या माल्हणि पुत्र [सोनी] रत—
१३. न [सिं] ह णाखो माल्हण गजसीह
१४. तिहणा पुत्र [सो] नी नरपति ज—
१५. यता विजयपाल [न] रपति भा—
१६. र्या नायक देवि (वी) पुत्र लखमीध—
१७. र भुवणपाल [सु] हडपाल द्वि —
१८. तीय[भ]र्या जाल्हण देवि(वी) इ—
१९. त्यादि कुटंव (टुंब) सहिते[न] भा —
२०. र्या नायक देवि (वी) [श्रे] योर्थे
२१. देव श्री पार्श्वनाथ चैत्ये पंच—
२२. मी बलि निमित्त (त्तं) निश्रा [नि] क्षे
२३. प [ह] ट्टमेकं नरपतिना दत्त (त्तं)
२४. तत् (द्) भाटकेन देव श्रीपा [श्वं]
२५. नाथ गोष्टि (ष्ठि)[कैः प्रति ब] र्षः (र्षं)
२६. आचां (चं) द्राकं पंचमी व (ब) लिः
२७. कार्या (र्यः) [।। शुभं] भव [तु] ।।छ।।

(४)

(१) ।।ऐं०।। संवत् १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरौ अद्येह श्री राठोड़ वंशे श्री सूरसिंघ पट्टे श्री महाराज श्री गजसिंहजी ।

(२) विजयिराज्ये मुहणोत्र गोत्रे वृद्ध उसवाल ज्ञातीय सा० जेसा भार्या जयवंतदे पुत्र सा० जयराज भार्या मनोरथ दे पुत्र सा० सादा सुभा सामल सुरताण प्रमुख परिवार पुण्यार्थं श्री स्वर्ण्णगिरि गह (ढ) दु—

(३) गोंपरिस्थित श्रीमत् कुमर विहारे श्रीमति महावीर चैत्ये सा० जेसा भार्या जयवंतदे पुत्र सा० जयमलजी वृद्ध भार्या सरूपदे पुत्र सा० नहणसी सुन्दरदास आसकरण लघुभार्या सोहागदे पुत्र सा० जगमालादि पुत्र पौत्रादि श्रेयसे—

(४) सा० जयमलजी नाम्ना श्री महावीर बिंबं प्रतिष्ठा महोत्सव पूर्वकं कारितं प्रतिष्ठितं च श्री तपागच्छ पक्षे सुविहिताचार कारक शिथिलाचारण [निवा]रक साधु क्रियोद्धार कारक श्री आणंदविमलसूरि पट्ट प्रभाकर श्री विजयदानसूरि —

(५) पट्ट शृंगार हार महाम्लेच्छाधिपति पातशाहि श्री अकबर प्रतिबोधक तद्दत्त जगद्गुरु विरुदधारक श्री शत्रुंजयादितीर्थ जीजीयादि करमोचक तद्दत्त षण्मास अमारि प्रवर्त्तक भट्टारक श्री ६ हीरविजयसूरि पट्ट मुकुटायमान भ०—

(६) श्री ६ विजयसेनसूरि पट्टे संप्रति विजयमान राज्य सुविहित शिरः शेखरायमाण भट्टारक श्री ६ विजयदेवसूरीश्वराणामादेशेन महोपाध्याय श्री विद्यासागर गणि शिष्य पंडित श्री सहजसागरगणि शिष्य पं० जयसागर गणिना श्रेयसे कारकस्य ।।

(५)

(१) ।। संवत् १६८३ वर्षे आषाढ बदि ४ गुरौ श्रवण नक्षत्रे ।

(२) श्री जालोर नगरे स्वर्णगिरि दुर्गे महाराजाधिराज महाराजा श्री गज सिंहजी विजय राज्ये ।

(३) महुणोत्र गोत्र दीपक मं० अचला पुत्र मं० जेसा भार्य्या जैवंतदे पु० मं० श्री जयमल्ल नाम्ना भा० सरुपदेद्वितीं—

(४) या सुहागदे पुत्र नयणसी सुंदरदास आसकरण नरसिंहदास प्रमुख कुटुंब युतेन स्व श्रेयसे ।। श्री धर्म्म —

(५) नाथबिंबं कारितं प्रतिष्ठितं श्री तपागच्छ नायक भट्टारक श्री हीर विजयसूरि पट्टालंकार भट्टारक श्री विजयसेन··· [सूरिभिः ?] ।।

(६)

(१) ।। संवत् १६८३ वर्षे । आषाढ बदि ४ गुरौ सूत्रधार उद्धरण तत्पुत्र तोडरा ईसर ।

(२) टाहा दूहा होराकेन कारापितं प्रतिष्ठितं तपागच्छे भा० श्री विजयदेव-सूरिभिः ।

(७)

श्रीमद्रैवतकाभिधे शिखरिणि श्रीसारणाद्रौ च य—
द्विख्याते भुवि नन्दिवर्द्धन गिरौ सौगंधिके भूधरे ।
रम्ये श्रीकलशाचलस्य शिखरे श्रीनाथ पादद्वयं
भूयात्प्रत्यहमेव देव ! भवतो भक्तयानतं श्रेयसे ।।

(८)

(१) ।।६०।। संवत् १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरौश्री

(२) श्रीमुहणोत्रगोत्रे सा० जेसा भार्या जसमादे पुत्र सा० जयमल भार्या सोहागदेवी श्री आदिनाथ बिबं

(३) कारितं प्रतिष्ठामहोत्सव पूर्वकं प्रतिष्ठितं च श्रीतपागच्छे श्री ६ विजयदेवसूरीणामादेशेन जयसागर गणेन (णिना) ।।

(९)

(१) संवत् १६८४ वर्षे माघ सुदि १० सोमे श्री मेडतानगर वास्तव्य ऊकेश ज्ञातीय—

(२) प्रामेचा गोत्र तिलक सं० हर्षा लघु भार्या मनरंगदे सुत संघपति सामीदासकेन श्रीकुंथुनाथ बिबं कारितं प्रतिष्ठितं श्री तपा गच्छे श्री—

(३) तपागच्छाधिराज भट्टारक श्रीविजयदेबसूरिभिः ।। आचार्य श्रीविजय सिंहसूरि प्रमुख परिवार परि करितैः । श्रीरस्तु ।।

(१०)

(१) ।। संवत् ११७५ वैशाख बदि १ शनौ श्रीजाबालिपुरीय चैत्ये षां (?) गत श्रावकेण वीरक पुत्रेण उबोचन पुत्र शुभंकर षेहडान्या (?) सहितेन—

(२) तत्पुत्र देबंग देवधरस्यां (?) पुत्रेण तथा जिनमति भार्या प्रोच्छा त्साहितेन श्रीसुविधिनाय देवस्य खतके द्वारंकारितं धर्मार्थमिति ।। मंगलं महाश्रीः ।।

(११)

९ संवत् १२९४ वर्षे (र्षे) श्रीमालीयश्रे० वीसल सुत नागदेव स्तत्पुत्रा देल्हा सलक्षण झांपाख्याः । झांपापुत्रोबीजाकस्तेन देवड़ सहितेन पितृझांपा श्रेयोर्थं श्रौजा (वा) लिपुरीय श्रीमहावीर जिन चैत्ये करोदिः कारिता ।। शुभंभवतु।।

(१२)

(१) ।। संवत् १३२० वर्षे माघ सु—
(२) दि १ सोमे श्रीनाणकीय ग—
(३) च्छ प्रतिबद्ध जिनालये सहा—
(४) राज श्रीचंदनविहारे श्री—
(५) क्षीवरायेश्वर स्थाना (न) प—
(६) तिना भट्टारक रा [व] ल ल—
(७) क्ष्मीधरेण देवश्री म [हा]—
(८) वीरस्य आसौज मासे ।।
(९) अष्टाह्निका पदे द्रमाणां
(१०) १०० शतमेकं प्रदत्तं ।। तद्व्या
(११) जमध्यात (त्) मठपतिना गोष्ठि—
(१२) कैश्च द्रम १० दशकं बेचनी
(१३) यं पूजा विधाने देव श्रीमहावीरस्य ।।

(१३)

(१) ९० ।। संवत् १३२३ वर्षे मार्ग्गसु—
(२) दि ५ बुधे महाराज श्री चा—
(३) चिगदेव कल्याण विजय—
(४) राज्ये तन्मुद्रालंकारिणि
(५) महामात्य श्री जक्षदेवे ।।
(६) श्रीनाणकीय गच्छ प्रतिबद्ध—
(७) महाराज श्री चंदनविहारे
(८) विजयिनि श्रीमद्धनेश्वर
(९) सूरौ तेलगृहगोत्रोद्भू
(१०) वेनमहं नरपतिना स्वयं
(११) कारित जिनयुगल पूजा

(१२) निमित्तं मठपति गोष्टि (ष्ठि) क—
(१३) समक्षं श्रीमहावीर देव —
(१४) भांडागारे द्रम्माणा सता—
(१५) र्द्धं प्रदत्तं ।। तद्व्याजोद्भवे—
(१६) न द्रम्मार्द्धेन नेचकंमासं
(१७) प्रति करणीयं ।। शुभंभवतु ।।

(१४)

गौडीपार्श्वनाथ चरण पट्टासन पर

श्री परमात्मने नमः । संवद्वैश्वानर कृतिका तनयानन नाग-रोहिणीरमण (१८६३) प्रमिते वसु नयनाश्ववसुंधरा (१७२८) परिमिते शके च प्रवर्त्तमाने मासोत्तम-फाल्गुन-मास वलक्षे पक्षे द्वादशी १२ तिथौ भृगुवासरे कुंदकुमुदचंच च्चारुचंन्द्रचन्द्रिकाति विशद विलसद्यशोवितान धवलिताखिल जगन्मंडलेषु, तरुण तरणिमंडल समप्रभाऽखंडाऽस्खलित जयोत्थ तापज्वल ज्ज्वालामाला-वलीढवैरि जन काननोद्भूत प्रभूत धूमधूसरित गीर्वाणपथेषु, राजराजेश्वर महाराजाधिराज श्री १०८ श्रीमानसिंघेषु, तत्सुत श्रीमन्महाराज राजकुमार श्री छत्रसिंहजी विजय पालित श्रीजालोर दुर्गे श्रीमद्गवडी पार्श्वनाथ जिनेन्द्राणामयं प्रासादः, श्रीबृहद् खरतर भट्टारकीय गच्छाधिराज जंगमयुगप्रधान-भट्टारक क्षीजिनहर्षसूरीश्वरैः प्रतिष्ठितः । ओस वंशोद्भव-बंदाभिधान गोत्रीय मुख्यमंत्री मु० अखयचंद्रेण सुत-लक्ष्मीचंद्रयुतेनाऽयं प्रासादः कारितश्च । कारिगर सोमपुरा काशीराम-कृतः ।

चौमुख मंदिर में ऋषभदेव जी के पबासन पर*

सम्वच्छुभे त्रयस्त्रिन्नन्दैके विक्रमाद्वरे ।
माघ मासे सिते पक्षे, चन्द्रे प्रतिपदा तिथौ ॥१॥

जालन्धरे गढ़े श्रीमान्, श्रीयशस्वन्त सिंह राट् ।
तेजसा द्युमणिः साक्षात्, खण्डयामास यो रिपून् ॥२॥

विजयसिंहश्च किल्लादारधर्मी महाबली ।
तस्मिन्नवसरे संघे जीर्णोद्धारश्च कारितः ॥३॥

चैत्यं चतुर्मुखं सूरिराजेन्द्रेण प्रतिष्ठितम् ।
एवं श्री पार्श्वचैत्येऽपि प्रतिष्ठा कारिता वरा ॥४॥

ओसवंशे निहालस्य, चोधरी कानुगस्य च ।
सुत प्रतापमल्लेन, प्रतिमा स्थापिता शुभा ॥५॥

---

* न जाने कब इन मन्दिरों पर कब्जा करके राज्य-कर्मचारियों ने सरकारी युद्धसामग्री आदि भर के इनके चारों ओर कांटे लगवा दिये थे। वि० सं० १९३२ में जब श्रीमद्विजयराजेन्द्रसूरिजी महाराज जालोर पधारे तो उनसे जिनालयों की यह दशा नहीं देखी गई। आपने तत्काल राजकर्मचारियों से मन्दिरों की मांग की और उन्हें अनेक प्रकार से समझाया। परन्तु जब वे किसी प्रकार न माने तो सूरिजी ने दृढ़ता पूर्वक घोषणा की कि जब तक तीनों जिनालयों को राजकीय शासन से मुक्त नहीं करवाऊंगा, तब तक मैं नित्य एक ही बार आहार लूंगा और द्वितीया, पंचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी और अमावस्या तथा पूर्णिमा को उपवास करूंगा। आपने सं० १९३३ का चातुर्मास जालोर किया और योग्य समिति बनाकर वास्तविक न्याय प्राप्त करने के हेतु उन्हें जोधपुर नरेश यशवंतसिंहजी के पास भेजे।

कार्यवाही के पश्चात् राजा यशवंतसिंहजी ने अपना न्याय इस प्रकार घोषित किया—'जालोरगढ़ (स्वर्णगिरि) के मन्दिर जैनों के हैं, इसलिए उनका मन न दुखाते हुए शीघ्र ही मन्दिर उन्हें सौंप दिए जाएं और इस निमित्त उनके गुरु श्रीराजेन्द्रसूरिजी जो अभी तक आठ महीनों से तपस्या कर रहे हैं, उन्हें जल्दी से पारणा करवा कर दो दिन में मुझे सूचना दी जाय।'

श्रीराजेन्द्रसूरिजी के उपदेश से जीर्णोद्धार हुआ और सं० १९३३ मा० स० १ रविवार को महोत्सवपूर्वक प्रतिष्ठा करके उन्होंने नौ उपवास का पारणा किया। उपर्युक्त शिलालेख अष्टापदावतार चौमुख जी के मन्दिर में लगा हुआ है।

स्वर्णगिरि पर स्थित पुस्तकालय में रखी हुई खंडित मूर्तियों पर निम्न अभिलेख हैं

।।६०।। संवत् १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरौ ।

।। अद्येह श्री जालोर महादुर्ग वास्तव्य श्री काबेड़िया कोठारी गोत्रे पं० जसवंत भार्या जसमादे पुत्र ।। मं० रूपसी भार्या राजलदे पुत्र मं० पदमसी भार्या सोहागदे पुत्र मं० रहिया केसव द्वितीय पुत्र मं० देवसी भार्या रंगादे पुत्र समरथ द्वितीय भार्या दाडिमदे पुत्र मानसि खेतसी तृतीय पुत्र धरमसी भा० लाडिमदे । पु० पुर····। प्रमुख कुटुम्ब श्रेयसे श्रीमहावीर बिंबं कारितं प्रतिष्ठितं तपा गच्छे श्रीहीरविजयसूरि श्रीविजयसेनसूरि पट्टे श्री विजयदेवसूरिणा मादेशेन पं० सहजसागर शिष्य जयसागर गणिना ।।

६० ।। सं० १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र बदि ५ गुरौ श्री राठौड़ वंशे महाराज श्री गजसिंघजी राज्ये । श्री मुहणोत्र गोत्रे सा० ठाकुरसी भार्या जयवंतदे पुत्र सा० जयमल भार्या राजलदे पुत्र सा० श्री सुन्दरदास भार्या श्री कुंथुनाथ बिंबं कारितं प्रतिष्ठितं च श्रीतपा गच्छे श्री विजयदेवसूरिभिः ।।

६० ।। १६८१ वर्षे चैत्र बदि ५ चोरवेडया गोत्रे मं० राजसी भार्या···· नाम्न्या श्री संभवनाथ बिंबं कारितं प्रतिष्ठितं श्री तपागच्छे श्री ६ विजयदेव सूरिणामाज्ञया जयसागरेण ।

।। ६० ।। १६८१ वर्षे चैत्र बदि ५ गुरौ ।। श्रीवूढतरा ग्रामे संचिया वूहरा गोत्रे सा० वाछा भार्या लाडिमदे कारितं श्री शांतनाथ बिंबं प्रतिष्ठितं श्री तपा गच्छेश श्री ६ विजयदेव सूरीणामाज्ञया पं० जयसागर गणिना ।

।। संवत् १६८१ वर्षे सिद्ध ? कला भार्या चुगतू श्री मुनिसुव्रत स्वामी बिंबं कारितं प्रतिष्ठितं तपागक्छे श्री विजयदेवसूरिभिः ।

श्री शांतिनाथ (पीले पाषाण) ।

स० २०२९ वैशा० शु० ६ मु० केसवणा वा० घोड़ा भूरमल ओटमल हस्ती० छगन मुनिसुव्रत बि० का० श्रे० पन्नालाल पारसमल सा० वा० श्री प्रतिष्ठायां प्रति बि० का० पं० श्री कल्याण श्री सोभा मुनि मुक्ति परि श्री जाबालीपुरे ।

सा १९४८ माघ सीत ५ प्रतिष्ठा कृता भ । राजेन्द्र ।

चरण सं० १९५५ फागुन कृष्ण ५ गुरौ समस्त संघेन वर्धमान जिन पगल्या कारितं प्रतिष्ठितं भट्टारक श्री विजयराजेन्द्रसूरिभिः प्रतिष्ठाकृता जसरूपजी ताभ्यां आहो ।

संवत् १७७० वर्ष वैशाख सुदि १२ सत्रा सत्रधर टाहात सत्रा पाताकेन सत्र चतरभुजः । (चौमुख मन्दिर के बाहर दिबाल पर) ।

जालोर नगर में तोपखाना नाम से प्रसिद्ध स्थान जो डी० आर० भण्डारकर के अनुसार कम से कम चार देवालयों की सामग्री से निर्मित है जिनमें एक तो सिन्धुराजेश्वर नामक हिन्दु मन्दिर और अन्य तीन आदिनाथ, पार्श्वनाथ और महाबीर स्वामी के जिनालय थे, इनमें पार्श्वनाथ जिनालय किले पर था ।

१—यह लेख इस तोपखाना के परसाल के एक कोने के स्तंभों पर उत्कीर्णित है । पहले एक श्लोक में भ० ऋषभदेव की स्तुति है और बाद में गद्य में महाराजा कीर्त्तिपालदेव के पुत्र समरसिंह देव का उल्लेख है ये कीर्त्तिपालदेव चौहान वंश रूप आकाश में चन्द्र के समान, अणहिलान्वयोद्भव महाराजा आल्हण के पुत्र थे । फिर राजपुत्र जोजल का नाम है जो पीलवाहिका मंडल के तस्कर का दमनकारक था । बाद के श्लोक में समरसिंह का वर्णन है । ये जोजल इनके मामा थे और परबतसर प्रान्त का पालवा ही उपर्युक्त पीलवाहिका मंडल होगा । जिस मन्दिर के मंडप का यह लेख है उसका निर्माण श्रीमालवंश के सेठ यशोदेव के पुत्र परम श्रावक यशोवीर ने अपने भ्राता यशोराज, जगधर आदि के साथ कराया था । चन्द्रगच्छ के आचार्य श्रीचन्द्रसूरि के शिष्यपूर्णभद्रसूरि का यह यशोवीर भक्त था और मंडप का निर्माण काल सं० १२३९ वैशाख सूदि ५ (ई० सन् ११८३ ता० २८ अप्रेल) गुरूवार है । श्लोक ४ से ७ पर्यन्त मण्डप की प्रशंसा की हुई है ईस प्रशस्ति की रचना श्रीपूर्णभद्रसूरि ने की है ।

२—दूसरा लेख भी इसी तोपखाना की मेहराब पर लगा हुआ है । सं० १२२१ में श्री जावालिपुर के कांचन (सुवर्ण) गिरि गढ़ पर हेमचन्द्राचार्य प्रतिबोधित गूर्जरेश्वर चौलुक्य परमार्हत् महाराजा कुमारपाल द्वारा निर्मापित

पार्श्वनाथ मूलनायक युक्त 'श्री कुंवर विहार' नामक जिनालय में सद्विधि प्रवर्त्तित रहे इसलिए वृहद् गच्छीय वादीन्द्र श्री देवाचार्य के पक्ष-समुदाय को सदा के लिए सौंपा। फिर सं० १२४२ में देशाधिपति चौहान श्री समरसिंहदेव की आज्ञा से भां० (मांडागारिक-भडारी या भडशाली) पांसू के पुत्र भां० यशोवीर ने इसका समुद्धार किया। फिर सं० १२५६ ज्येष्ठ सूदि ११ के दिन राजाज्ञा से श्री देवाचार्य के शिष्य पूर्णदेवाचार्य ने पार्श्वनाथदेव के तोरणादि की प्रतिष्ठा की और मूल शिखर पर स्वर्णमय दण्ड-कलश और ध्वजारोपण की प्रतिष्ठा की। फिर सं० १२६८ में दीपावली के दिन नवीन निर्मित प्रेक्षामण्डप की प्रतिष्ठा भी पूर्णदेवसूरि के शिष्य श्री रामचन्द्रसूरि ने स्वर्णमय कलशों की स्थापना-प्रतिष्ठा की।

वादि देवसूरि के प्रशिष्य और जयप्रभसूरि के शिष्य कविरामभद्र ने 'प्रबुद्ध-रौहिणेय' नामक सुन्दर नाटक की रचना इसी यशोवीर के निर्मापित आदिनाथ जिनालय में यात्रोत्सवादि में खेलने के लिए की थी। इसके प्रारम्भ में ही सूत्रधार के मुँह से यशोवीर की निम्न वाक्यों द्वारा प्रशंसा की है। सूत्रधार श्री चाह-माना समान लक्ष्मीपति पृथुल वक्षस्थल कौस्तुमायमान निरुपमान गुण गण प्रकर्षौ श्री जैन शासन समभ्युन्नति विहिता सपत्न प्रयत्नोत्कर्षौ प्रोद्दाम दान वैभवोद्भ्र विष्णु कीर्ति केतकी प्रबल परिमलोल्लास वासिता शेष दिगन्तरालौ किं वेत्सि श्री मद्यशोवीर—श्री अजयपालौ ?

यौ मालती विच किलोज्ज्वल पुष्पदन्तौ
श्री पार्श्वचन्द्र कुल पुष्कर पुष्प दन्तौ
राजप्रियौ सतत सर्वजनीन चित्तौ
कस्तौ न वेत्ति भुवनाद्भुत वृत्त चित्तौ ॥

इस अवतरण से विदित होता है कि यशोवीर के जैसा ही गुणवान उसके अजयपाल नामक लघु भ्राता था। ये दोनों समरसिंह देव के अत्यन्त प्रीतिपात्र और सर्वजन हितैषी व जैन धर्म की उन्नति के अभिलाषी व दानी थे।

उस समय जालोर में यशोवीर नाम के तीन धर्मधुरन्धर, राजनीतिज्ञ व नामांकित व्यक्ति थे उपर्युक्त प्रथम लेख के यशोवीर श्रीमाल थे और यशोदेव के पुत्र थे। दूसरे ये भां० पासू (पार्श्वचंद्र) के पुत्र थे। तीसरे यशोवीर धर्कट उदयसिंह के पुत्र थे और दुःसाध उपाधि वाले महामंत्री थे। इसी समरसिंह चौहान के उत्तराधिकारी उदयसिंह के मंत्री थे जिनके अभिलेखादिसह विशेष परिचय इसी लेख में अन्यत्र दिया गया है। ये महामात्य के परम मित्र थे।

३—यह लेख उपर्युक्त तोपखाने की पश्चिमी परसाल के स्तम्भ पर उत्कीर्णित है। यह २७ पंक्ति का लेख सं० १३५३ बैशाख बदि ५ (ई० १२९६ ता० २३ अप्रैल) सोमवार का है। सुवर्णगिरि के नरेश्वर महाराउल सामंतसिंह और उनके पादपद्मोपजीवी श्री कान्हड़देव के राजज्यकाल में नरपति नामक श्रावक ने अपनी धर्मपत्नी नायकदेवी के पुण्यार्थ अपने उस मकान को जो बाहर के लिए चालान होने वाले माल को रखने में काम आता था, धर्मदाय रूप में भेंट किया। उसके भाड़े की आमदनी से प्रतिवर्ष श्री पार्श्वनाथ देवालय में पंचमी के दिन विशेष पूजादि कार्य कराये जाएं, यह उद्देश्य था। इस लेख में यहीं के अधिवासी संघपति गुणधर का नाम और ठकुर आंबड़ की वंशावली दी है। उसके पुत्र ठकुरजस के पुत्र सोनी महणसिंह का पुत्र ही दानपति-नरपति था। महणसिंह के दो पत्नियां थी। माल्हणि और तिहुणा। माल्हणि के रत्नसिंह, णाखो, माल्हण और गजसिंह नामक पुत्र थे। दूसरी पत्नी तिहुणा के नरपति, जयता और विजयपाल तीन पुत्र थे। इन सबकी 'सोनी' उपाधि थी। नरपति के दो स्त्रियाँ थी। १ नायक देवी और २ जाल्हण देवी। नायक देवी के पुत्र लखमीधर, भुवणपाल और सुहड़पाल थे। नरपति की प्रथम स्त्री नायक देवी के पुण्यार्थ उसके परिवार द्वारा यह धर्मदाय भेंट की गई थी।

४—सं० १६८१ चैत्र बदि ५ गुरूवार को राठौड़ सूरसिंह के उत्तराधिकारी गजसिंह के राज्य में मुहणोत ओसवाल सा० जेसा की भार्या जयवंतदे के पुत्र जयराज भार्या मनोरथदे के पुत्र सा० सादा, सुभा, सामल, सुरतान आदि सपरिवार ने सुवर्णगिरि दुर्ग स्थित कुमरविहार के श्रीमहावीर चैत्य में जेसा-जसवंतदे के पुत्र सा० जयमलजी जिनकी बड़ी भार्या सरुपदे के पुत्र सा० नयणसी, सुन्दरदास, आसकरण थे और लघु भार्या सोहागदे के पुत्र सा० जगमालादि पुत्र पौत्रों के श्रेयार्थ सा० जयमलजी ने श्रीमहावीर बिम्ब की प्रतिष्ठा महोत्सव पूर्वक सुविहित क्रियोद्धारक तपागच्छीय श्री आणंदविमलसूरि के षट्प्रभाकर श्रीविजयदानसूरि-हीरविजयसूरि-विजयसेनसूरि के पट्ट स्थित श्रीविजयदेवसूरि के आदेश से महोपाध्याय विद्यासागर शि० सहजसागर के शि० पं० जयसागर गणि ने की।

५—सं० १६८३ आषाढ़ बदि ४ गुरूवार को जालोर-स्वर्णगिरि दुर्ग पर महाराज गजसिंह के राज्यकाल में मुहणोत मं० अचला के पुत्र मं० जेसाभार्या जैवंतदे पुत्र मं० जयमल भार्या १ सरूपदे २ सुहागदे पुत्र नयणसी, सुन्दरदास, आसकरण, नरसिंहदास आदि कुटुम्ब सहित अपने श्रेयार्थ श्रीधर्मनाथ प्रतिमा कराके उपर्युक्त तपा गच्छीय श्रीहीरविजयसूरिजी के पट्टालंकार श्रीविजयसेन सूरि.....ने प्रतिष्ठा की।

६—सं० १६८३ आषाढ़ बदि ४ गुरूवार को सूत्रधार उद्धरण के पुत्र तोडरा, ईसर टाहा, दूरा, होराने बनवाई और आ० विजयदेवसूरि ने प्रतिष्ठा की।

७—यह लेख किस स्थान में खुदा है पता नही, केवल १ श्लोक है जिसमें रैवतगिरि, शिखर, सारणाद्रि, नन्दिवर्द्धनगिरि, सौगन्धिक पर्वत, श्रीकलशपर्वत पर श्रीनाथजी के चरश वन्दना का उल्लेख हैं।

८—सं० १६८१ मिती चैत वदि ५ गुरूवार को मुहणोत सा० जेसा-जसमादे के पुत्र सा० जयमल भार्या सोहागदेवी ने श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा बनवाकर श्री महोत्सवपूर्वक तपा गच्छाचार्य श्रीविजयदेवसूरि के आदेश से जयसागर गणि से प्रतिष्ठित करवाई।

९—सं० १६८४ माघ सूदि १० सोमवार को मेडता निवासी ओसवाल प्रामेचा गोत्री सं० हर्षा की लघुभार्या मनरंगदे पुत्र संघपतिसामोदास ने श्रीकुंथुनाथ बिंब बनवाकर तपा गच्छीय की विजयदेवसूरि आचार्य धिजयसिंहसूरि के पास सपरिवार प्रतिष्ठा कराई।

१०—जालोर के बाहर सांडेलाव नामक तालाब पर चामुंडा माता के मन्दिर के पास एक झोंपड़ी में 'चोसठ जोगणी' नाम से प्रसिद्ध जैन प्रतिमा पर यह अभिलेख खुदा है। सं० ११७५ वैशाख बदि १ (सन् १११९ ता० २९ मार्च) शनिवार को जावालिपुरीय चैत्य में वीरक के पुत्र खांगत, उबोचन के पुत्र शुभंकर खेहड़ ने स्वपुत्र देवंग—देवधर ? तथा भार्या जिनमति के प्रोत्साहन से सुविधिनाथ देव के खत्तक का द्वार धमार्थ बनाया—इस प्रकार का उल्लेख है।

११—सं० १२९४ में जावालिपुर के महावीर जिनालय में श्रीमालीय सेठ वीसल के पुत्र नागदेव के देल्हा, सलखण, झांपा नामक पुत्रों में से झांपा के पुत्र बीजा और देवा ने अपने पिता झांपा के कल्याणार्थ करोदि: (?) कराई, यह अभिलेख तोपखाने में लगा हुआ है।

१२—सं० १३२० माघ सुदि १ को नाणकीय गच्छ प्रतिबद्ध जिनालय में महाराज श्री चंदनविहार में श्री क्षीवरायेश्वर स्थानापति भट्टारक रावल लक्ष्मीधर ने प्रभु श्री महावीर स्वामी के आसोज अष्टाह्निका की पूजा के लिए १०० द्रम्म दिए जिसके व्याज में से मठपति—गोष्ठिकों को १० द्रम व्यय करना होगा। उल्लेख वाला यह लेख तोपखाने के जनाना गैलेरी में लगा है ऐसा भांडार-कर साहब लिखते हैं।

१३—सं० १३२३ मार्गशीर्ष शुक्ल ५ बुधवार को चाहमान महाराजा चाचिगदेव के राज्य काल में महामात्य यक्षदेव जो उसका मुद्राधिकारी था—के समय नाणकीय गच्छ प्रतिबद्ध महाराज श्री चंदन विहार में धनेश्वरसूरि के विजय शासन में तेलहरा गोत्रीय मंहं० नरपति ने अपने निर्माण कराये हुए जिन युगल की पूजा के निमित्त मठपति व गौष्टिक के समक्ष ५० द्रम्म महावीर स्वामी के भंडार में प्रदान किये जिसके व्याज अर्द्ध दम्म प्रतिमास की आमदनी से पूजा कराई जाय, ये उल्लेख है। यह लेख भी तोपखाना के जनाना गेलेरी में है।

१४—सं० १८६३ (शक सं० १७२८) फाल्गुन शुक्ल १२ भृगुवार के दिन महाराजाधिराज श्री मानसिंह जी और महाराज कुमार श्री छत्रसिंह जी के विजय राज्य में जालोर दुर्ग में श्री गौड़ी पार्श्वनाथ भगवान का यह प्रासाद वृहत्खरतर गच्छीय युग प्रधान भट्टारक श्री जिनहर्षसूरि जी ने प्रतिष्ठित किया ओसवाल वंश के बंदा (मेहता) गोत्रीय मुख्य मंत्री मुहता अखयचंद्र ने अपने पुत्र लक्ष्मीचंद सहित इस प्रासाद का निर्माण कराया। सोमपुरा कारीगर काशीराम ने बनाया।

यह लेख जालोर से पश्चिमोत्तर कोण में लाल दरवाजे से चारफर्लांग दूर परकोटे के बीच बने हुए गौड़ी पार्श्वनाथ जिनालय के चरणों में पर खुदा हुआ है।

प्राचीन जैन लेख संग्रह (जिनविजय) के लेखांक ६६ में लूणिवनसही शिलालेख की पंक्ति १३-१४ में ॥ "श्री जावालिपुरे श्री पार्श्वनाथ चैत्य जगत्यां श्री आदिनाथ बिंबदेव कुलिका च" फिर पंक्ति ३३ में—"श्री जाबालिपुरे श्री सौवर्णगिरौ श्री पार्श्वनाथ जगत्यां अष्टापद मध्ये खत्तकद्वयं च" ॥ ये नागपुरीय बरहुडिया परिवार द्वारा अनेक स्थानों के मंदिरादि निर्माण का उल्लेख है—राहड़ के पुत्र जिनचन्द्र भार्या चाहिणी के पुत्र देवचन्द्र ने पितामाता के श्रेयार्थ बनाया था।

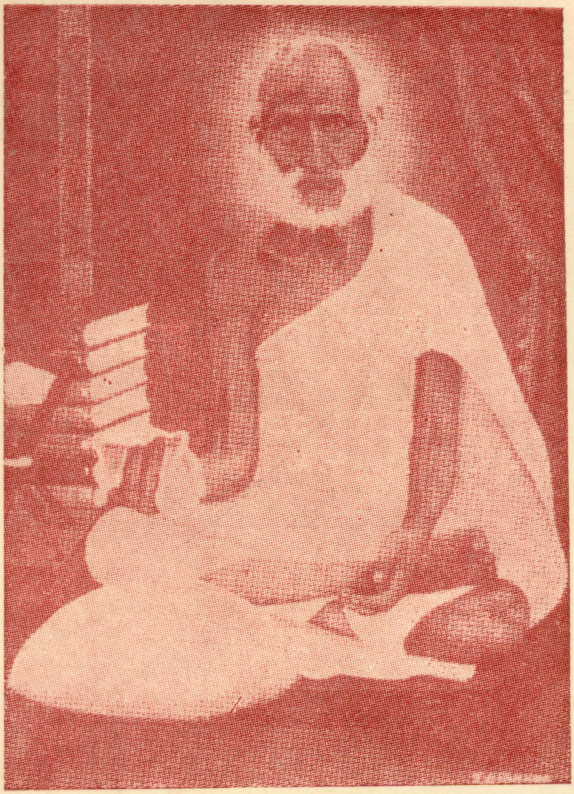

तीर्थोद्धारक श्री राजेन्द्रसूरिजी महाराज

बी[illegible]शन

कलकत्ता